आधुनिक महाराष्ट्र के शिल्पकार

यशवंतराव चव्हाण

६५

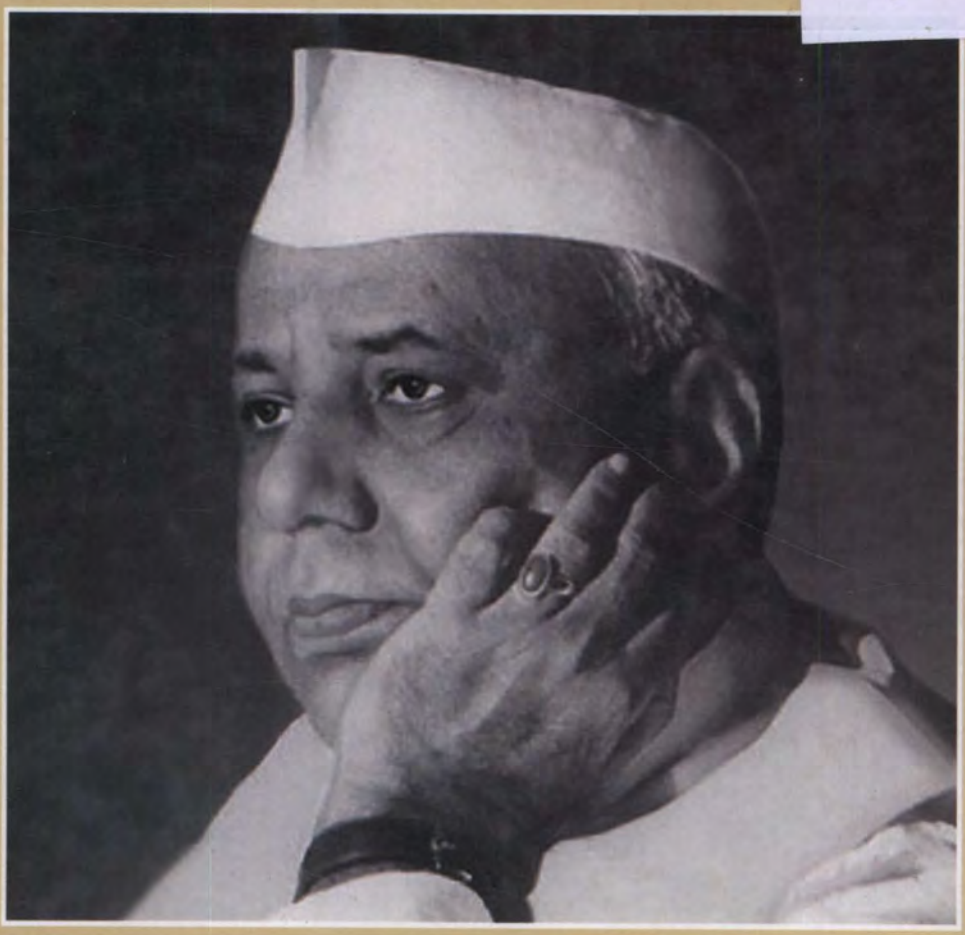

प्रा. डॉ. के. जी. कदम

आधुनिक महाराष्ट्र के शिल्पकार
यशवंतराव चव्हाण

लेखक
प्रा. डॉ. के. जी. कदम

यशवंतराव चव्हाण
प्रतिष्ठान मुंबई

यशवंतराव
चव्हाण प्रतिष्ठान
मुंबई

आधुनिक महाराष्ट्र के शिल्पकार
यशवंतराव चव्हाण

प्रथम आवृत्ती : महाराष्ट्र दिन, १ मे २०१३

© २०१३, यशवंतराव चव्हाण प्रतिष्ठान मुंबई

मुखपृष्ठ : रोहन चंपानेरकर, रेश्मा वाळुंज

प्रकाशक-मुद्रक
सरचिटणीस
यशवंतराव चव्हाण प्रतिष्ठान मुंबई
जनरल जगन्नाथ भोसले मार्ग
मुंबई ४०००२१

मुद्रणस्थळ
रोहन प्रकाशन
४३० शनिवार पेठ
पुणे ४११ ०३०

मूल्य : दो सौ पचास रुपये (Rs.250)

लेखक परिचय

नाम : प्रा. डॉ. के. जी. कदम **जन्म :** २४ एप्रिल १९३८

निवास : प्लॉट नं. ११७/५९, उमा नगरी, मुरारजी पेठ, सोलापूर-४१३००१, मोबाईल - ९४२०६५९६५८

शिक्षा : एम. ए. (हिन्दी), एम. ए. (मराठी), पीएच. डी. (हिन्दी), साहित्य मार्तंड

कार्य : अध्ययन, अध्यापन, संशोधन, शैक्षणिक सत्र, आरोग्य संवर्धन, प्रौढ शिक्षा, ग्राम स्वच्छता अभियान, वादविवाद स्पर्धा, लोक शिक्षा और जागृती, दारूबंदी प्रचार व प्रसार आदि ।

प्रकाशित हिन्दी पुस्तके : (१) श्यामनारायण पाण्डेय : व्यक्तित्व और काव्य (शोधप्रबंध), (२) कविश्री बच्चन : व्यक्ति और दर्शन (शोधप्रबंध), (३) कविश्री शिवमंगलसिंह सुमन और उनका काव्य (शोधप्रबंध), (४) शराब से मुक्ति, (५) समीक्षा का स्वरूप, (६) मराठी की श्रेष्ठ कहानियाँ, (७) तूफान के सिर पर, (८) उष:काल, (९) गुलाब के फूल, (१०) हिन्दी अखबार और मासिकों में १२५ लेख प्रकाशित

प्रकाशित मराठी पुस्तके : (१) निवडुंग (आत्मकथा), (२) कथा : सुख-दु:खाच्या (कथा संग्रह), (३) चिंतनिका (विचारसंग्रह), (४) पोटासाठी (व्यक्तिचित्रे), (५) जीवनाच्या वाटेवरून (कादंबरी), (६) असा समाज अशी माणसे (ललित लेखसंग्रह), (७) ऊन आणि सावली (ललित लेखसंग्रह), (८) यशवंतराव चव्हाण : झुंजार नेतृत्वाची एक झेप, (९) यशवंतराव चव्हाण आणि त्यांची सहकारी चळवळ, (१०) अग्निशिखा (चरित्रात्मक कादंबरी), (११) कर्मयोगी (चरित्रात्मक कादंबरी)

सम्मान एवम् पुरस्कार : (१) साहित्य मार्तंड (मथुरा), (२) गुणवंत शिक्षक पुरस्कार - सोलापूर, (३) आदर्श शिक्षक - राज्य पुरस्कार (महाराष्ट्र शासन), (४) कदम वाङ्मयीन पुरस्कार (५) म. गांधी पुरस्कार, पुणे (६) यशवंतराव चव्हाण वाङ्मयीन पुरस्कार (महाराष्ट्र साहित्य आणि संस्कृती मंडळ, मुंबई), (७) कर्मवीर भाऊराव पाटील शैक्षणिक पुरस्कार, सोलापूर, (८) साहित्य सागर पुरस्कार, मेहकर, बुलढाणा, (९) आमदार श्री. बबनराव शिंदे, साहित्य पुरस्कार, माढा, जि. सोलापूर

प्राक्कथन

यशवंतरावजी पं. नेहरूजी को राजी करके बम्बईसह संयुक्त महाराष्ट्र का मंगल कलश ले आये। १ मई १९६० को महाराष्ट्र स्वतंत्र हुआ। यशवंतरावजी महाराष्ट्र के नये मुख्यमंत्री बने। उन्होंने नये महाराष्ट्र के विकास की नीव डाली। उनके कार्यकाल में अनेक उद्योग स्थापित हुए। उनके कार्यकाल में सभी क्षेत्रों में विकास हुआ। उनके कार्य काल में शिक्षा, स्वास्थ्य, भूमिहीनों को जमीन का बँटवारा, सिलींग ॲक्ट, बैंकों का राष्ट्रीयीकरण, सहकार योजना की स्थापना, पंचायत राज्य व्यवस्था, किसानों को पानी, बिजली, खाद, बीज व्यवस्था, गरीब विद्यार्थियों को ई.बी.सी. की सहूलियत ऐसे अनेक कार्य किए। इसलिए तो उन्हें महाराष्ट्र का शिल्पकार कहते हैं। यशवंतरावजी राष्ट्रीय नेता थे। उनपर अबतक मराठी में १५० से १७५ तक पुस्तकें लिखी गयी हैं। उनके विषय में हिंदी में एक भी पुस्तक नहीं लिखी गयी। इसलिए यशवंतराव चव्हाण महाराष्ट्र मुक्त विद्यापीठ के. मा. कुलगुरू के आदेश के अनुसार प्रस्तुत हिंदी पुस्तक लिखी है।

१ मई २०१० को महाराष्ट्र राज्य स्थापना को ५० वर्ष पूर्ण हो रहे हैं। इसलिए सुवर्ण महोत्सव मनाया जा रहा है। लेकिन दुर्दैव की बात यह है कि महाराष्ट्र के पहले मुख्यमंत्री, महाराष्ट्र के निर्माता, तत्त्वज्ञानी और मार्गदर्शक यशवंतराव चव्हाण यह समारोह देखने के लिए नहीं है। यशवंतरावजी की स्मृती प्रित्यर्थ उनके प्रति आदरांजली प्रकट करने के लिए यह हिंदी पुस्तक प्रकाशित हो रही है।

यशवंतरावजी केवल महाराष्ट्र के शिल्पकार ही नहीं थे। उनके जनतंत्र समाजवाद ने भारत के जनतंत्र और समाजवाद का उचित मार्ग दिखाया। मानवेंद्रनाथ रॉय, बारट्रॅन्ड रसेल, म. गांधीजी और पं. नेहरूजी के विचार, व्यक्तिमत्त्व और कार्य से यशवंतरावजी के विचारों को दिशा मिल गयी। परंतु

उनका समाजवाद भारत के ग्रामीण भागों में लाखों लोगों के दारिद्र्य और दु:ख में से निर्माण हुआ है । उनका जन्म सामान्य परिवार में हुआ था ।

यशवंतरावजी ने भारत देश का सुंदर और संपन्न ऐसा सपना अपने हृदय में रखा था । आर्थिक और राजनैतिक स्थैर्य में सामाजिक विषमता को बिलकुल स्थान नहीं है । स्वराज्य और सार्वभौमत्व का रक्षण करने के लिए भारत समर्थ हुआ है । जहाँ सभी क्षेत्रों में जनता की प्रगति के विकास को अवसर मिलना चाहिए ऐसे भारत का सपना वे देख रहे थे । उनके सपने में भारत का भविष्यकाल उज्ज्वल था । उनका जनतंत्र वादी, समाजवादी, शांतिप्रिय राष्ट्र के रूप में सुलौकिक था । जागतिक शांति स्थापना का कार्य भारत कर सकेगा और उसके लिए भारत को अगुआई करनी चाहिए ऐसी उनके मन में इच्छा थी ।

ग्रामीण भाग के आधुनिकीकरण का महत्त्व उन्हें उचित लगता था । ग्रामीण भाग के विकास के लिए, कृषि-औद्योगिक समाज स्थापन करने के लिए प्रयत्न करनेवाले यशवंतरावजी शायद एक ही नेता थे । उन्होंने महाराष्ट्र में सहकारी आंदोलन का प्रारंभ किया और यही आंदोलन आज संपूर्ण देश में भूषणावह हो गया और सर्वत्र वह सहकारी आंदोलन चलाया जा रहा है । इस सहकार से समाजवाद निर्माण हो जायेगा ऐसी उनकी नीति थी । इसके सिवाय जनतंत्र का विकेंद्रीकरण, जिला परिषद, बैंकों का राष्ट्रीयीकरण, संस्थानिकों के तनखे रद्द करने के काम में उन्होंने नेतृत्व किया । इससे उनकी दूरदृष्टि की कल्पना आती है ।

यशवंतरावजी बहुत अनुभवी और कुशल प्रशासक थे । उन्होंने जिस जिस स्थान पर जिम्मेदारी के काम किये उस उस हर एक स्थान पर अपने कार्य कर्तृत्व की छाप डाली । स्वातंत्र्य सैनिक, पार्लमेंटरी सेक्रेटरी, मंत्री, मुख्यमंत्री, विविध विभाग के केंद्रीय मंत्री और उपप्रधानमंत्री ऐसे चढते क्रम से उनका

मार्गक्रमण हुआ । उन्होंने हर समय अपनी बुद्धिमत्ता का, कार्यकुशलता का और लोकप्रियता का प्रत्यय ला दिया । उनकी इच्छा थी कि गरीबों में से गरीब और निचले स्तर के लोगों को विकास का फल मिलना चाहिए । वे जहाँ जहाँ गये वहाँ वहाँ वे अपने कर्तृत्व से जनता के मन में दृढ विश्वास और श्रद्धा निर्माण करने में सफल हुए । उनका राजनैतिक, सामाजिक और सावधान का, उनके शांत, संयमी दृढ नेतृत्व का लाभ केवल महाराष्ट्र को नहीं तो संपूर्ण देश को मिला । संपूर्ण देश में जनता के मन में उनके बारे में आदर, आत्मीयता और प्रतिष्ठा थी ।

प्रा. डॉ. के. जी. कदम
एम. ए., पीएच.डी., साहित्य मार्तण्ड

प्लॉट नं. ११७/५९, उमा नगरी
मुरारजी पेठ, सोलापूर ४१३००१ (महाराष्ट्र)
मो. ९४२०६५९६५८

अनुक्रमणिका

१) युगीन परिवेश और यशवंतराव चव्हाण । / ९

२) यशवंतराव चव्हाण का जीवनवृत्त । / १५

३) भारतीय राजनीति में यशवंतरावजी का प्रवेश । / ७३

४) विशाल द्विभाषिक और संयुक्त महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री । / ८१

५) यशवंतरावजी के निर्णय और कार्यनीति । / १०३

६) शासकीय पद और कार्य । / १३०

७) विविध विषयोंपर यशवंतरावजी के विचार । / १४४

८) महाराष्ट्र और भारतीय राजनीति में
यशवंतरावजी का स्थान । / १६९

- यशवंतरावजी चव्हाण का जीवनवृत्त । / १८१
- आधार ग्रंथों की सूची । / १८७
  (यशवंतरावजी चव्हाण व्यक्तित्व और
  कर्तृत्व पर उपलब्ध साहित्य)

एक मौन क्षण अनुभूत करते हुए... यशवंतरावजी

१ युगीन परिवेश और यशवंतराव चव्हाण

युगीन परिवेश से हमारा तात्पर्य तत्कालीन वातावरण अर्थात उन राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक परिस्थितियों से है, जो नेता के जन्म के समय, शैशवकाल, किशोरावस्था, यौवनावस्था और यौवनोत्तर काल में विद्यमान थी। कोई भी नेता अपने परिवेश से नितांत कटकर, अस्पृश्य रहकर, अप्रभावित रहकर अपने नेतृत्व के उत्तरदायित्व का निर्वाह करने में समर्थ नहीं हो सकता। नेता शून्य में कार्य नहीं कर सकता, क्योंकि किसी भी नेता का नेतृत्व और कार्य अपने काल का दर्पण होता है। अत: युगीन परिवेश को अलग अलग रखकर किसी भी नेता के कार्य का मूल्यांकन संभव नहीं होता।

□ राजनैतिक परिस्थिति

इ. स. १८८५ में राष्ट्रीय महासभा की स्थापना के बाद राष्ट्रीय एकता तथा बौद्धिक, नैतिक, आर्थिक, व्यावसायिक संगठन एवं विकास का सुयोग देश को प्राप्त हुआ। अब 'विविधता में एकता' राष्ट्रवादियों का मूलमंत्र हो गया था। राष्ट्रीय नेता गण नवीन करों, सैनिक व्यय वृद्धी, शासन की अनुदार और स्वार्थपूर्ण नीति से असंतुष्ट थे, किन्तु उन्होंने किसी प्रकार का प्रत्यक्ष विरोध प्रकट नहीं किया था। निश्चय ही कतिपय प्रस्ताव कृषकों की दयनीय अवस्था के सुधार के लिए प्रस्तुत किए गए। फिर भी प्रमुख माँगों का स्वरूप शिक्षित उच्च मध्यमवर्गीय स्वार्थों के अनुकूल था। डॉ. गुरुमुख निहाल सिंह के मत से इ. स. १८८५-१९०७ के युग में इंडियन नेशनल काँग्रेस ने भारतवासियों में राष्ट्रीय चेतना उत्पन्न करने, उन्हें एक सूत्र में बाँधने और राष्ट्रीय एवं राजनैतिक जागृति फैलाने के लिए महत्त्वपूर्ण मौलिक कार्य किया था। डॉ. सीतारामैय्या का भी यही विचार है।

इ. स. १८९७ में सुरेन्द्रनाथजी बैनर्जीने 'स्वराज्य' अथवा 'स्वशासन' का अस्पष्ट चित्र हमारे सम्मुख प्रस्तुत किया। साथ ही लोकमान्य तिलकजी के रूप में राष्ट्रीयता मूर्तिमान हो उठी। लोकमान्य तिलक भारतीय जीवनदर्शन, आध्यात्मिकता और राजनीति की ठोस आधार भूमि पर राष्ट्र का निर्माण करना चाहते थे। इ.स. १९०३ में एडवर्ड सप्तम के राज्याभिषेक के समय जनता का असंतोष फूट पडा। इ. स. १९०५ में बंग-भंग हुआ। इस बंग-भंग के विरुद्ध व्यापक आंदोलन हुए। पं. जवाहरलाल नेहरूजी के मत से १८५७ के विद्रोह के बाद पहली बार भारत लडने की क्षमता दिखा रहा था। विदेशी राज्य के सम्मुख पालतु पशु की तरह पराजित होकर दब नहीं रहा था। लॉर्ड मॅकडोनिल के मत से बंग-भंग अंग्रेजों की बडी भूल थी। इ.स. १९०५ में पहली बार रूस पर जापान को सामरिक विजय के फलस्वरूप भारत में चेतना, इ.स. १९०६ में मुस्लिम लीग का जन्म, इ. स. १९०७ में हरिवंशराय बच्चन का जन्म तथा इ.स. १९०८ में क्रांतिकारी पत्रों पर प्रतिबंध आदि घटनाएँ प्रमुख हैं। बारह वर्षीय बच्चन ने जालियाँवाला कांड की घटना देखी थी, जो उसे अभी तक याद है।

इ. स. १९२० में गांधीजी असहयोग के दृढ समर्थक हो गये। उनके असहयोग का तात्पर्य था – आत्मबल द्वारा विदेशी सत्ता से असहयोग, सरकारी उपाधियों और सम्मानों का त्याग। डॉ. बक के मत से – स्वातंत्र्य आंदोलन के इतिहास में प्रथम बार किसी राष्ट्रीय नेता के लिए सदस्यों की संख्या में सांप्रदायिक भेद-भाव भुलाकर जनता एकत्रित हुई। इ. स. १९२८-२९ में पुनः देश में छात्र वर्ग एवं युवक समूह में राष्ट्रीय भावना प्रमुख हुई। 'देश में युवक आंदोलन का प्रादुर्भाव होना इस वर्ष (१९२८) की विशेषता थी। इ. स. १९२८ में साइमन कमिशन भारत आया। साइमन का विरोध करने के लिए लाहोर में लाला लजपत के नेतृत्व में एक विशाल जुलूस निकाला गया। आतंकवादी सरकार ने इस जुलूस को कुचलने के लिए लाठी चार्ज कराया। फलतः घटना स्थल पर लाला लजपतराय की मृत्यु हो गयी।

२६ जनवरी १९३० को पूर्ण स्वराज्य दिवस मनाया गया। इसी वर्ष १२ मार्च, १९३० को गांधीजी ने दण्डीग्राम की ओर प्रस्थान किया। ६ अप्रैल, १९३० को गांधीजी ने नमक कानून तोडा। ५ मई को गांधीजी को बंदी बना लिया गया, फलतः देश में हडतालें हुई। यशवंतरावजी इन

घटनाओं से अछूते न रहे । इसके बाद गांधी-इर्विन समझौता और गोलमेज सम्मेलन की ब्रिटिश कूटनीतिक चालों ने न केवल इस प्रवाह को रोक दिया, लेकिन बाद में विलिंग्डन के शासन काल के प्रारंभ (१९३१) में तीव्र दमन चक्र शुरू हो गया । द्वितीय गोलमेज सम्मेलन से गांधीजी को निराश लौटना पडा, उनके सहित सारे नेताओं की गिरफ्तारियाँ, फिर सांप्रदायिक निर्णय, और तीव्र से तीव्रतर होता ब्रिटिश सत्ता का दमन चक्र । फलत: आंदोलन में कुछ ठंडापन आ गया । समाजवादी विचारधारा के स्वरूप इ. स. १९३४ में काँग्रेस में समाजवादी दल की स्थापना हुई ।

इ. स. १९३५ के बाद भारतीय राष्ट्रवाद समाजवाद के प्रगतिशील तत्त्वों से अनुप्रेरित हुआ । काँग्रेसने इ. स. १९३७ के चुनावों में भाग लिया और ग्यारह में से छ: राज्यों में उसकी विजय हुई । अब कोई हलचल न थी ।

१ सितंबर १९३९ को द्वितीय विश्वयुद्ध छिड गया और ३ सितम्बर को भारत को भी उस में सम्मिलित कर लिया गया । मार्च १९४० में मुस्लिम लीग ने पाकिस्तान की माँग प्रस्तुत की । जुलाई १९४० में सुभाष बोस को बन्दी बना लिया गया । इ. स. १९४२ तक भारत में रक्त-रंजित क्रांति हुई, जो कि असफल रही । १९४२ के अन्त तक लगभग ५३८ बार देश में गोली चली । ३ जून १९४७ को गांधीजी ने विभाजन स्वीकार कर लिया । हाँ, स्वयं गांधीजी इससे संतुष्ट नहीं थे ।

विभाजन के बाद गांधीजी की मृत्यु, गणराज्य की स्थापना, इ. स. १९६२ का चिनी आक्रमण, इ. स. १९६५ का पाकिस्तानी आक्रमण, नेहरू-शास्त्री की मृत्यु आदि प्रमुख घटनाओं के साथ दिसंबर १९७१ में भारत-पाकिस्तान युद्ध और 'बांगला देश' का उदय हुआ । इन सब घटनाओं से यशवंतरावजी अछूते न रहे । इन सब राजनैतिक घटनाओं का यशवंतरावजी पर परिणाम हुआ । इसलिए उन्होंने स्वातंत्र्य आंदोलन में हिस्सा लिया । इसके लिए उन्हें जेल में जाना पडा । देश स्वतंत्र होने के बाद वे राजनीति में ही रहे और विविध शासकीय पदोंपर आसनस्थ होकर देश की प्रगति करने के काम में जुट गये ।

□ सामाजिक और धार्मिक परिस्थिति

सामाजिक एवं धार्मिक परिस्थितियाँ भी विषम एवं जटिल थीं । भारतीय समाज तो सदैव से ही रूढिवादी और परंपरानुगामी रहा है । धर्म तो भारतीय

समाज की रीढ़ की हड्डी है । अत: किसी भी क्रान्तिकारी परिवर्तन और सुधार के लिये वहाँ आकस्मिक अवकाश न था । स्त्रियों और शूद्रों का स्थान दासी और गुलामों के समान था । मनुद्वारा निर्धारित वर्णाश्रम धर्म, संयुक्त कुटुंब प्रथा, बालविवाह, बहुविवाह, सतीप्रथा, बालहत्या, पर्दा, श्राद्ध, स्त्रियों की अशिक्षा आदि का प्रचार था ।

इ. स. १९३७ तक भी इस स्थिति में कोई सुधार नहीं हुआ था । पूंजीवादी अर्थव्यवस्था पनपती चली गयी । भूमि कर की समाप्ती से कृषि योग्य भूमि जमीनदारों की निजी संपत्ति बन गई थी । न्याय का शासनसूत्र जो अब तक पंचायतों के हाथों में था, निकल कर जमीनदारों और न्यायालयों के हाथों में चला गया था । भूमि-स्वामित्व को लेकर पारस्परिक स्नेहसूत्र टूटने लगे । जनसंख्या वृद्धि किसानों के खेतों को विभाजित और विखंडित करने लगी थी । अर्थाभाव, अशिक्षा, अज्ञान और नवीन साधनों की अनुपलब्धि में किसान समय से लडता रहा । परिणामत: भारतीय समाज की अवस्था दयनीय हो गयी ।

ग्रामीण की भाँति नागरी जीवन भी अस्त-व्यस्त था । नगरों की हस्तकला और उद्योगों को विदेशी पूंजी चाट गयी । जमीनदार-कृषक, उद्योगपती-श्रमिक आदि वर्ग स्पष्ट देखे जा सकते थे । संपूर्ण भारत का ढाँचा चरमरा कर टूट रहा था । पश्चिमी शिक्षा के आगमन ने भारत में पश्चिमी शिक्षा का आरोपण किया । अंग्रेजी भाषा तथा रहन-सहन पर अधिक बल दिये जाने के कारण शिक्षित और सामान्य जनता के बीच खाई बढ़ती चली गयी और 'सामाजिक संतुलन' विनष्ट हो गया । १९३१ तक भारत की ९२ प्रतिशत जनता अशिक्षित बनी रही ।

औद्योगिक विकास के कारण भी सामाजिक संबंध बडी तीव्रता से बदल रहे थे । संयुक्त परिवार टूटने लगे थे और विभक्त परिवारों का शिक्षित समुदाय सहज ही 'स्व' की ओर चेतन होने लगा था । गांधीजी के प्रभाव से छुआछूत और वर्णभेद दूर करने के काफी प्रयास हुए । नारी चेतना पर्याप्त प्रगतिशील थी । इ. स. १९२९ में प्रसिद्ध 'शारदा ॲक्ट' द्वारा शादी के लिए न्यूनतम आयु सीमा बढ़ा दी गई । राष्ट्रीय आंदोलन और देश की गतिविधियों में नारियाँ खुल कर भाग लेने लगी, अत: इ. स. १९३०-३१ के अवज्ञा आंदोलन में नारियों ने प्रमुख भाग अदा किया था ।

□ आर्थिक परिस्थिति

राजनैतिक, सामाजिक-धार्मिक परिस्थितियों के साथ ही आर्थिक परिस्थिति भी चिंतनीय थी । 'मानसून की दया पर जीवित रहनेवाला भारत अकालों में जीवित रहने का जैसे अभ्यस्त हो चुका था । यशवंतरावजी के जन्म से पूर्व १८५० और १९०० के मध्य २४ अकाल पडे थे, जिन में से १८ तो १८७५ और १९०० के बीच के ही थे । अवश्य ही १९०० से १९५० के मध्य अनेक उद्योगों की नींव भारत में डाली गयी । लोहा, कपडा, चीनी आदि सभी उद्योग प्रगति करने लगे, परंतु साथही उनकी शोषण-विधियों ने भी कम प्रगति नहीं की । भारतीय जनता ने १९०५ में सर्व प्रथम स्वदेशी आंदोलन के माध्यम से साम्राज्यवादी सरकार की आर्थिक नीति के विरुद्ध क्रांति की भावना व्यक्त की । संपूर्ण देश में विदेशी वस्त्रों की होली जलाई । बंग-भंग के बाद आंदोलन की गति और भी तीव्र हो गई । कर्जन के शासन का राजनीतिक और आर्थिक फल बहिष्कार है । ऐसा निष्कर्ष सहजही निकाल लिया गया । बडे उद्योगों के समूह लघु उद्योग कुचल कर रह गये । बकनन के मत से 'थोडे से औद्योगिक केंद्र जरूर है, लेकिन दस्तकारी से जितने लोगों की रोटी चलती है, कारखानों से उससे अधिक लोगों को रोजी नहीं चलती । देश के प्रति वर्ष के आयात से निर्यात कम है । शोषण के विरुद्ध बार-बार प्रदर्शन होते रहे, पर उसे किसी भी मूल्य पर रोका नहीं जा सका ।

इ. स. १९४७ में भारत विभाजन के फलस्वरूप, देश में आर्थिक अव्यवस्था बढ गई । विभाजन ने गेहूँ, कपास, चावल, जूट आदि के उपभोक्ता क्षेत्र भारत को दिये और उत्पादन क्षेत्र पाकिस्तान को । फलत: जनताने आर्थिक दशा सुधारने के लिए नई सरकार के आगे जोरदार माँगे प्रस्तुत की । डॉ. व्ही. के. आर. वी. राव के मत से 'भारत की नई सरकारने अगम अपार कठिनाइयों के बीच जीवन की राह पर कदम उठाया था । और जो आस्थावान थे, उनके अतिरिक्त किसी को भी यह स्पष्ट न था कि परिणाम क्या होगा ।'

इ. स. १९६५ से पूर्व तक योजनाओं पर जिस प्रकार हाथ खोलकर व्यय किया, उससे लाभ एक विशेष वर्ग को ही हुआ । इससे आर्थिक विषमता बढ रही है । खाद्य की कमी के कारण हमने केवल खाद्य पदार्थों का ही आयात नहीं किया; हमारे देश ने विदेशों से केवल धन ही ऋण पर नहीं लिया, बल्कि विचारों का भी खुले आम बड़ी शान से आयात किया । भारतीय मनीषा

विदेशों से विचारों का बड़ी मात्रा में ऋण ले रही थी । फ्रायड, मार्क्स, इलियट, ईट्स आदि इस क्षेत्र में भारतीय मनीषा को ऋण देनेवाले रहे ।

यशवंतरावजी के मन पर इन सब राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक परिस्थितियों का गहरा प्रभाव पड़ा । परिणाम यह हुआ कि देश स्वतंत्र होनेपर उन्होंने ये सब बातें ध्यान में रखी और जब शासक बने तब ये बात ध्यान में रखकर अपना राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक कार्य शुरू किया । यह कार्य शुरू करते समय उन्होंने हमेशा अपने सामने म. जोतीराव फुले, राजर्षि छत्रपती शाहू महाराज और डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर के विचारों को सामने रखा ।

निष्कर्षत: युगीन परिस्थितियों के संदर्भ में राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, आदि की दृष्टि से इनका नेतृत्व भारतीय राजनीति में अपना पृथक महत्त्व रखता है ।

इस प्रकार के राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक परिवेश में स्व. यशवंतरावजी चव्हाण का आविर्भाव और उनके नेतृत्व का विकास भारत के राजनैतिक इतिहास की एक अनिवार्य और महत्त्वपूर्ण घटना है ।

२ यशवंतराव चव्हाण का जीवनवृत्त

जनीति में राजनैतिक नेता का संपूर्ण व्यक्तित्व अभिव्यक्त होता है । नैतिक नेता की जीवनी और उनके जीवन दर्शन का नेता के राजनैतिक कार्य में विशिष्ट महत्त्व है । अत: जीवनी, व्यक्तित्व और जीवन दर्शन का एक दूसरे से संबंध है और इन तीनों का राजनैतिक साधना में महत्त्वपूर्ण योग है । इसलिए नेता के व्यक्तित्व और कार्य को समझने के लिए उसके क्रियात्मक जीवन, सुख, दु:ख, संकल्प, विकल्प तथा स्वभाव आदि का अध्ययन आवश्यक है ।

राजनैतिक नेता भी सामाजिक जीव है, अत: बहिर्जगत की घटनाएँ उसे प्रभावित करती रहती हैं । इसी तरह से नेता के जीवन के क्रमिक उतार-चढ़ाव देख विशिष्ट संबंधों और क्रिया-कलापोंद्वारा हम उसके पूर्व पीठिका तथा मनोदशा से भली भाँति परिचित हो सकते हैं । जीवनी के द्वारा हमें नेता के वय, विकास तथा कार्य निर्माण की सम्यक् रूप रेखा और आधार भूमि का ज्ञान होता है ।

□ वंश वृक्ष

यशवंतरावजी के दादा का नाम वाघोजी चव्हाण और उनके पिता का अर्थात उनके परदादा का नाम गणोजी चव्हाण । परदादा के पिता का नाम बालोजी चव्हाण था ।

वाघोजी चव्हाण के दो पुत्र हुए । (१) रामचंद्र (२) बलवंतराव । रामचंद्र यशवंतरावजी के चाचा थे । बलवंतराव की चार संताने हुई – (१) ज्ञानोबा (२) राधाबाई (३) गणपतराव (४) यशवंतराव

ज्ञानोबा की पत्नी का नाम था सोनाबाई । राधाबाई (यशवंतरावजी की

बहन) रामचंद्र कोतवाल के साथ ब्याही गई थी । गणपतराव चव्हाण की पत्नी का नाम था भागीरथीबाई । यशवंतरावजी का वेणूताई के साथ विवाह हुआ था ।

ज्ञानोबा की तीन संताने हुई – (१) प्रताप (२) सुधीजाई (३) शिवाजी । प्रताप और शिवाजी ये दोनों यशवंतरावजी के भतीजे थे । सुधीजाई यशवंतरावजी की भतीजी थी । सुधीजाई का फलटण के दत्ताजीराव बेडके के साथ विवाह हुआ था ।

प्रताप की पत्नी का नाम मथुराबाई था और शिवाजी की पत्नी का नाम विमल था ।

राधाबाई रामचंद्र कोतवाल की तीन संतानें हुई – (१) बाबूराव (२) दिनकर (३) हौसाबाई ।

बाबूराव और दिनकर ये दोनों यशवंतरावजी के भांजे थे । हौसाबाई उनकी भांजी थी । हौसाबाई कृष्णाजी घाडगे के साथ व्याही गई थी ।

गणपतराव चव्हाण की चार संताने हुई – (१) लीलाताई (२) दादा (३) अशोक (४) डॉ. विक्रम उर्फ राजा ।

दादा, अशोक और डॉ. विक्रम ये तीनों यशवंतरावजी के भतीजे थें और लीलाताई उनकी भतीजी थी ।

बाबूराव काले के साथ लीलाताई का विवाह हुआ था । उन्हें तीन संताने हुई । उनके पुत्र का नाम संजय काले था । शेष दोनों के नाम याद नहीं ।

चारुलता दादा की पत्नी थी । उनकी तीन संताने थीं । (१) अभिजीत चव्हाण (२) राहुल चव्हाण (३) चेतन चव्हाण । चेतन की पत्नी का नाम वैशाली था । मंदाकिनी अशोक की पत्नी थी । स्मिता दलवी, बेलगाँव, तेजस्विनी पाटील, महेश, रोहित । रोहित की पत्नी का नाम था कल्पना । शंतनु उनका पुत्र । मंगल डॉ. विक्रम ऊर्फ राजा की पत्नी । सिद्धार्थ और लिना । अनुष्क सिद्धार्थ की संतान ।

□ मूल गाँव

यशवंतराव चव्हाण का मूल गाँव ढवलेश्वर है । वह गाँव खानापूर तहसील में है । यह गाँव बहुत छोटा है । उनकी माँ ने उनसे यह वस्तुस्थिती बतायी है । ढवलेश्वर में चव्हाण परिवार कुशल था । यह चव्हाण परिवार किसी साहूकार को दूसरे एक ऋण के लिए जमानत रहा । वह साहूकार कर्जदार की ओर से ठगा गया । इसलिए जमानतवाले चव्हाण परिवार का

जमीन जुमला साहूकारने अपने कब्जे में लिया । इसलिए ढवलेश्वर में चव्हाण परिवार का कुछ नहीं रहा । ढवलेश्वर से विटा नजदीक था । इसलिए चव्हाण परिवार ने पहले वहाँ निवास किया । यह घटना शायद यशवंतरावजी के परदादा की पहले के होगी । विटा आने के बाद कम उपजाऊ थोड़ी जमीन उन्होंने खरीद ली और उस पर अपना उदर निर्वाह चलाया था और ऐसी हालत में वे विटा में रहते थें ।

रामचंद्र चव्हाण यशवंतरावजी के चाचा थे । वे चौथी कक्षा तक पढ़े थे । उन्होंने खेती करना छोड़ दिया और सरकारी नौकरी करने लगे ।

आगे कुछ दिनों के बाद खेती के उत्पादन पर परिवार का खर्च नहीं चल सकता था । इसलिए उन्होंने अपने छोटे भाई के लिए अर्थात यशवंतरावजी के पिताजी के लिए प्रयत्न किया और उन्हे नाज़िर की नौकरी मिलवा दी । उनकी नियुक्ति विटा, दहिवडी, कराड ऐसे स्थानोंपर अदल-बदलकर होती रहती थी । जब यशवंतरावजी का जन्म हुआ था, उस समय उनकी नियुक्ति कराड में हुई थी । वे कराड में बहुत वर्ष रहे । इस प्रकार दोनों भाई भी नाज़िर के रूप में काम कर रहे थे ।

परिवार की पार्श्वभूमि ध्यान में आये इसलिए यशवंतरावजी ने यह हकीकत दर्ज कर ली है । इससे कल्पना आती है कि यह साधारण छोटे किसान का घर था, चाहे वह दादा का घर हो या पिता का घर हो । साधारण किसान के जीवन के हिस्से में आनेवाली जो बातें होती हैं., वही सब बातें यशवंतरावजी के परिवार के हिस्से में आयी थी । गाँव छोडकर नौकरी के लिए भटकना, बीच-बीच में खेती की ओर ध्यान देने के लिए गाँव की ओर जाना, खेती का उत्पादन हाथ में आता कि नहीं, यह देखने के लिए जाना, यह उनके पिता का तरीका था ।

यशवंतरावजी का बचपन यह अन्य लाखों घरों में होनेवाले बच्चों की तरह बीत गया । देहात में रहनेवाले छोटे और गरीब किसानों की संख्या उस समय चारोंओर बहुत थी । इसी प्रकार के एक परिवार में यशवंतरावजी का जन्म हुआ था, पले-पोसे थे । इसलिए यशवंतरावजी के जीवन में अन्यों की अपेक्षा बहुत कुछ था, ऐसा नहीं । सर्वसाधारणत: अड़चने और गरीबी को ही जीवन ऐसा नाम था ऐसा कहा जाय तो चलेगा । ये सब कहने का हेतु इतना ही है कि वे भोगी हुई गरीबी का अतिरंजित वर्णन करना नहीं चाहते । ग्रामीण जीवन में उस समय का यह सर्वसाधारण अनुभव था ।

अच्छी खेतीवाले दस-पाँच परिवार और व्यापार, साहूकारी करनेवाले दस-पाँच परिवार छोड़ दिये तो शेष सभी लोगों के जीवन का और रहन-सहन का स्तर एक ही था। यहाँ तेली, कंबल बुननेवाले, कोई गड़रिया रहते थे। लेकिन दिनभर कष्ट करना और अपना जीवन बिताना, यही चित्र यशवंतरावजी की कल्पना के अनुसार उस समय सभी गाँवों में था, ऐसा कहा जाय तो अत्युक्ति नहीं होगी।

यशवंतरावजी के बचपन के अनुभव की यह पार्श्वभूमि है। इसलिए यशवंतरावजी को ऐसे स्तर में और अहाते में होनेवाले बाल-बच्चे-मनुष्य के बारे में एक प्रकार का कुतूहल और आत्मीयता है। फिर वे किसी भी जाति के क्यों न हो, वे और यशवंतरावजी एक दूसरे में घुलमिल जाते। यह अनुभव उन्हें अपने ननिहाल में आया। और यही अनुभव जब वे कराड में शिक्षा के लिए स्थिर हुए, वहाँ ही आया। ननिहाल के घर के पडोस में रहनेवाले छोटी-छोटी जमाति में रहनेवाले लोगों के साथ उनका सबंध था। कंबल बुननेवाले, गडरिया, मुसलमान, पिछडी जाति का पडोस यह उनके जीवन की विशेष धरोहर है, ऐसा वे हमेशा मानते आ रहे हैं। इसलिए उनके घर, उनकी रहन-सहन, उनकी चालचलन ये अपने आप उन्हें अपनी ही लगती थीं। उनकी कल्पना के अनुसार उनका उस समय का अनुभव और उस में से निर्माण हुई भावनात्मक स्थिति यह उनके अगले जीवन में उपयुक्त हुई।

□ देवराष्ट्र

सातारा जिले की सीमा पर एक पहाडी है। उस पहाडी के करवट में देवराष्ट्र नामक एक छोटासा गाँव बसा हुआ है। गाँव का आसमंत ऐतिहासिक अवशेषों से भरा हुआ है। यहाँ गुफाएँ हैं, देवालय हैं। गाँव की नैऋत्य दिशा की ओर महादेव के पुराणे मंदिर खडे है। सब में पुराना मंदिर समुद्रेश्वर का अर्थात महादेव का। गाँव उसे 'सागरोबा' कहते है। यह गाँव का दैवत। पहाडी भी सागरोबा की आसपास के टीलों में ऋषि-मुनियों की गुहाएँ हैं। ऐसे कहा जाता है कि देवराष्ट्र यहं एक राज्य का स्थान था। सातवाहन के राज्य के बाद महाराष्ट्र में जो अनेक छोटे-बडे राज्यों का उदय हुआ, उन में से एक देवराष्ट्र भी है। इस राज्य की राजधानी कौंडिण्यपूर, अर्थात आज का कुंडल गाँव है। ऐसा कहा जाता है कि देवराष्ट्र के राजा का नाम कुबेर था, ऐसी यह कथा है। कुबेरेश्वर का मंदिर भी यहाँ है।

देवराष्ट्र की नैऋत्य दिशा की ओर होनेवाले सागरेश्वर का मंदिर पार कर के डेढ़-दो मील की सागरेश्वर की घाटी लाँघकर नीचे आने पर कृष्णा की घाटी लगती है । आज के स्वातंत्र्योत्तर काल में वहाँ की समृद्धि महसूस होती है । पहले भी वहाँ समृद्धि थी । इसकी कल्पना उस प्रदेश में बसे हुए गाँवों के नाम पर से आती है । दही, दूध, घी को पूर्व काल में समृद्धि के लक्षणों की कसौटी मानी गयी है । फिर कल्पना आती है कि एक ही कतार में कृष्णा नदी के किनारे पर बसे हुए दुधारी, दह्यारी, ताकारी, तुपारी इन नामों के गाँव हैं ।

संपूर्ण कृष्णाकाठ यशवंतरावजी के प्रेम का, दिलचस्पी का और आत्मीयता का विषय है । महाबलेश्वर में उद्‌गमसे निकल पडी और कृष्णामाई किनारे किनारे सीधे राजमहेंद्री से लेकर उसके मुख तक जाऊँ ऐसा यशवंतरावजी को हमेशा लगता था । किनारे पर बसे हुए गाँवों से भेंट दे दूँ, लोगों से जान-पहचान करा लूँ, फसल से डोलनेवाले खेत देख लूँ, ऐसा उन्हें लगता था ।

यशवंतरावजी के प्रदेश में बहनेवाली प्रमुख नदी कृष्णा नदी है । इस कृष्णा नदी के किनारे पर वाई, कराड और सांगली जैसे शहर भी हैं । उत्तम खेती के कारण प्रसिद्ध हुए अनेक देहात हैं । ऐतिहासिक काल में इस प्रदेश में अनेक कर्तृत्वसंपन्न व्यक्ति निर्माण हुए हैं । कृष्णा के किनारे पर स्थित मेणवली से नाना फडणविस का संबंध है । वैसे ही उंब्रज से धनाजी जाधव का संबंध है । सहवास से, भावना से यशवंतरावजी और उनके संगी-साथी कृष्णामाई से संबंधित हैं । कृष्णा नदी की याद होने पर, अर्थात बचपन की और यौवनकालीन जीवन का निर्माण करनेवाले काल की याद आने पर उनका मन गद् गद् हो उठता है ।

देवराष्ट्र यह उनका गाँव और ननिहाल होने के कारण उनकी बचपन की यादे ये सब देवराष्ट्र की यादे हैं । उनके पहले चार-पाँच वर्षों की जो यादे हैं, ये सब देवराष्ट्र, वडगाँव, कुंडल, ताकारी इन गाँवों से संबंधित है । यह तो ग्रामीण जीवन की पार्श्वभूमि उनके जीवन का श्रीगणेशा है । आगे वे राजनीतिक काम के निमित्त और सरकारी काम के निमित्त देश में और विदेशी में बहुत घूमे-फिरे । फिर भी इस प्रदेश का आकर्षण उनके मन में हमेशा के लिए रहा है । यह ऐसा क्यों होता है । यह उन्हें मालूम नहीं है । लेकिन वस्तुस्थिति ऐसी है ।

कुतूहल और आत्मीयता लगे ऐसा यह प्रदेश है । देवत्व लेकर जन्म

लिया हुआ यह गाँव है । लेकिन इस में राष्ट्र यह कल्पना समायी है । सागरोबा के चारों तरफ आनंदबन ही आनंदबन है । धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष ये चार पुरुषार्थ यहाँ विचरते हैं । उपजाऊ जमीन में बीज बोया तो तेजी से बढता है । वैसे यहाँ के मनुष्य और मन । इस मिट्टी का गुण और मनुष्य का मूल्य घूमते-फिरते दिखाई देने लगता है ।

समुद्र में स्नान किया तो त्रिलोक में तीर्थक्षेत्र का पुण्य मिलता है, ऐसे पुराने लोग कहते हैं । उसी तरह अमृत सेवन से सभी जीवन रसों का सेवन मिलता है ऐसे ही कहा जाता है । यहाँ तो समुद्रेश्वर ही कुंड में खडा है और उसके प्रेमामृत से 'सोनहिरा' बहता है । इस छोटी-सी नदी को लोग नाला कहते हैं । वहाँ तैरने में ही उनका बचपन बीत गया । उसका अमृतमय पानी उनके पेट में है । सोनहिरा की यह अमृतभूमि अर्थात उनका यह ननिहाल । उनका अंकुर अवतरित हुआ तो यहाँ ही ।

उस समय देवराष्ट्र गाँव की आबादी डेढ-दो हजार की होगी । इस छोटी सी आबादी में सभी जाति-जमाति के लोग रहते थे । पाटील लोगों के दोन खानदान वहाँ थे, एक मोरे पाटील का और दूसरा महिंद्र पाटील का । इसके अतिरिक्त यशवंतरावजी के ननिहाल के घाडगे, म्हस्के, मुलीक, भोसले ऐसे और पाँच-पचीस मराठों के घर थे । गडरिया लोगों की बस्ती थी । उनके दस-पंद्रह परिवार थे । संख्या की दृष्टी से दो बड़े समाज थे – एक मुसलमान और दूसरा पिछड़ी जाति का । इनके अतिरिक्त व्यापार करनेवाले कुछ लिंगायत और दो-तीन गुजराती परिवार थे । ये गुजराती परिवार सधन और सुखी थे । लिंगायत लोगों की परिस्थिती भी अच्छी थी । दोनों पाटील परिवार में केवल दो-चार परिवार सुस्थिति में थे । क्योंकि उनके खेतों में कुएँ थे । कुएँ में पानी था । इसलिए उनके खेतों में अच्छी फसले आती थी । शेष सब लोग सर्वसाधारण स्थिति में थे । अपना जीवन बिताते थे । गाँव में दस-पाँच मंदिर थे और एक दो-मस्जिदें थी ।

पिछडी जाति का समाज यह संख्या की दृष्टि से बहुत था और गाँव में उनका दबदबा था । यह समाज पिछड़ा हुआ था, लेकिन उसे अस्पृश्य नहीं माना जाता था । पास-पडोस में उनका आना-जाना था । उनका कोई निश्चित ऐसा व्यवसाय नहीं था । लेकिन बीच-बीच में खेती पर काम करने के लिए जाते थे और गरीब परिस्थिति में वे अपनी गृहस्थी चलाते थे । एक-दो घरों को छोड़कर शेष लोगों को रहने के लिए बाँधे हुए घर न थे । एक दूसरे पर पत्थर

रखकर खडी की हुई दीवारे और उनकी ऊँचाई भी कम । बरसात में किसी तरह रहने के लिए की गई व्यवस्था । ऐसी हालत में ये लोग रहते थे । यह बस्ती यशवंतरावजी के ननिहाल के पास थी । इसलिए उस समाज में अनेक लोगों से यशवंतरावजी की जान पहचान हो गयी थी और वहाँ जाने पर उनके बीच में खेलने के लिए आनेवाले लड़कों में जैसे मराठा और मुसलमानों के लड़के होते थे वैसे पिछडी जाति के लडके भी आते रहते थे । कभी-कभी उनकी बस्ती में जानेका प्रसंग आता रहता था । यशवंतरावजी वहाँ उनके साथ खेले है, घूमे-फिरे है । बचपन से उनके साथ रहने से और सहवास का यह अनुभव होने के कारण यशवंतरावजी के मन में उस समाज के विषय में हमेशा के लिए अपना घर हो गया है ।

गाँव में मध्यम स्थिति से लेकर उत्तम स्थिति में रहनेवाले दस-पंद्रह ब्राह्मण परिवार थे । उनमें से कुछ लोगों की जमीनदारी थी । उनके लडके शिक्षा के लिए बाहर के गाँव जाते रहते थे । लेकिन यशवंतरावजी के बचपन में इन लोगों के बारे में गाँव में एक प्रकार का आदर था, यह उन्होंने देखा था । लेकिन इस आदर के तहत ढाँका हुआ एक अंतर था । लेकिन उस अंतर का ज्ञान उन्हें भविष्य में होने लगा ।

अनेक प्रकार से, अलग-अलग स्तर पर जीवन बितानेवाला और अलग-अलग संस्कृति में रहनेवाला छोटासा समाज उस गाँव में रहता था ।

इस गाँव का भौगोलिक प्रदेश एक अर्थ से महत्त्वपूर्ण था । इसका मुख्य कारण है कि इस प्रदेश में होनेवाले देवालय । इस गाँव की नैऋत्य दिशा की ओर सागरेश्वर का मंदिर है । यह मंदिर इस प्रदेश में रहनेवाले लोगों के मन को आकर्षित करनेवाला स्थान था । इसी तरहका लिंगोबा का दूसरा स्थान हैं । छोटी-बड़ी पहाडी के करवट में बसे हुए देवस्थान मन को प्रसन्न करनेवाले चैतन्यस्थान हैं । कराड से लेकर ताकारी तक आनेवाले जानेवाले लोग कृष्णा नदी की घाटी में से ऊपर आने पर सागरेश्वर की घाटी और सागरेश्वर के मंदिर में जाकर दर्शन किये बिना आगे नहीं जाते । इसलिए सागरोबा और देवराष्ट्र इन दोनों में एक प्रकारका अटूट नाता निर्माण हुआ हैं ।

इस गाँव की उत्तर की तरफ दो-तीन मील पर एक छोटासा नाला बहता हैं । वह नाला उस गाँव की खेती के बहुत से भाग को स्पर्श करके बहता जाता है । इसलिए उसका महत्त्व है । उसका नाम है सोनहिरा । यशवंतरावजी के मन में इस सोनहिरा का महत्त्वपूर्ण स्थान है । उन्हें उनकी माँ की याद आनेपर

देवराष्ट्र की याद आती है और फिर सागरेश्वर, सोनहिरा इन दोनों की याद आती हैं और सोनहिरा का नाम लिया तो यशवंतरावजी को माँ की याद आती है। बचपन में ऐसे जो कुछ स्थान है वे भावनाओं को स्पर्श करते रहते हैं। वे सब भी कभी अपने मन में हमेशा के लिए महत्त्वपूर्ण प्रतीक बन जाते हैं। वैसेही इन स्थानों का हुआ है।

वैसे देखा जाय तो देवराष्ट्र में उपजाऊ जमीन थोड़ी है। उस समय सिर्फ चार-पाँच स्थानों पर पानी के कुएँ और उसके आसपास होनेवाले हरे-हरे बागान। इतनेही कुछ समृद्धि के स्थान थे। शेष सभी खेती सूखी थी। और इस सूखी खेती पर बहुत कष्ट करनेवाले किसान देखे जाते थे।

यशवंतरावजी की उम्र जैसे बढ़ती गयी वैसे गाँव की इस आर्थिक और सामाजिक पार्श्वभूमि पर गाँव के प्रश्नों की ओर देखने का दृष्टिकोन बदलता गया। आगे वे अनेक वर्षोंतक इस गाँव में आते थे और उन्होंने समय समय पर जो-जो बाते देखी थी वे सब बातें गाँव की सीमातक मर्यादित थी, ऐसा नहीं था। इस गरीबों में रहनेवाले लोग मानवता से वंचित नहीं हुए थे। यह उसमें से एक अच्छी बात थी।

यशवंतरावजी ने अपने बचपन में देखे हुए मनुष्य और उनकी लोभनीय यादे याद आती है। उनके नाना के घर के पडोस में रहनेवाले मुस्लिम परिवार से उनकी मित्रता थी। उसी तरह पडोस में रहनेवाले कंबल बुननेवाले और गड़रिया लोगों से उनकी बड़ी आत्मीयता थी। उन्हें उस समय का सब याद आता है। फिर भी जाति-जाति में आपस में शत्रुता कब कैसे निर्माण हुई, यह समझ में नहीं आता। उस समय एक दूसरे के साथ मानवता के रिश्ते की प्रतिबद्धता थी।

एक बात बताना आवश्यक है कि इन सब समाज से दूर और गाँव के बाहर रहनेवाले हरिजन, मातंग और चमार इन लोगों का गाँव से कम संपर्क आता था, और जो कुछ था, वह जिस मनुष्यता का यशवंतरावजी ने ऊपर वर्णन किया था, उसका उससे उचित संबंध था, ऐसा नहीं कहा जा सकता। आज यशवंतरावजी दलितों के प्रश्नों की ओर देख रहे हैं, वह दलित समाज उस समय गाँव के बाहर अलग तरीके से अपना जीवन बिता रहा था, उसे जीवन यह नाम देना है कि नहीं, यह एक अलग प्रश्न था।

लेकिन यशवंतरावजी वहाँ जो उल्लेख कर रहे थे वह छोटी-छोटी जाति-जमातियों का। गाँव में पाटील लोगों के परिवार मान-सम्मान के थे। उन में

भी इज्जतदार बुजुर्ग लोग सबको सँभालकर लेनेका प्रयत्न करते थे । लेकिन उसके पीछे एक सूत्र था । आगे चलकर यशवंतरावजी को इसका अनुभव आया । राज्य शासन से मिलजुलकर नम्रता से रहना यह इस सूत्र का नाम था । छोटे-बड़े लोग गाँव के पाटील को मान दे, गाँव के पाटील पास-पड़ोस के पुलिसों को मान दे, ऐसी प्रथा थी । गाँव का पटवारी यह कर्ता मनुष्य माना जाता था । और इन सब में बडी आसामी अर्थात तहसील का तहसीलदार । तहसीलदार जब गाँव में आता, तब उनकी बहुत बड़ी खातिरदारी की जाती । इसलिए गाँव में बड़ी हलचल मच जाती ।

शासन से डरकर नम्र होकर बर्ताव करने की यह प्रवृत्ति उस समय के जीवन का एक गृहीत कृत्य था । उस समय उनकी जानकारी वहाँ तक पहुँचीही नहीं थी । शिक्षा कम, बाहर के संसार से संपर्क कम, जो है उस में समाधान मानने की प्रवृत्ति, किसी के बीच में न पड़ना, सीर्फ तटस्थ रहना, यही उस समय की नीति थी । यही वहाँ के जीवन की नीति थी । इसलिए उस में गति भी नहीं थी और प्रगति भी नहीं थी । इस गाँव का आया हुआ यह अनुभव आगे यशवंतरावजी कार्यकर्ता के रूप में जब जिले में अन्यत्र घूमने-फिरने लगे तब भी थोडे बहुत अंतर से उन्हें वही अनुभव फिरसे आये । कुछ स्थानों पर समृद्धि अधिक थी । वहाँ के धनिक लोगों की आक्रमता गरीब लोगों के संबंध में अधिक थी । यही फ़र्क कुछ स्थानों पर अवश्य महसूस हुआ । लेकिन शासन के विरोध में कुछ नहीं बोलना चाहिए यह उस समय के किसान समाज का और किसान समाज के ऊपर निर्भर रहनेवाले ग्रामीण समाज का स्वभाव बन गया था ।

खेती से संबंध होनेवाला मनुष्य निकट की राजनैतिक सत्ता को बहुत उच्च मानता है । यह अनुभव उन्हें आगे भी आता रहा । देवराष्ट्र का यह अनुभव उनके मन को एक प्रकार की शिक्षा दे रहा था । कार्यकर्ता के रूप में कार्य करने के लिए मन की जो तैयारी होनी चाहिए और सामाजिक जानकारी आवश्यक होनी चाहिए यह जानकारी उन्हें इसमें से मिलती गयी ।

उत्तर की तरफ से आनेवाली कृष्णा और दक्षिण की तरफ से आनेवाली कोयना इन दो नदियों का आमने-सामने आकर प्रीतिसंगम होता है । और फिर इन दो नदियों का प्रवाह पूर्व की तरफ बहता है । इन दो नदियों के संगम से होनेवाले काटकोन में कराड नामका गाँव बसा हुआ है । यह बहुत प्राचीन गाँव है, वैसे इस गाँव का इतिहास भी है । वैसे उस समय तक यह शहर बड़ा नहीं

था । पचपन से लेकर साठ हजार तक उस शहर की आबादी थी । लेकिन यशवंतरावजी उस गाँव में बढ रहे थे, तब उस गाँव की आबादी पंद्रह-सोलह हजारों की थी । इसलिए सभी लोग एक दूसरे को पहचान सकते थे । आज भी वैसी स्थिति है ।

यदि यह छोटा कसबा हो तो उसे अपना एक व्यक्तिमत्त्व था । व्यापार का महत्त्वपूर्ण केंद्र, विद्याव्यासंग की और ज्ञानोपासना की पुरानी परंपरा । कृष्णा के किनारे पर ब्राह्मण बस्ती । कोयना के किनारे पर मराठा और अन्य जमाती की बस्ती । गाँव की मध्य बस्ती में व्यापारी मुहल्ला, सब्जी-मंडी और ऊँचाई पर मुस्लिम मुहल्ला । गाँव की पूर्व तरफ हरिजनों की बस्ती । इस गाँव में एक दूसरे के साथ संबंध रखने की नीति थी । यशवंतरावजी की विद्यार्थी अवस्था में इस गाँव में एक हाइस्कूल और किसी तरह चलनेवाला एक सार्वजनिक वाचनालय था । लेकिन यह वाचनालय व्याख्यान और चर्चा का महत्त्वपूर्ण केंद्र बन गया था । इस गाँव को राजनैतिक परंपरा थी । राष्ट्रीय विचारों की अच्छी जानकारी रखनेवाले अनेक व्यक्ति यहाँ थे । आलतेकर पिता-पुत्र, श्री. पांडुअण्णा शिरालकर, बाबूराव गोखले, गणपतराव बटाणे, किसनलाल प्रेमराज ये लोग उक्त विचारों के थे । इस गाँव में प्रमुख लोगों ने यहाँ लोकमान्य तिलक के स्मारक के रूप में एक अंग्रेजी शाला शुरू की । सांस्कृतिक और शिक्षा के क्षेत्र में यह एक महत्त्वपूर्ण घटना थी । आज कराड एक महत्त्वपूर्ण शिक्षा का केंद्र बन गया है । उसका यह प्रारंभ था । इस छोटे से गाँव को राजनीति का बडा आकर्षण था । देश में सभी महत्त्वपूर्ण राजनैतिक आंदोलन के प्रतिनिधि यहाँ थे, और वे सभी क्रियाशील थे । ऐसे गाँव के संस्कार में यशवंतरावजी बढ रहे थे ।

कराड के वातावरण में यशवंतरावजी जब बढ रहे थे तब महाराष्ट्र के सामाजिक जीवन में कुछ नये प्रवाह और कुछ नयी शक्तियाँ काम कर रही थीं । संयोग से जिस भाग में और जिस जगह में यशवंतरावजी किराया देकर रहते थे वहाँ कराड में खानदानी मराठा कुटुंब की महत्त्वपूर्ण बस्ती थी । कराड में उसे डुबल गली कहते थे । वहाँ वे रहते थे । ये सब मराठा परिवार समाज में प्रतिष्ठित थे । कराड एक महत्त्वपूर्ण स्थान था । इसलिए यहाँ बहुत से बडे बडे लोग आते-जाते थे । वे लोग यहाँ आकर बातचीत करते थे, वह सब यशवंतरावजी सुनते थे । इसलिए आनेवाले लोगों के विचारों की कल्पना आने लगी । यशवंतरावजी की समझ में आया कि उस समय बहुजन समाज की

उन्नति के लिए सत्यशोधक आंदोलन चल रहा था । आगे उसे राजनीति में ब्राह्मणेतर आंदोलन का स्वरूप प्राप्त हुआ । इसलिए बहुजन समाज में लड़के-लड़कियो को शिक्षा लेनी चाहिए, पठन करना चाहिए, सार्वजनिक काम में शामिल होना चाहिए । उस समय इस प्रकार का मानसिक और वैचारिक वातावरण वहाँ था ।

□ यशवंतरावजी का जन्म, जन्मतिथि और जन्मस्थान

देवराष्ट्र के दाजीबा घाडगे की बहन विठाबाई का बलवंतराव चव्हाण के साथ विवाह हुआ । एक किसान की बेटी दूसरे किसान के घर में गयी थी । बलवंतराव चव्हाण ढवलेश्वर गाँव के मूल निवासी थे । लेकिन श्री. रामभाऊ जोशी ने चव्हाण का मूल गाँव भालवणी बताया है । लेकिन यशवंतरावजी ने 'कृष्णाकाठ' में अपना मूल गाँव 'ढवलेश्वर' बताया है । उनकी माँ ने उनसे यह बात बतायी थी । इसलिए इस बात को सच मानना ही पडेगा । ढवलेश्वर नाम का गाँव विटा गाँव से पाँच-छ: मील दूर है । उसके आसपास भालवणी, कलंबी, आलसुंद नाम के गाँव हैं ।

विठाई अब तीन बच्चों की माँ बन गयी थी । पहला ज्ञानोबा, दूसरी लड़की राधाबाई और उसके बाद गणपत । विठाई अब चौथे बालक को जन्म देनेवाली थी । स्वयं यशवंतरावजी ने अपनी आत्मकथा 'कृष्णाकाठ' में लिखा है – "मैं मेरी माँ का पाँचवा या छटवाँ अपत्य था ।" प्रसूति के लिए वह देवराष्ट्र में आयी थी । आक्का की प्रसूति अपने घर में होती है यह देखकर घाडगे के घर में सब को आनंद हुआ । विठाई की माँ की बहुत गड़बड़ चल रही थी ।

आक्का की पहली प्रसूतियाँ अच्छी हुई थीं । अब की प्रसूति । लेकिन इस समय एकाएक परिस्थिति अलग बन गयी । उस दिन शाम से गड़बड़ शुरू हुई थी । विठाई की माँ साहसी । मन में चिंता रखकर विठाई को धीरज देने का काम करना था । यह तो काम शुरू था । लेकिन समय बीत रहा था । तब माँ का धैर्य टूट रहा था । आक्का को पीड़ा हो रही थी । प्रसूति जोखिम की थी । गाँव छोटासा देहात । दवापानी की कुछ सुविधा नहीं थी । तहसील के गाँव पहुँचने के लिए बैलगाडी के सिवा दूसरी कोई सवारी नहीं थी । भोजन का समय टल गया था तब तक आक्का बेहोश हो गयी थी । माँ की चिंता बढ़ गयी । आक्का पर आनेवाला संकट टलना चाहिए था । क्षण-क्षण बेचैनी बढ़

रही थी । हमेशा का दवापानी किया । गाँव में अनुभवी बूढ्ढी स्त्रियाँ एकत्र हुई । उनमें से किसी के पास प्रसूति के निश्चित उपाय थे । सभी उपाय हो गये । लेकिन प्रसूति का चिह्न दिख नहीं पडता था । ऐसे समय देहात में एक ही उपाय शेष रहता है । वह है देव को गुहार लगाना, मनौती मनाना तथा भस्म लगाना । देव से गिड़गिड़ाकर गुहार लगाकर कहना कि, 'इसे जिंदा रखो ।' घाडगे के घर में यही कठिण समय आया था । तभी माँ के हाथ ढीले पड़ गये । थरकनेवाले हाथ फिर एकत्र हुए । माँ ने सागरोबा से हाथ जोडे और उसने अपने मन से सागरोबा की प्रार्थना की – "आक्का को जिंदा रखो, मेरे हाथ को यश दे । तुम्हारा स्मरण हमेशा करती रहूँगी ।"

१२ मार्च १९१४ । नियति का अनुग्रह विचित्र होता है । अव्यक्त रूप से वह कृपा करती है । माँ के मन में सागरोबा के प्रति अपार प्रेम । निष्ठा बहुत । रात के समय में उस अंधकार में, बड़ी शांति से सागरोबा को लगायी गयी गुहार सागरोबा तक पहुँच गयी । सागरोबा ने माँ की बात सुन ली । उसने माँ के हाथ को यश दिया । उस समय घाडगे के घर में एक बालक का जन्म हुआ । आक्का का कठिण हालत में से छुटकारा हुआ । माँ की आँखों में आँसू भर आये । आक्का अधखुले नेत्रों से आसपास देखने लगी । ढिबरी के प्रकाश में उसे कुछ नहीं दिख रहा था । लेकिन बालक की आवाज कान में आने लगी । उसे अच्छा लग रहा था । बच्चा और आक्का भी अच्छी थी । यह सब देखकर दाजीबा को भी अच्छा लगा । उनके घर में एक बच्चे का आगमन हुआ है । इससे उन्हें बहुत बडा आनंद हुआ ।

अब श्री. रामभाऊ जोशी ने यशवंतरावजी के जन्म की तारीख १२ मार्च १९१४ लिखी है । लेखक यशवंतरावजी ने 'कृष्णाकाठ' में लिखा है – "ऐसे देवराष्ट्र गाँव में मेरा जन्म १२ मार्च १९१३ को हुआ है । शाला का सर्टिफिकेट इतना ही इसका सबूत हुआ है । मैं मेरी माँका पाँचवाँ अथवा छटवाँ अपत्य होने के कारण मेरे जन्म की तारीख किसी ने नहीं लिखी । मेरा जन्म अर्थात् महत्त्वपूर्ण सुवर्णक्षण है ऐसी कोई परिस्थिति नहीं थी । आज अनेक लोग मुझसे कहते हैं – 'तुम्हारी निश्चित जन्मतारीख कहिए ।' और इसी जन्मतारीख को मैं मेरी सालगिरह मनाता हूँ । लेकिन शत-प्रतिशत यही मेरी जन्मतारीख है, यह मैं निश्चित रूप से नहीं कह सकता । परंतु मेरी माँ ने और नानी ने मुझे मेरे जन्म-समय की विस्तृत जानकारी मेरे बचपन में कही थी । आगे माँ से पूछ कर मैंने वह तारीख निश्चित की थी ।" (यशवंतराव

चव्हाण – 'कृष्णाकाठ', पृ. १३) इससे स्पष्ट है कि यशवंतरावजी की जन्मतारीख १२ मार्च १९१४ न होकर १२ मार्च १९१३ ही है। इस में दो मत नहीं हो सकते।

यशवंतरावजी आगे कहते है, "ननिहाल में मेरी माँ को सभी 'आक्का' कहते थे। वह घर में सब में बड़ी थी। इसलिए आने-जानेवाला मनुष्य भी उसे 'आक्का' ही कहता था।"

एक बार यशवंतरावजी ननिहाल में थे तब उसने नानी से पूछा था, तब उसने कहा था – 'आक्का का नाम देव का है। विठाई अपना देव है।'

"आगे नानी क्या कहती है, वह मेरी समझ में नहीं आया। लेकिन उसने कुछ अच्छा कहा है ऐसे मुझे लगा।

इस समय बोलते बोलते उसने मेरे नाम के पीछे जो कथा थी वह मुझे कही। उसने कहाँ – 'तुम्हारे जन्म के समय बड़ी पीड़ा हुई थी। वह बेहोश हो गयी थी। अपना गाँव एक छोटासा देहात था। वहाँ दवापानी की सुविधा नहीं थी। घरेलू औषधपानी किया, पर उसका कुछ उपयोग नहीं हुआ। मुझे चिंता लगी। आखिर सागरोबा को गुहार लगायी। अंत:करण से देव की प्रार्थना की। आक्का को जिंदा रखने में मेरे हाथ को यश दे। तुम्हारे स्मरण के रूप में लड़के का नाम यशवंत रखूँगी। सागरोबा ने मेरी प्रार्थना सुन ली। इसलिए तुम्हारा नाम 'यशवंत' रखा है।'

नानी ने संकट दूर हो जाए इसलिए अपने गाल पर से अपनी उंगलियाँ घुमायी और अपनी उंगलियों की कड़कड़ आवाज कर दी।"

रात में नानीने 'यशवंतरावजी' को भस्म लगाया। 'विठाई' और 'यशवंत' दो नामों के पीछे का इतिहास पहले पहले उनको मालूम हुआ।

माँ के प्राण की साक्ष – यशवंत का नाम 'यशवंत' है। यह समझने के बाद 'माँ' ही यशवंतरावजी का प्राण बन गयी।

□ पिताजी का निधन और उनके भाई

इ. स. १९१७-१८ का वह समय। युद्ध समाप्त हो रहा था। और उस समय हिंदुस्तान में जनता प्लेग जैसे महाभयंकर बीमारी से संघर्ष कर रही थी। प्लेग ने चारों ओर कहर ढाल दिया था। परिवार के परिवार नष्ट हुए थे। कराड में भी प्लेग का कुहराम मच गया था। वे दिन थे अनाज की कटाई करने के। प्लेग ने गाँव में प्रवेश किया। तब गाँव के लोग बाहर पडने लगे। बलवंतराव

को भी गाँव के बाहर पडना आवश्यक था । इसलिए विठाई और बच्चों को देवराष्ट्र को भेज दिया । परंतु मामा के छोटे से घर में ये सब लोग नहीं रह सकेंगे इसलिए महिंद घर के पास होनेवाले बड़े घर में दो कमरे में यशवंतरावजी के परिवार की व्यवस्था कर दी थी । वैसे उनके मामा के घर से उनका घर नजदीक था । इसलिए दिनभर वे मामा के घर के सामने रास्ते पर खेलते रहते थे । उस समय यशवंतरावजी चार वर्षों के होंगे ।

बलवंतराव अकेले ही कराड में रहे । नौकरी का बंधन था । उसके लिए उन्हें गाँव में ही रहना पड़ा । दिन बीत रहे थे । किसी न किसी परिवार पर हर दिन आक्रमण होता था । हाहाकार मच गया था । बलवंतराव अपनी आँखों से वह दु:ख देख रहे थे । नौकरी कर रहे थे । बीच-बीच में देवराष्ट्र जाकर पत्नी बाल-बच्चों को देखकर वापस आते थे ।

ऐसे ही एक दिन समय निकालकर पत्नी और बच्चों को देखने के लिए देवराष्ट्र गये थे । उस समय उन्हें ज्वर आया था । उनका स्वास्थ्य ठीक नहीं था । यशवंतरावजी ने खेलते समय पिताजी को सामने से आते हुए देखा । और भागते भागते वे अपने पिताजी से चिपक गये । लेकिन हमेशा की तरह उन्होंने यशवंत को अपनी गोद में नहीं लिया । उन्होंने यशवंतरावजी का हाथ अपने हाथ में लिया और यशवंत से कहा – 'हम घर जायेंगे । मेरी तबीयत ठीक नहीं है ।'

यशवंत उनकी उंगली पकडकर घर ले आया । माँ-पिता की क्या बातचीत हुई वह यशवंत की समझ में नहीं आयी । लेकिन माँ ने पिताजी के लिए बिछौना डाल दिया और उस पर वे सो गये । यशवंतरावजी को इसकी कल्पना नहीं थी कि उनकी यह अंतिम शय्या होगी ।

इसके बाद तीन-चार दिन होने पर भी उनका ज्वर कम नहीं हुआ । माँ घबरा गयी । वह दु:ख करने लगी । यशवंतजी की समझ में कुछ नहीं आया था । गाँव में लोगों का आना जाना शुरू हुआ । उससे कल्पना आयी कि कुछ तो गंभीर प्रसंग है । उसके परिणामों की यशवंतजी को कोई कल्पना नहीं थी । मृत्यु क्या होती है यह यशवंतरावजी को मालूम नहीं था । एक-दो दिन में पिताजी का स्वास्थ्य बहुत गंभीर हुआ । उनके अंतिम समय में यशवंतजी के साथ सभी बच्चों को घर के बाहर लाया गया । और तुलसी के चबूतरे पर कंबल बिछाकर बिठाया गया । थोडी देर के बाद यशवंतने माँ के दु:ख की दहाड़ सुनी । हक्का-बक्का होकर सब भाई तुलसी का चबूतरा छोड़कर घर की

ओर जाने लगे । लेकिन दूसरे लोगों ने उन्हें रोक लिया और कहा कि – 'बच्चों, यहाँ ही ठहरो । घर में मत जाओ ।'

यह याद उन्हें आज भी व्यथित करती है । इसलिए माँ का प्रेम बढ़ गया होगा ऐसा यशवंतरावजी का मत बन गया । माँ ने सब बच्चों को दिलासा दिया, आत्मीयता दिखायी । लडकों की ओर देखकर उसने अपना दु:ख दूर रखा । सच्चे अर्थो में पिताजी के निधन के बाद वे सभी अक्षरश: अनाथ हो गये थे । नानी और मामा का सहारा था । लेकिन उसके लिए भी कुछ सीमा थी । यशवंतरावजी ने अपनी माँ की ओर से भविष्यकालीन गृहस्थी की जो हकीकत सुनी है उससे मालूम होता है की अगला सब उसे अकेला ही करना पडा ।

माँ पीहर में बहुत दिन नहीं रह सकती थी । प्लेग के दिन समाप्त हो गए । फिर वे कराड आये । कराड में जिस किराये के घर में वे रहते थे । उस घर में वे रहने लगे । लेकिन आगे क्या यही प्रश्न था । उनकी माँ ने कष्ट कर के उन्हें जिन्दा रखा और साहसी बनाया ।

इस समय यशवंतरावजी के 'बड़े भाई ज्ञानदेव सत्रह-अठराह वर्षों के थे । यशवंतरावजी के पिताजी के अनेक बेलीफ मित्र उनकी माँ की सांत्वना के लिए आते और हम कुछ तो प्रयत्न करेंगे ऐसे कहकर चले जाते । यशवंतरावजी के पिताजी बड़े प्रामाणिक और निष्ठा से काम करनेवाले गृहस्थ थे । इसलिए उनके बारे में समव्यवसाय में होनेवाले लोगों को सहानुभूति थी । विशेषत: कराड के उस समय के मुन्सफ को भी सहानुभूति थी । उन्होंने यशवंतरावजी की माँ को बुलाकर धैर्य दिया और कहा कि – "मैं तुम्हारे लड़के को नौकरी देने की सिफारिश करता हूँ ।' परंतु यह बात उनके हाथ में नहीं थी । जिला न्यायाधीश के हाथ में थी ।

बेलीफ श्री. शिंगटे उनके पिताजी के अच्छे मित्र थे । उन्होंने उनके बंधु की नौकरी के लिए बहुत प्रयत्न किये । श्री. शिंगटे के मतानुसार उनकी माँ अपने दो बच्चों को लेकर सातारा चली गयी । श्री. शिंगटे भी साथ थे । वे सब सातारा कोर्ट में पहुँचे । वहाँ जानेपर शिंगटे ने कहाँ – 'चलो, तुम्हे साहब के सामने खडा करना है ।' वे हम सबको लेकर उनके ऑफिस में दूसरे एक अधिकारी की और लेकर गये ।

हम वहाँ से वापस निकल पडे तब यशवंतरावजी की माँ की आँखों में आनंद के आँसू थे । क्योंकि जिला न्यायाधीशने यशवंतरावजी के पिताजी के

रिक्त स्थान पर बडे बंधु को बेलीफ के रूप में नौकरी पर लेना कबूल किया था और वैसा आदेश भी तैयार कर रखा था ।

यशवंतरावजी कहते है कि एक अंग्रेज अधिकारी ने हमारे परिवार के साथ मानवता का बर्ताव किया था । (परतंत्र प्रशासन में ऐसा नहीं हो सकता था ।) हुआ वह भी मानवता के नाते ।

यशवंतरावजी अपनी माँ के साथ कराड वापस आये । एक दो सप्ताह में यशवंतरावजी के बंधु को नौकरीपर हाजिर होने का आदेश मिल गया । उनका घर स्थिर हुआ और कष्टप्रद क्यों न हो, लेकिन जीवन की अगली सफर शुरू हुई । यशवंतरावजी के पिताजी के एकाएक निधन से परिवार पर आया हुआ संकट कुछ कम हुआ था । फिर भी उन्हें उनके ननिहाल का सहारा लेकर चलने की जरूरत थी । इसलिए हर वर्ष दिवाली की छुट्टी में या अप्रैल और मई महिने में छुट्टी में कराड से देवराष्ट्र जाने का उनका कार्यक्रम हमेशा का कार्यक्रम बना था । इसी कारण से यशवंतरावजी की माध्यमिक शिक्षा पुरी होने तक देवराष्ट्र गाँव से उनका संबंध हमेशा बना रहा । इसलिए उस गाँव में सामाजिक परिस्थिति, वहाँ देखे हुए मनुष्य, वहाँ आए हुए अनुभव ये सब उनके भावनाशील जीवन के अंग बन गए है ।

यशवंतरावजी के बड़े भाई उस समय विटा (खानापूर तहसील) में नौकरी के लिए रहते थे । यशवंतरावजी और उनकी माँ दोनों कराड में थे । कराड में प्लेग की बीमारी होने के कारण कराड की शाला बंद थी । इसलिए मँझले भाई गणपतराव कुछ महिनों के लिए पढ़ने के लिए तासगाँव की शाला में चले गये थे । कम से कम अभ्यास तो होगा । वे लगभग चार महिने तासगाँव में थे और यशवंतरावजी तथा माँ कराड में ।

इस बंधु का यशवंतरावजी पर बड़ा प्रेम था । ऊँचाई से मध्यम, काला-साँवला वर्ण, चेहरे का ढंग थोडा-बहुत यशवंतरावजी जैसा, सिरपर रंगाया हुआ साफा, हाथ में छाता, डोलते-डोलते चलने की आदत यह उनकी विद्यार्थी अवस्था से नजर के सामने होनेवाला चित्र आखिर तक यशवंतरावजी के मन में रहा । मनुष्य की पहचान करने में और मित्रता करने में वे बहुत होशियार थे । लोगों के प्रश्न समझकर उनकी मदद करने के लिए उनको बड़ा उमंग था । इसलिए उनकी अपेक्षा उम्र से बड़े होनेवाले लोगों में वे लोकप्रिय थे । उन्हें खेलने का आकर्षण था । उनके समवयस्क विद्यार्थियों के साथ वे उत्तम कुश्ती खेलते थे । तिलक हाइस्कूल में एक कुश्ती की स्पर्धा में उत्तम

कुश्ती करके पुरस्कार प्राप्त किया था। यह कुश्ती देखने के लिए यशवंतरावजी गये थे। और वह कुश्ती तथा उस में उनकी निपुणता देखकर यशवंतरावजी को अपने भाई के बारे में बहुत आदर लगा। उनके समान उन्हें अच्छी कुश्ती नहीं आती थी। वे उनके साथ व्यायाम शाला में जाते थे। बीच-बीच में उनके आग्रह से वे साफा भी बांधते थे। उनका स्वास्थ्य उनकी अपेक्षा उत्तम था।

गणपतराव स्वयं बहुत बुद्धिमान थे। परंतु अपने घर की आपत्ति से और परिस्थिति से वे अपनी शिक्षा पूरी नहीं कर सके। यशवंतरावजी के अनुभव से वे उत्तम खिलाड़ी और लोकप्रिय विद्यार्थी थे। यदि वे सब समय राजनीति में पड जाते तो उन्होंने अच्छा नाम कमाया होता, ऐसा उनका अनुमान है। लेकिन उन्हें स्वयं परिवार के प्रश्नों में उलझना पडा। यशवंतरावजी के लिए उन्होंने अपनी शिक्षा का भी त्याग किया और उनकी शिक्षा पूरी करने के लिए भी प्रयत्न किया।

परिवार के मार्गदर्शन का सभी बोझ माँ पर था और वह अपने काम सँभालकर ये सब कर रही थी। यशवंतरावजी की माँ निरक्षर थी। लेकिन वह अपने मन से बहुत सुसंस्कृत थी। गणपतराव इंदौर से वापस आने पर उसने उसे कहा – 'इंदूर जाने में तू गलती की है। अब दूसरों को दोष मत दो। क्योंकि उसके बिना कारण कटुता पैदा होगी। अपनी गलती आपको ही सुधारनी चाहिए। तू फिर से शाला में जाने के लिए शुरुवात कर।'

गणपतराव ने माँ की सलाह मान ली और उस वर्ष में होनेवाली परीक्षा को बैठने का प्रयत्न किया। परंतु उनका मन शाला में नहीं लगा। उसने निश्चित तय किया कि अब मैं माँ को कष्ट नहीं करने दूँगा। शाला छोडकर एक स्थानिक नौकरी स्वीकार कर उन्होंने अपना जीवनक्रम शुरू करना तय किया। उसने उस समय यशवंतरावजी से कहा – 'माँ काम नहीं करेगी और तू अपना शिक्षा-क्रम पूरा कर। परिवार चलाने की जिम्मेदारी अब मुझ पर है।'

और वह जिम्मेदारी उन्होंने आखिर तक निभायी। इसलिए परिवार में सभी सदस्यों ने गणपतराव के प्रति कृतज्ञता व्यक्त की है।

□ यशवंतरावजी की माता विठाई

खानापूर तहसील के अन्तर्गत देवराष्ट्र नाम का गाँव है। रावजी घाडगे किसान थे। उनके लडके का नाम दाजीबा है। उनकी बहन विठाई बलवंतराव चव्हाण के साथ ब्याही गयी थी। उनके घर की परिस्थिति गरीबी की थी। फिर

भी इसी हालत में विठाईने दिन बिताये । उसने रातदिन कष्ट किया और बाल-बच्चों को शिक्षा दी । ऐसी कष्टप्रद हालत होनेपर भी उसने किसी के सामने हाथ नहीं फैलाये । वह बड़ी स्वाभिमानी थी ।

बलवंतराव के दादा विटा में स्थायिक हुए थे । विटा में उनकी तीन-चार एकड़ खेती थी । जमीन सूखी । किसी तरह दो-पाँच बोरे अनाज आता था । बलवंतराव और विठाई ऐसे वैसे दिन बिता रहे थे ।

मेरे बडे बंधु को नौकरी मिलने के बाद वे कुछ दिन कराड में थे । उसके बाद उनका तबादला विटा में हुआ । परंतु यशवंतरावजी की माँ ने निर्णय लिया कि दोनों छोटों को लेकर वह कराड में रहेगी और उनकी शिक्षा पूरी करनी चाहिए । इस दृष्टि से उसने लिया हुआ निर्णय उनके जीवन को दिशा देने के लिए फायदेमंद हुआ, यह उन्हें स्पष्ट दिखाई दे रहा है और उसके निर्णय से यशवंतरावजी और उनका परिवार कराडवासी हुआ । उसके बाद कराड से जो संपर्क आया, वह हमेशा का । वह गाँव उनका हो गया और वहाँ उनका कार्यक्षेत्र बन गया ।

यशवंतजी की माँ शाला में पढ़ी नहीं थी । लेकिन शिक्षा का मोल (मूल्य) अपने मन में जानती थी । वैसे देखा जाय तो यशवंतरावजी के घर की गरीबी थी । फिर भी वह संस्कार से श्रीमंत थी । यही श्रीमंती अपने बच्चों तक पहुँचाने का उसका हमेशा का प्रयास होता था । 'देव अपने पीछे है' यही उसकी निष्ठा थी । इसलिए वह संकट काल में कभी डगमगायी नहीं । वह बच्चों को हमेशा धैर्य देती रही । बड़ी भोर में पिसाई पीसते समय –

"नहीं बच्चों डगमगाओ,
चंद्र सूर्य पर के जायेंगे मेघ..."

यह दिलासा देनेवाली ओवी उसके गोद पर सोकर यशवंतरावजी ने कितनी ही बार सुनी है ।

यशवंतरावजी की माँ उनके घर के सब लोगों की शक्ति थी । बच्चे क्या पढते हैं और क्या बोलते हैं, यह वह सुनती थी । परंतु उसे उस में भाग लेना संभव नहीं था । लेकिन उसे लगता था कि अपने बच्चे कुछ अच्छी बाते बोलते हैं, कुछ नयी बाते करते हैं । परंतु उसने बच्चों के कामों में या विचारों में कहीं भी रुकावट नहीं डाली । लेकिन एक बात सच है कि वह उनके लिए बहुत मुसीबतें उठा रही थी । बड़े भाई की तनख्वाह कम । उस तनख्वाह से थोडा-बहुत परिवार के लिए भेज देते थे । शेष बातों के लिए यशवंतरावजी की माँ

ने अपने बच्चों के लिए बहुत कष्ट उठाये । गणपतराव ने जब माँ के कष्टों की याद दिलायी, तब यशवंतरावजी का मन भर आया ।

माँ ने यशवंतरावजी से कहा – 'बाबा, तू पढता है, घूमता है, फिरता है – ये सब अच्छा है । लेकिन किसी बुरी बातों में न उलझना । हम गरीब हो तो अपने घर की श्रीमंती अपने बोलने-बर्ताव करने में है, प्रथाओं में है । यह बात हमेशा के लिए ध्यान में रख । तुम्हे किसी की नौकरी करना है तो मेरा कोई हर्ज नहीं । मैं कष्ट करके तुम्हारी शिक्षा पूरी करूँगी । लेकिन तू इस शिक्षा में लापरवाही होगी, ऐसा मत कर । तुम पढ गये, तो तुम्हारा दैव बडा होगा ।'

माँ ने एक अर्थ से – बच्चोंको उसके विचार से एक तत्त्वज्ञान दिया था । वह गृहस्थी चलाती थी । उस में क्या समस्याएँ होती हैं यह उसे मालूम था । पर वह बच्चों को धैर्य देती थीं ।

यशवंतरावजी ने कहा कि – 'मेरी माँ सुसंस्कृत थी । यह उसके बर्ताव और बोलने से दिखाई देता था । हमारे घर की गरीबी क्यों न हो, लेकिन हमारे घर कोई आये गये तो उनका यथाशक्ति उचित आदरातिथ्य करने में उसने कभी गलती नहीं की । कभी कभी रिश्तेदार और देवराष्ट्र के आठ-आठ, दस-दस लोग मेहमान होकर आये, तो भी उसने सब की व्यवस्था की । वह कहती थी कि, हमे फाका पडेगा तो चलेगा पर आने जानेवालों को पेटभर भोजन दिलाना चाहिए ।'

देव धर्म पर उसकी श्रद्धा थी । रामायण के कथा के बारे में उसे बहुत आदर था । कराड के एक मंदिर में रामायण की कथा पढी जाती थी । वहाँ जाकर वह अनेक महिनों तक वह कथा सुनती थी । बीच बीच में वह मुझे भी ले जाती थी । उसके साथ जाकर मैंने भी राम कथा सुनी और मेरे मन में भी रामकथा के बारे में रस निर्माण हुआ । माँ को रामायण की कथा प्रसंगोसहित मालूम थी । फिर मैं उसे उलटे-सुलटे प्रश्न पूछता था ।

तब माँ कहती है – 'तू पढ्या लिखा है, वह पढकर देख ले । मैंने जो सुना है वह भक्तिभावना से सच मानती हूँ । (राम कथा तब से मेरी प्रिय कथा बन गयी है ।)'

माँ बीच बीच में साखरेबुवा की 'सार्थ ज्ञानेश्वरी' पढकर लेती थी । ज्ञानेश्वरी समझने के लिए थोडी कठिन । पुरानी भाषा होने के कारण वह यशवंतरावजी को जैसा समझना चाहिए था वैसे समझ में नहीं आता था । लेकिन वे पढते थे और वह उसे भक्तिपूर्वक सुनती थी । एक सप्ताह में

यशवंतरावजी ने उसे दो अध्याय पढ़ाकर दिखाए, तब उसे पूछा – 'तुमने यह सब सुन लिया, उसका सारांश तुम्हारे मन में क्या आया?'

उसने यशवंतरावजी से एक वाक्य में कहा – 'कृष्णदेव अर्जुन से कहते हैं कि, तू अपना 'अहं' छोड़ और तुम्हें जो काम करना चाहिए, वह काम तू करते रहना । सब ऐसा कहते हैं और वह उचित है ।'

यशवंतरावजी ने कहा है, "गीता का इतना सरल, सीधा और आसान आशय मैने दूसरे पंडित से सुना नहीं है । उसकी समझ अच्छी थी । मन धैर्यशील था और उदार था ।"

यशवंतरावजी के अनुसार – 'हमारी सच्ची शाला हमारी माँ थी ।"

बचपन में एक बार यशवंतरावजी नानी और माँ के साथ पंढरपूर जाकर विठ्ठल के दर्शन करके आये थे । उसके बाद यशवंतरावजी अनेक बार पंढरपूर गये हैं लेकिन वे पहले या पूर्व दर्शन की याद भूलते नहीं है । प्रसिद्ध प्राप्त होने पर, सत्ताधारी होने पर यशवंतरावजी ने विठ्ठल का आराम से दर्शन किया है । लेकिन बिगडनेवाले बडवे की ओर ध्यान न देकर माँ ने छोटे यशवंतरावजी को उठाकर विठ्ठल के पैरोंपर उन्हें रखकर विठ्ठल का दर्शन करवाया । उसकी अपूर्वाई यशवंतरावजी को हमेशा याद रहती है । भीड़ में से वे चार दो दिन, चंद्रभागा की रेती में होनेवाले भजनों के समूह (फड़) और वहाँ चले हुए अच्छे भजन, उनकी वह मीठी आवाज आदि सब घटनाएँ और चित्र आज भी यशवंतरावजी की आँखों के सामने आते हैं । जब यशवंतरावजी पंढरपूर जाकर विठ्ठल के दर्शन लेते थे, लोग पूछते थे । इसमें श्रद्धा का भाग कितना?

फिर यशवंतरावजी उत्तर देते थे – 'पत्थर की मूर्ति में ईश्वर हैं, ऐसा कभी भी नहीं मानता । परमेश्वर रूप में कोई व्यक्ति कहीं बैठी है और वह सब दुनिया चलाती है, ऐसा मेरा मत नहीं है । परंतु हमारी समझ में न आनेवाली एक शक्ति है । इसलिए उसका अस्तित्व मानना आवश्यक है । उसके बिना अनेक बातें सुलझायी नहीं जा सकती ।

ईश्वर है यह बुद्धिवाद से सिद्ध नहीं किया जा सकता, वैसे वह नहीं है, यह भी सिद्ध नहीं किया जा सकता । इसलिए जिस स्थानपर सैंकडो वर्षों समाजपुरुष नतमस्तक होता आया है, वहाँ नतमस्तक होना मैं श्रेयस्कर मानता हूँ । मंदिर में जाने के पीछे मेरी यही भावना है । इसी भावना से मैं तुलजापूर जाता हूँ, प्रतापगड जाता हूँ । इस में कोई अंधश्रद्धा नहीं है । परंतु यह करने से मेरे मन को एक प्रकार का समाधान मिलता है । यह बात मुझे स्वीकार

करनी चाहिए ।

जिन्दगी में बहुत वर्षों दुःख की साथ करने पर दिलासा और दिलदार रहना यह ईश्वर की देन है । मेरी माँ का जीवन मुझे हमेशा दीपज्योति के समान लगता है । दिया जलता है उसके प्रकाश में मनुष्य घूमते-फिरते हैं । लेकिन अपना उपयोग लोगों को होता है यह उस ज्योति को, उस प्रकाश को मालूम नहीं होता । वह दीपज्योति का जलना माँ का था ।

गणपतराव को यह आंदोलन महत्त्वपूर्ण लगता है, यह बात उन्हें पसंद न आती थी । परंतु उन्होंने उसे परावृत्त करने का प्रयत्न नहीं किया । मुझ से कहा कि – 'तुम यह जो करते हो, क्या यह माँ को पसंद है? इस विषय में तुम उससे बात कर लो ।'

यशवंतरावजी तो इस आंदोलन के संबंध में माँ से हर बात बोलते थे ।

'तुम्हारी शिक्षा में बाधा आयेगी, यह तो मुझे चिंता है ।' यह माँ ने यशवंतरावजी से जरूर कहा था । परंतु यशवंतरावजी जो करते हैं, उससे पीछे मोड लेने का प्रयत्न नहीं किया ।

उसने कहा – 'तुम गांधीजी का काम करते हो, तुम्हे 'ना' कैसे कहूँ । लेकिन तुम्हारा बडा भाई सरकारी नौकरी में है, वह नाराज नहीं होगा, इसका विचार कर ।'

उसका कहना सच था । यशवंतरावजी के बडे भाई जो सरकारी नौकरी में थे, उन्हे यशवंतरावजी का यह राजनैतिक काम बिलकुल पसंद नहीं था । उन्होंने यशवंतरावजी से स्पष्ट कहा था कि – 'तुम्हारे इस उद्योग से कभी भी मेरी नौकरी छूट सकती हैं । और हम सब अनाथ बन जायेंगे ।'

लेकिन यशवंतरावजी ने उनके बोलने की चिंता नहीं की और उन्होंने उनका काम जारी रखा ।

इससे स्पष्ट है कि यशवंतरावजी देशप्रेमी थे और उनका अंतिम ध्येय था देश को स्वतंत्र करना ।

□ यशवंतरावजी की शिक्षा दीक्षा

यशवंतरावजी की पहली पाठशाला देवराष्ट्र की । गाँव की पश्चिम की तरफ ऊँची पहाडी पर एक तालाब के किनारे पर होनेवाले दो-तीन कमरों में शाला भरती थी । यशवंतरावजी की शिक्षा का श्रीगणेशा यहाँ ही हुआ था । वे केवल शाला में जाते-आते थे । उनका नाम शाला में दाखिल नहीं किया

था । श्री. रामभाऊ जोशी ने 'यशवंतराव : इतिहासाचे एक पान' पृ. ११ पर लिखा है – 'यशवंतराव देवराष्ट्र पहुँच गये । फिर दाजिबाने वहाँ की शाला में यशवंतरावजी को दाखिल किया । यशवंतरावजी की चौथी तक की शिक्षा ननिहाल में देवराष्ट्र में हुई । कराड में यशवंतरावजी को तिलक हाईस्कूल में दाखिल किया गया ।'

सच बात यह है कि, यशवंतरावजी की मैट्रिक तक की सारी शिक्षा कराड में हुई । स्वातंत्र्यपूर्व काल में पहली इयत्ता को इन्फन्ट्री कहते थे । उस समय नगर परिषद की शाला को स्कूल बोर्ड की शाला कहते थे । घरवालों ने स्कूल बोर्ड की शाला क्र. १; ४ में यशवंतरावजी का नाम दाखिल किया । उनकी १२-३-१९१३ जन्म तारीख लिखी है । १५-५-१९१८ उनका नाम इन्फन्ट्री में दाखिल हुआ है । उनका नाम यशवंत बाला चव्हाण लिखा गया है । उनकी जात मराठा लिखी गई है । यशवंतरावजी नये रूप में स्कूल में दाखिल हुए थे । वे उस स्कूल में छठवी कक्षा तक पढे और उन्होंने ३१-५-२४ को वह स्कूल छोड़ दिया और स्कूल नं. २ में सातवी कक्षा में पढ़ने के लिए गए और वे इसी स्कूल में से सातवी कक्षा उत्तीर्ण हुए और इस कक्षा को पहले व्ह.फा. भी कहा जाता था । स्कूल नं. २ में उनका रजि. नं. १८७ था । इस स्कूल के रजिस्टर में यशवंत बलवंत चव्हाण नाम लिखा है । वे इ.स. १९२७ में सातवी परीक्षा उत्तीर्ण हुए ।

इसके बाद वे इ. स. १९२७ में तिलक हाइस्कूल में दाखिल हुए । कराड के तिलक हाइस्कूल में एक वर्ष में तीन इयत्ता का कोर्स पास करने के बाद वे तिलक हाइस्कूल के विद्यार्थी बन गये । उस समय शाला की फीस मामूली थी । उस समय लाल पैसे को बड़ी कीमत थी । धनिक लोगोंके लडकों के लिए फीस का प्रश्न उपस्थित नहीं होता । क्योंकि उनके पास पैसे थे । पर इन दो बंधुओं को शाला की एक महिने की फीस देने के लिए घर में पैसा शेष नहीं रहता था । गरीबोंके लडके ढोरडंगर की रखवाली कर, गोबर एकत्र करे, गौशाला साफ करे, खेती की रखवाली करे, ऐसी ही सुखवस्तु समझे जानेवाले लोगों की भावना थी । इन लडकों के कष्ट के मुआवजे के रूप में शेष रहा हुआ बासी अन्न उन्हें देन का बडप्पन वे दिखाते थे । तिरस्कार तो उन लडकों को सुनना ही पडता था । गरीब का कोई लडका पढता है तो उसे फीस की मामूली मदद करने की बात तो दूर, फीस माफी के लिए कोई गरीब समाज में किसी प्रतिष्ठित व्यक्ति से गरीबी का सिफारिश पत्र माँगा तो उसकी बिदाई

तिरस्कार से होती थी ।

तिलक हाइस्कूल में पढ़नेवाला यशवंत भी इस प्रकार के तिरस्कार में से छूटा नहीं । उस समय शाला में फीस माफी मिलाने के लिए किसी प्रतिष्ठित व्यक्ति से 'विद्यार्थी गरीब है' का शिफारिस पत्र लेना पडता था । ऐसे ही एक दिन यशवंत गाँव में एक खानदानी श्रीमंत के पास शिफारिस पत्र माँगने गया । चव्हाण परिवार गरीबी में दिन बिता रहा है यह बात उस प्रतिष्ठित व्यक्ति को मालूम थी । परंतु उसने गरीबीका शिफारिस पत्र देना इन्कार कर दिया और तिरस्कार के शब्द भी सुनाए । यह एक छोटीसी घटना, परंतु इस छोटी-सी घटना से यशवंत के मन को ठेंस पहुँची । गरीबों को स्वाभिमान नहीं होता, ऐसी ही उस प्रतिष्ठित व्यक्ति की भावना होगी । उन्हें शिफारिस पत्र नहीं मिला इसका उन्हें दुःख नहीं था, पर उन्हें दुःख था उस तुच्छ शब्द का । यशवंतरावजी के मन में इस घटना से टीस पैदा हुई । परंतु यह शल्य यशवंतरावजी ने अपने मन के कोने में रख दिया और वहाँ से निकल पडे । लेकिन उसने अपने मन में प्रतिज्ञा की शिक्षा की मदद के लिए किसी बडे आदमी के पास जाना नहीं चाहिए । जैसी भी परिस्थिति होगी वैसी परिस्थिति में शिक्षा लेनी चाहिए । उनके भाईबंद थे । लेकिन वे दूर खडे रहकर देख रहे थे । महाविद्यालयीन शिक्षा के समय भी उसने किसी के पास याचना नहीं की । लेकिन मित्र उनकी मदद के लिए तैयार थे । यशवंत पढ़े ऐसे कुछ मित्रों की इच्छा थी । उन में से सुखी-संपन्न एक मित्र ने यशवंत के उच्च शिक्षा की जिम्मेदारी स्वयं स्वीकार ली । प्रारंभिक काल में शिक्षा में बाधाएँ आयी गरीबी की । इसके सिवाय उस समय हिंदुस्थान में जो राजनैतिक परिस्थिति थी और आंदोलन थे उस में भाग लेने की इच्छा होने पर भी उनके मार्ग में अनेक बाधाएँ थी ।

वे अप्रैल १९३४ में मॅट्रिक की परीक्षा पास हुए । अगली शिक्षा के लिए उन्होंने कोल्हापूर के राजाराम कॉलेज में प्रवेश लिया । वहाँ से वे बी.ए. हुए । वे कोल्हापूर आकर स्थिर हुए थे । बीच बीच में बाधाएँ आती रही । उनके बंधु गणपतराव और मित्रों ने सारी बाधाएँ दूर की । सातारा जिले मे उनके जो कार्यकर्ता और मित्र थे, उनके काम से वे अलग रहना नहीं चाहते थे । वे तो सातारा जिले में काँग्रेस आंदोलन का एक अटूट भाग बन गये थे । उनसे मिलने के लिए वे कभी सातारा जाते और उनके मित्र उनसे मिलने के लिए कोल्हापूर आते । आंदोलन के काम की अपेक्षा वे पढने के लिए अधिक समय देते थे । पढाई के साधन बहुत होने के कारण बौद्धिक और वैचारिक शक्ति

प्राप्त करने के काम में यशवंतरावजी मग्न हो गये थे ।

बी.ए. की परीक्षा के लिए यशवंतरावजी ने राजनीति, इतिहास और अर्थशास्त्र ये विषय लिये थे । इ. स. १९३८ में उन्होंने बी.ए. परीक्षा दी । उनके सामने प्रश्न उपस्थित हुआ कि कानून का अध्ययन कहाँ करना चाहिए । वे उपाधि धारक तो हुए थे और आगे क्या करना चाहिए । अभी आगे क्या करना है । इस संबंध में एल.एल.बी. करूँगा ऐसा उन्होंने विचार किया । एल.एल.बी. करने के पूर्व आर्थिक तैयारी करनी आवश्यक होगी । विटा में उनकी तीन चार एकड़ खेती थी । वह भी वडिलोपार्जित । उन्हें उसका अच्छा उत्पादन नहीं आता था । उनके दो भाईयोंने सुझाया । उस खेती को बेच डालने से यशवंतरावजी उन पैसों में एल.एल.बी. हो सकते हैं ।

सबने मिलकर विटा में जाकर जमीन का बिक्रीखत कर दिया । यशवंतरावजी के लॉ कॉलेज के दो वर्षों के खर्च की सुविधा हो गयी ।

एल.एल.बी. के लिए उन्होंने पूना चुन लिया । अभ्यास के लिए उत्तम वातावरण था । पहले पहले उन्होंने लॉ कॉलेज देखा । उसकी इमारत हाल ही में बांधी गयी थी । इमारत को देखते ही उनका मन प्रसन्न हुआ । जब उन्होंने कॉलेज की लायब्ररी देखी तब वे बहुत आश्चर्यचकित हो गये । इतना उत्तम वातावरण उसने अन्यत्र क्वचित देखा होगा । वाचन के लिए और ज्ञानार्जन के लिए वहाँ बड़ा विशाल क्षेत्र था ।

१९३८ साल कैसे बीत गया वह समझ में नहीं आया । फिर कानून की अपेक्षा उन्होंने अन्य बातों का अधिक अभ्यास किया था । उसका परिणाम यह हुआ कि वे १९३९ की कानून की परीक्षा में अनुत्तीर्ण हुए । बहुत अध्ययन करके अगले छः महिनों में वे यह परीक्षा उत्तीर्ण हुए ।

१९४० का वर्ष समाप्त होता आ रहा था । उसने कमरा बदलकर कानून के दूसरे वर्ष की परीक्षा की तैयारी शुरू की । उनकी माँ का उनसे हमेशा संदेश आता था 'अब तुम्हारी परीक्षा होने तक कृपा करके कम से कम जेल में मत जाओ । परीक्षा होने के बाद तुम्हे जो कुछ करना है वह करो ।' माँ की बात यशवंतरावजी ने सुन ली और अध्ययन किया । अप्रैल में उनकी परीक्षा हुई । फिर पूना छोडकर कराड आये । उन पर जिला काँग्रेस के अध्यक्षपद की जिम्मेदारी थी । इसलिए वे हमेशा जिले में घूम रहे थे । परीक्षा का फल अब घोषित होनेवाला था ।

एक-दो महिनों के बाद उनकी परीक्षा का रिझल्ट आया और यशवंतरावजी

उत्तीर्ण हुए । उनकी माँ को बहुत आनंद हुआ । यशवंतरावजी ने जो योजना बनायी थी, उसके अनुसार उसने अपनी शिक्षा पूरी की । उनके राजनैतिक कार्य के कारण उनके तीन-चार वर्ष व्यर्थ बीत गये । उसके कारण थोडीसी बढ़ती उम्र में उसने वकील का अभ्यास पूरा किया था । यह बात वे समझ गये थे ।

अब वकिली करने का प्रश्न निर्माण हुआ । सातारा या कराड । यशवंतरावजी ने निर्णय किया कि – 'वकिली करने के लिए मेरा जीवन है ऐसा मुझे नहीं लगता । हुआ है तो वकील, तो कराड में वकिली करने का प्रयत्न करेंगे । उसके साथ राष्ट्रीय आंदोलन कार्य भी किया जा सकता है ।' उसने कराड में गुरुवार पेठ में देशपांडे का घर किराये पर लिया और उसने वहाँ वकिली शुरू की । उसने वर्षभर वकिली की । उनका वकिलीका अनुभव बहुत कुछ अच्छा नहीं था । सातारा जिले में जो कार्यकर्ता लोग थे हमेशा उनकी भीड़ रहती थी । ऐसी हालत में वकिली संभव नहीं थी । आगे चलकर यशवंतरावजी ने आंदोलन करना, काँग्रेस का प्रचार करना इस कार्य को प्रधानता दी ।

यशवंतरावजी की शिक्षा-दीक्षा इन्फन्ट्री से लेकर मॅट्रिक तक कराड में हुई थी, न कि देवराष्ट्र में । ये सारे प्रमाण मेरे पास है । मेरे पास कराड में शाला नं. १, ४ और शाला नं. २ का दाखिला लिव्हिंग सर्टिफिकेट है । यशवंतरावजी तिलक हाइस्कूल में से मॅट्रिक पास हुए अप्रैल १९३४ । उनका लिव्हिंग सर्टिफिकेट मेरे पास है ।

□ यशवंतरावजीके आदरणीय अध्यापक

यशवंतरावजी कि शिक्षा का श्री गणेशा देवराष्ट्र में हुआ था । बंडू गोवंडे यशवंतरावजी को पढानेवाले पहले शिक्षक थे । मन लगाकर पढानेवाले प्रेमी शिक्षक थे ।

उस समय यशवंतरावजी की शाला में शेणोलीकर नाम के अध्यापक थे । उन्हें शोक था पढ़ाने का और क्रिकेट का । उन्होंने यशवंतरावजी को क्रिकेट सिखाने का प्रयत्न किया, पर उन्होंने उस में रुचि नहीं दिखलायी ।

यशवंतरावजी जेल की बराकी में थे । वहाँ 'शाकुंतल' के वर्ग शुरु हुए थे । कुछ दिनों के बाद आचार्य भागवतने यशवंतरावजी और उनके मित्रों को शेक्सपियर का नाटक सिखाने की बात कबूल की थी । फिर उन्होंने यशवंत को 'ज्यूलियर सीझर' नाटक पढाया ।

यशवंतराव ने राजाराम कॉलेज में विद्यार्थी की हैसियत से प्रवेश किया था। उस समय डॉक्टर बालकृष्ण कॉलेज के प्राचार्य थे। वृत्ति से राष्ट्रीय, इतिहास के विद्वान प्राध्यापक, वक्तृत्वसंपन्न आदि कारणों से उन्हें राजाराम कॉलेज में और कोल्हापूर में बहुत मान-सम्मान था। उन्होंने यशवंतरावजी को उपदेश किया कि – 'तुम कृपा करके संस्थानकी राजनीति में भाग न लो और अभ्यास करके सीखते रहो।' यशवंतरावजी ने उनकी आज्ञा का पालन किया।

यशवंतरावजी को संस्कृत पढना था। परंतु शास्त्रीबुवाने कहा – 'मैं अब्राह्मणों को देववाणी संस्कृत नहीं पढाऊँगा।' उसके बाद यशवंतरावजी ने अर्धमागधी विषय लिया। डॉक्टर उपाध्ये नाम के प्राध्यापक उन्हें अर्धमागधी पढ़ाते थे। वे बहुत उत्तम शिक्षक थे। थोडे श्रम करने के बाद अर्धमागधी विषय में अच्छे गुण मिलते हैं, इसका यशवंतरावजी को अनुभव आया।

उस समय लोकप्रिय उपन्यासकार श्री. ना. सी. फडके राजाराम कॉलेज में प्राध्यापक थे। जब यशवंतरावजी इंटरमीजिएट में थे तब वे उन्हें तर्कशास्त्र पढाते थे। ना. सी.फडके बाहर जैसे लोकप्रिय थे वैसे वे विद्यार्थियों में बहुत प्रिय थे। विषय आसान और मनोरंजक करने में फडके उत्तम थे। यह तो उनके अध्यापक होने का उत्तम सबूत था। इसलिए मराठी, इतिहास के साथ ही तर्कशास्त्र भी उनके पसंद के विषय थे।

उसी राजाराम कॉलेज में 'माधव ज्युलियन' पटवर्धन नाम के प्राध्यापक थे। वे उत्तम कवि के रूप में महाराष्ट्र में प्रसिद्ध थे। इंटरमीजिएट वर्ग में वे यशवंतरावजी को अंग्रेजी पढ़ाते थे। वे विद्वान और प्रकृति से गंभीर थे। शिक्षक और विद्यार्थी इन दोनों के बीच में जो आत्मीयता स्थापित करने की आवश्यकता होती है वह कभी उन में दिखाई नहीं दी। ये दोनों भी अपनी अपनी दृष्टि से बडे आदमी थे। इन दोनों के प्रति यशवंतरावजी के मन में बड़ा आदर था। पर उसका कारण क्या था यह बात उनकी समझ में नहीं आती।

उसी राजाराम कॉलेज में डॉ. बोस नाम के अंग्रेजी के प्रोफेसर थे। यशवंतरावजी जब बी.ए. के वर्ग में थे वे उन्हें अंग्रेजी पढ़ाते थे। यशवंतरावजी हाइस्कूल से लेकर कॉलेज तक की अवस्था में अनेक शिक्षकों से कविता सीखे थे। परंतु प्रोफेसर बोस की शैली किसी को साध्य नहीं हुई। जब वे हाइरकूल में पढ़ते थे तब उनके शिक्षक श्री. दत्तोपंत पाठक में उन्हे बोरा की शैली दिखायी दी।

यशवंतराव जब कोल्हापूर में चार वर्षों तक सीखने के लिए थे तब उन्हें

उन सबकी याद आती थी ।

शिक्षाविषयक जीवन में ऐसे महान व्यक्तियों का प्रभाव बहुत दिन रहता है और एक दृष्टि से वह अविस्मरणीय भी है । क्योंकि उनकी ओर से मिले हुए संस्कार ये हमेशा के लिए रहनेवाले संस्कार होते हैं ।

यशवंतरावजी के जीवन में कोल्हापूर में शिक्षा के चार वर्ष नीव स्थापित करनेवाले और गतिमान बनानेवाले चार वर्ष थे । इन वर्षों में यशवंतरावजी के जीवन में बहुत कुछ परिवर्तन हुए ।

यशवंतरावजी १९३८ में बी.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण हुए ।

मित्रों ने उनसे कहा – 'तुम्हे अध्यापक या संपादक होना है तो कानून के ज्ञानसे तुम्हारे काम में कोई बाधा उत्पन्न नहीं होगी । कानून की परीक्षा देकर भी तुम आगे जा सकते हो । सीर्फ उपाधिधारी हो तो बीच में ही लटकते रहोगे ।'

यशवंतरावजी ने विचार किया कि उन्हें अन्त में स्वातंत्र्य आंदोलन की राजनीति करनी है । राजनीति और वकिली दोनों हाथ में हाथ मिलाकर चलते हैं, यह भी वे देख रहे थे ।

और बहुत विचार के बाद कानून का अध्ययन करना चाहिए ऐसा निर्णय उन्होंने लिया ।

१९४० वर्ष समाप्त हो रहा था । यशवंतरावजी की माँ हमेशा उन्हें संदेश भेजती रही कि – 'अब तुम्हारी परीक्षा होने तक कृपा करके कम से कम जेल में मत जाओ । परीक्षा होने के बाद तुम्हे जो कुछ करना है वह जरूर करो ।' उसके बाद यशवंतरावजी ने तीन महिने अभ्यास किया । अप्रैल में परीक्षा हुई और पूना छोडकर वे वापस आये । उन पर जिला काँग्रेस के अध्यक्ष पद की जिम्मेदारी थी । काँग्रेस कार्य करने के लिए वे हमेशा जिले में घूमते फिरते थे । परीक्षा फल जाहिर होनेवाला था । इसलिए घर में कोई जरूरी काम नहीं था ।

एक-दो महिनों के बाद यशवंतरावजी के एल.एल.बी. का परीक्षा फल जाहिर हुआ और वे पूना लॉ कॉलेज से एल.एल.बी. उत्तीर्ण हुए । उनकी माँ को बहुत आनंद हुआ । उन्होंने जो योजना बनायी थी, उसके अनुसार उनकी शिक्षा उन्होंने पूरी की । उनकी राजनीति के कारण उनके तीन-चार वर्ष व्यर्थ बीत गये । थोडीसी बढ़ती उम्र में उन्होंने वकिली का अभ्यास किया था । यह बात भी उन्हें महसूस हुई थी ।

राष्ट्रीय आंदोलन करने के लिए कराड सुविधाजनक है । इसलिए उन्होंने कराड में वकिली शुरू की । लगभग एक वर्ष उन्होंने वकिली की । हर महिने

में चार-पाँच सौ रुपये मिलते थे । घर के लोगों को भी मदद होने लगी । वे स्वयं पैसे कमाने लगे, इसका भी उन्हें समाधान था । उनको एक वर्ष की वकिली करने का जो अनुभव आया था, वह अच्छा नहीं था । उनके घर में भीड़ रहती थी । परंतु यह भीड़ तहसील में और जिले में कार्यकर्ताओं की थी । अन्य कार्यकर्ताओं को अभिमान था कि – 'हम में से हमारे एक मित्र यशवंतरावजी ने वकिली के पेशे में प्रवेश किया है ।' इसी एक बात का उन्हें आनंद था । इसलिए यशवंतरावजी कोर्ट जाने तक ये लोक उनके पास भीड़ करके बैठे रहते थे ।

□ यशवंतरावजी का विवाह और दाम्पत्य जीवन

एल.एल.बी. होने के बाद विठाईने कहा कि – 'बाबा, विवाह कर ले ।'

यशवंतरावजी ने कहा – 'हाँ, ठीक है । अच्छी लड़की देखने में आयी तो मैं जरूर विवाह करूँगा ।'

फिर वह लड़की देखने के उद्योग में लग गयी । उसने वह काम गणपतराव पर सौंप दिया और कह दिया – 'और अब छोटे भाई की ओर ध्यान दे ।'

यशवंतरावजी ने कुछ लडकियाँ देखी, पर उन्हें उन में बहुतसा आकर्षण दिख नहीं पडा । इसलिए उन्होंने उसे नजरअंदाज कर दिया ।

१ मार्च १९८५ को महाराष्ट्र शासन की जो 'लोकराज्य' की पुस्तिका प्रकाशित हुई थी, उस पुस्तिका के पेज क्र. २२ पर लिखा है कि यशवंतरावजी का विवाह १९४२ के मई महिने में फलटण में हुआ था । यह बात गलत है ।

मेरे पास यशवंतरावजी के विवाह की जो निमंत्रण पत्रिका है, उसके अनुसार यशवंतरावजी का विवाह वेणूजी के साथ २ जून १९४२ में कराड में हुआ है ।

उनके विवाह की निमंत्रण पत्रिका राष्ट्रीय भावों से परिपूर्ण है । इसलिए उस पत्रिका का अपना स्वतंत्र अस्तित्व है । विवाह पत्रिका इस प्रकार है –

प्रिय महाशय,

हमारे कनिष्ठ बंधु

रा. यशवंतराव

बी. ए., एलएल.बी.

इनका विवाह स्व. रा. रघुनाथराव मोरे मु. फलटण की कन्या

सौ. कां. वेणू

इसके साथ ज्येष्ठ कृ. ४ ता. २ जून १९४२ के मंगलवार शाम के गोरज महूरत पर (स्टँ.टा. ७।१०) वैदिक पद्धति से संपन्न होगा। इस सुमंगल अवसर पर आप उपस्थित रहकर वधुवरों को आशीर्वाद दे ऐसी प्रार्थना है।

विवाह स्थल:
मराठा बोर्डिंग, कराड

आपके नम्र
ज्ञानोबा बलवंत चव्हाण
गणपत बलवंत चव्हाण

पत्रिका पर तिरंगा झण्डा छपा है। यह भारत का मानचिन्ह है। इससे यशवंतरावजी का राष्ट्र प्रेम प्रकट होता है। उनकी अपने देश भारत पर अटूट निष्ठा दिखाई देती है। उसके बाद लिखा है – *'कुर्यात सदा मंगलम्'* इसका अर्थ है – 'हमेशा के लिए मंगल हो।' यह निमंत्रण पत्रिका व्यापारी प्रेस कराड में छपी गयी थी।

माँ की इच्छानुसार १९४२ में यशवंतरावजी विवाहबद्ध हो गए। फलटण के मोरे की कन्या वेणूजी यशवंतरावजी की सहचारिणी (पत्नी) बनकर उनके घर में आयी। देश के स्वातंत्र्य के लिए सतत काम करनेवाले यशवंतरावजी को घर-गृहस्थी की अपेक्षा देश के गृहस्थी की अधिक चिंता लगी थी। विवाह होनेपर भी यशवंतरावजी गृहस्थी बनने का प्रश्न निर्माण नहीं हुआ था। विठाईजी घर गृहस्थी देखती थी। विवाह के बाद पहली संक्रांत थी सौ. वेणूताईजी की। इसी दिन पुलिसने सौ. वेणूताईजी को गिरफ्तार किया और भूमिगत यशवंतरावजी की खोज लगाने का प्रयत्न किया। इधर गणपतरावजी को भी विसापूर जेल में रख दिया। उसके बाद कुछ दिनों में चव्हाण परिवार पर आपत्ति ढल गयी। उनके बड़े भाई ज्ञानदेवजी की बीमारी में मृत्यु हुई।

भूमिगत हुए यशवंतरावजी को पंद्रह दिनोंके बाद यह वार्ता समझ गयी । यशवंतरावजी को बहुत बडा दु:ख हुआ । उन्हें माँ से मिलने की तीव्र इच्छा हुई । पर कोई इलाज नहीं था । "भावना की अपेक्षा कर्तव्य श्रेष्ठ होता है ।" यही विचार कार्यकर्ताओं ने यशवंतरावजी को समझाया । यशवंतरावजी अपने विचार के अनुसार माँ से मिलने के लिए चले जाते तो सरकार उन्हें पकड़ने में सफल हो जाती । आखिर यशवंतरावजी माँ से बिना मिले पूना में ही रह गये ।

इसी समय सातारा जिले में भूमिगत आंदोलन गनिमी साज़िस की तरह सशस्त्र होने की तैयारी कर रहा था । इस आंदोलन को आगे पत्री सरकार ऐसा नाम मिला । इसी संक्रमण अवस्था में वे परिवार की समस्याओं से घिर गये थे । बड़े भाई की मृत्यु के पूर्व सौ. वेणूताईजी की रिहाई हुई थी । उनकी बीमारी में वेणूताईजी उनके पास बैठी रही थी । वेणूताईजीने उनकी मृत्यु को नजदीक से देखा था । इसलिए वे मानसिक दृष्टि से त्रस्त हुई थी । यशवंतरावजी को यह समझने पर उनकी मानसिक अस्वस्थता बढ़ गयी । उस समय वे बम्बई में भूमिगत थे । वे बंम्बई से पूना आये । उन्होंने वेणूताईजी को पूना बुलाकर डॉक्टर को दिखाया । वेणूताईजी की निश्चित बीमारी क्या है यह समझ में नहीं आया । उनकी तबीयत तो खराब हुई थी । वे चार-छ: घंटोंमे बेहोश हो जाती थी । उनकी तबीयत की व्यवस्था हो इसलिए यशवंतरावजी ने वेणूताईजी को पीहर फलटण को भेज दिया । और इधर यशवंतरावजी की तबीयत खराब हो गयी । हवामान बदलने के लिए वे पूना के पास घोडनदी के स्थान पर रह गये । उसके बाद वे पूना आये । पूना आने पर उन्हें सातारा की परिस्थिति की जानकारी मिल गयी । शिरवडे स्टेशन जलानेवाले उनके सभी साथीदार पकडे गये । उसी मुकदमें सभी मुलजिमों को अभियुक्तों को सज़ा हुई । यशवंतरावजी ने पुणे शहर और जिले के ग्रामीण भाग में रहकर काम करना तय किया ।

और एकाएक सौ. वेणूताईजी की तबीयत बिगड़ गयी है ऐसा संदेश फलटण से आया । यशवंतरावजी को पारिवारिक जिम्मेदारी महसूस हुई । इसलिए उनकी अस्वस्थता बढ़ गयी । वे टॅक्सी से फलटण आये । मन की द्विधा अवस्था में बीमार वेणूताईजी को धैर्य देते समय वैद्यकीय उपचारों का विचार विनिमय हो रहा था । परंतु तब तक यशवंतरावजी फलटण में आये है यह खबर पुलिस को मिल जाती है और फिर पुलिस आकार यशवंतरावजी को गिरफ्तार करती है ।

फलटण के कारागृह में जाने पर दस महिनों का उनका भूमिगत आंदोलन समाप्त हो जाता है । सौभाग्य से कारागृह में भूमिगत आंदोलन आदि के बारे में विस्तृत जानकारी पूछी नहीं जाती, यह देखकर यशवंतरावजी को आनंद हुआ । वे आठ-दस दिन फलटण, उसके बाद उन्हें सातारा के जेल में भेज दिया ।

सातारा से यशवंतरावजी को कराड ले गये । वहाँ उन पर मुकदमा दायर करने का निर्णय किया गया । यशवंतरावजी ने तांबवे गाँव में जो सभा की थी, उस में उन्होंने जो भाषण दिया था उसके लिए उनपर इलज़ाम लगाया और उन्हें छः महिनों की कड़ी कैद दी गयी । उसके बाद उन्हें येरवडा के जेल में भेज दिया । सजा पूरी होने पर उनकी रिहाई हुई । इ.स. १९४४ में जनवरी महिने में वे कराड वापस आये और उनके भाई गणपतराव भी रिहाई होने के बाद कराड वापस आये थे ।

सलाह-मशविरा जारी था । दरमियान दो सप्ताह बीत गये । वेणूताईजी का संदेश आने पर वे दोनों भाई फलटण गए और प्रतिबंधक स्थानबद्धता के आदेश के अनुसार पुलिस ने उन दोनों को गिरफ्तार किया । उसके बाद उन्हें येरवडा जेल में भेज दिया । वे वहाँ तीन महिने थे । इन तीन महिनों में उनका विशेष पठन नहीं हुआ । कार्यकर्ताओं के सहवास में पठन की अपेक्षा अनुभवों की और विचारों की लेन-देन अच्छी हुई । उनकी तबीयत भी अच्छी नहीं रही । केवल पारिवारिक व्यथा से यशवंतरावजी बहुत व्यथित हुए लगते हैं । वे अपने निवेदन में कहते हैं – 'इन तीन महिनों में मेरी तबीयत अच्छी नहीं रही । मकान की और से गणपतराव की तबीयत का समाचार आता था । डॉक्टर से वे औषध पानी लेते थे और गृहस्थी चलाने का प्रयत्न कर रहे थे । मेरे मन में विचारों का संघर्ष शुरू हुआ था कि मैं मेरे परिवार को कितनी यातना दे रहा हूँ । दादा गये । गणपतराव गंभीर बीमारी से त्रस्त है । सौ. वेणूताई की तबीयत ठीक नहीं है । माँ बिना बोले सब सह रही थी । पर वह दुखी थी । उसने मुझसे बहुत अपेक्षाएँ की होगी । परंतु मैने उसकी कोई भी अपेक्षा पूर्ण नहीं की । मेरे मन में यह जो विचार था वह मैंने मेरे मित्रों से जेल में कह दिया था ।' यशवंतरावजी के विचार सुनकर उन्हें भी बुरा लगा था । वे भी क्या कर सकते थे । पारतंत्र्य था । सबकी अवस्था यशवंतरावजी जैसी थी । एक दूसरे के प्रति सहानुभूति दिखाना यही उनके हाथ में था ।

□ पठन और वैचारिक विकास

यशवंतरावजी को पढने की बड़ी आदत थी । पहले पहली दिनकरराव ज़वलकर ने चलाया हुआ वृत्तपत्र (कैवारी) पढा था । उसके बाद भाऊसाहब कलंबेने यह वृत्तपत्र कराड में प्रकाशित करके चलाया । उस में वे अपना विचार प्रकट करते थे कि – 'बहुजन समाज में जो युवा पीढ़ी है, उन्हें सत्यशोधकीय विचार और संस्कार देने के उद्देश्य से उन्हें नयी पद्धति से शिक्षा देने की आवश्यकता है ।' उसके लिए उन्होंने एक कोठी किराये पर ली और वहाँ उन्होंने 'विजयाश्रम' नाम की संस्था शुरू की थी । यशवंतरावजी के बंधु गणपतरावजी विद्यार्थी की हैसियत से उस आश्रम में रहते थे । उन पर उस आश्रम के संस्कार हुए थे । उनके भाई यशवंतरावजी से बातचीत करते थे । इसलिए उनके मन पर सत्यशोधकीय और ब्राह्मणेतर आंदोलन के संस्कार होते रहते थे ।

दिनकररावजी जवलकर ने एक सभा में भाषण किया था । उस भाषण में उन्होंने ब्राह्मण समाज पर आलोचना की थी । उसी सभा में 'देशाचे दुश्मन' (देश के दुश्मन) पुस्तक बाँटा जा रहा था । उसकी एक प्रत यशवंतरावजी ने प्राप्त की और पढ़ ली । इसलिए वे मन से और विचार से पूर्ण बदल गए ।

यशवंतरावजी सातवी कक्षा में पढ़ रहे थे तब से उन्हें वृत्तपत्र पढने की आदत लगी थी । परंतु उस समय यशवंतरावजी को जो वृत्तपत्र पढ़ने के लिए मिलते थे वे थे – 'विजयी मराठा' और दूसरा 'राष्ट्रवीर' । विजयी मराठा बेलगाँव से प्रसिद्ध होता था । राष्ट्रवीर पूना से प्रसिद्ध होता था । ये दोनो वृत्तपत्र ब्राह्मणेतर आंदोलन का पुरस्कार करनेवाले थे । यशवंतरावजी पूना से प्रसिद्ध होनेवाला 'मजूर' और बम्बई से प्रसिद्ध होनेवाला 'श्रद्धानंद' वृत्तपत्र पढ़ते थे । इसलिए उनके मन पर व्यापक संस्कार होने लगे । वे उस समय पूना का 'स्वराज्य' वृत्तपत्र पढ़ते थे । वे 'हरिजन' भी पढ़ते थे ।

जब उन्होंने तिलक हाइस्कूल में प्रवेश किया तब उनकी पठन की आदत पक्की हुई । वहाँ उन्होंने हरिभाऊ आपटे के उपन्यास पढ़ने की शुरुआत की । जहाँ से पुस्तक मिलती, वहाँ से वे लेते और पढते । उन्हें जो अच्छा लगता था वे उसे पढते थे । श्री केलुसकर द्वारा लिखा गया 'छत्रपती शिवाजी महाराज का चरित्र' यशवंतरावजी ने मन लगाकर पढ़ा । वैसे उन्होंने शिवराम परांजपे कृत 'काल' में प्रसिद्ध होनेवाले 'निबंध' पढ़ने का प्रयत्न किया । केलुसकर की मराठी भाषा सरल और साधी थी । उनकी भाषा यशवंतरावजी की समझ में

आती थी । लेकिन शिवराम पंत की मराठी भाषा कठिन थी । उनकी मराठी संस्कृतमय थी । उन्हें संस्कृत नहीं आती थी । उस में जो सौंदर्य स्थल थे वे उनकी समझ में नहीं आते थे लेकिन विचारों का सूत्र ध्यान में लेकर उन्होंने अपना पठन शुरू रखा ।

इस पठन के बाद यशवंतरावजी के मन पर और विचारों पर अलग संस्कार हुए थे । यशवंतरावजी ने अपने भाई गणपतरावजी से पूछा कि – 'बहुजन समाज को पढना चाहिए, यह तो सच है । लेकिन वह किसलिए? केवल नौकरी के लिए कि देश के लिए विशेष कुछ करने के लिए?' यशवंतरावजी के ये सरल, सीधे प्रश्न थे । इस पर गणपतरावजीने कहा कि – 'केवल ब्राह्मणों का द्वेष किया जाना चाहिए ऐसा आग्रह नहीं है । लेकिन सांस्कृतिक, आर्थिक, सामाजिक क्षेत्र में इन लोगों ने अन्य समाज के लोगों को बहुत बड़ी यंत्रणाएँ दी है । इससे मुक्ति चाहिए कि नहीं?' एक दिन गणपतरावजीने यशवंतरावजी को महात्मा फुलेजी का चरित्र पढ़ने के लिए दिया। शायद यह मराठीमें पहला चरित्र होगा ।

महात्मा फुलेजी का चरित्र पढ़नेपर उन्हें महसूस हुआ कि महात्मा फुलेजी के विचार मूलगामी है और वे कुछ नयी दिशा दिखाते है । किसान समाज का होनेवाला शोषण, दलित समाजपर होनेवाला अन्याय और शिक्षा से वंचित रखा हुआ समाज और स्त्रियों के प्रश्न सुलझाये बिना देश का कार्य नहीं होगा, यही फुलेजी के विचारों का सारांश यशवंतरावजी के मन में अंकित हो गया । लेकिन उसके लिए किसी एक जाति का द्वेष किया जाना चाहिए, यह बात यशवंतरावजी को बिलकुल पसंद नहीं थी । जो समाज पीछे पड़े है उन्हें जागृत करना, उन में एक नवीन विचार निर्माण करना यही एक उत्तम मार्ग है, यही उनका विचार था ।

तिलकजी के संबंध में जो साहित्य था वह साहित्य यशवंतरावजी ने पढ़ लिया । उनके मन पर तिलकजी के व्यक्तिमत्त्व का बड़ा परिणाम हुआ । जाति-जमाती के जो प्रश्न है, उनके बाहर रहकर कुछ राष्ट्रीय स्वरूप के जो प्रश्न हैं, उनके लिए तो कुछ करना चाहिए यही विचार उनके मन में आया । उनके मन में तिलकजी और ज्योतिराव फुलेजी की तुलना हो गयी । उन दोनों के विचारों में यशवंतरावजीको कोई साम्य दिखाई नहीं दिया । इसलिए उनके मन में थोडासा खेद था । फिर भी ये दोनों बड़े व्यक्ति हैं । यशवंतरावजी ने दोनों की तुलना करने का विचार छोड़ दिया । लेकिन दोनों के द्वारा कहे गए

विचार बड़े महत्त्वपूर्ण हैं। तिलकजी ने 'स्वराज्य' का विचार कह दिया। शिक्षा से गरीबों की उन्नति होनी चाहिए और समाज में समानता निर्माण होनी चाहिए, यह विचार महात्मा ज्योतिबा फुलेजीने कहा। ये दोनों विचार भी महत्त्वपूर्ण हैं। इसलिए ये दोनों व्यक्ति भी अपनी-अपनी दृष्टि से बडे है । इस प्रकार यशवंतरावजी का निर्णय हुआ।

कराड में दिवाकर वैद्य का दवाखाना था । यह दवाखाना मानो एक वाचनालय था । वे बम्बई से आनेवाले 'श्रद्धानंद', 'नवाकाल', 'विविध वृत्तपत्र' पढ़ते थे। यशवंतरावजी पूना के 'ज्ञानप्रकाश' और 'केसरी' नियतकालिक पढ़ते थे । वाचनालय की बैठकों में विविध विषयोंपर चर्चा होती थी । वहाँ होनेवाली चर्चाएँ बड़ी बोधप्रद थी। पर ये चर्चाएँ यशवंतरावजी के विचारों से मिलती जुलती नहीं थी।

आगे चलकर माँ ने साखरेबुवा की 'ज्ञानेश्वरी' पढने के लिए यशवंतरावजी से कहा । यशवंतरावजी ने 'ज्ञानेश्वरी' पढी, पर समझने के लिए कठिन । पुरानी भाषा होने के कारण माँ यशवंतरावजी से ज्ञानेश्वरी पढवा लेती थी। इस प्रकार इस पठन से यशवंतरावजी के विचारों का विकास हुआ। आगे चलकर ये विचार यशवंतरावजी के व्यक्तित्व को समृद्ध करते गए ।

और एक बात – एक सभा में दिनकररावजी जवलकर ने एक सभा में भाषण किया था। उसने उस भाषण में लोकमान्य तिलकजी की आलोचना की थी। लोकमान्य तिलकजी तो अंग्रजों के विरुद्ध लड़नेवाले सेनापति थे। ऐसी यशवंतरावजी की भावना हुई थी । इसलिए बड़े व्यक्ति पर आलोचना करनेवाले व्यक्ति अंग्रेजों के मित्र नहीं है क्या? इस प्रकार का शक और विचार यशवंतरावजी के मन में आया। इतनीसी छोटी उम्र में उनके मन में यह विचार आया इसका उन्हें आश्चर्य लगता है ।

आगे वे काँग्रेस के कार्यकर्ता बने, वे काँग्रेस का प्रचार करने लगे। फिर स्वतंत्रता के नेता बने और अनेक शासकीय पदोंपर विराजमान बने। इन पदों पर रहकर उन्होंने अनेक सामाजिक कार्य किये । उसके बाद विदेशमंत्री, रक्षामंत्री और अर्थमंत्री की हैसियत से कार्य करके राष्ट्रीय उन्नति में योगदान दिया और भारत के आधुनिक इतिहास पर नाम अंकित किया।

□ यशवंतरावजी के छंद

यशवंतरावजी अपने भाई के साथ व्यायाम शाला में जाते थे। बीच-बीच

में उनके आग्रह से वे साफा भी बाँधते थे। उन्हें गीतों का और भजनों का बहुत शौक था। परंतु उन्होंने चलने का बहुत व्यायाम किया था। बीच बीच में वे व्यायाम शाला में जाने का भी प्रयत्न करते थे। पर उस में नित्यक्रम नहीं था। परंतु उन्होंने तैरने का खूब व्यायाम किया।

यशवंतरावजी का मकान कोयना नदी के किनारेपर था। स्नान के लिए वे कृष्णा और कोयना नदी पर जाते थे। आगे उन्होंने तैरने में अच्छी प्रगति की। इसका उन्हें बड़ा फायदा भी हुआ।

यशवंतरावजी को नाटक देखने का छंद था। वे लगभग तीन-चार-वर्ष नाटक देखते रहे। नाटकों में जो कुछ भला-बुरा होता है वह भी समझ में आने लगा। नाटकों में काम करनेवाले लोगों की जानपहचान हो गई। उनके साथ यशवंतरावजी के स्नेहसंबंध बढ़ गये। इसलिए गाँव के सब लोक यशवंतरावजी को पहचानने लगे। श्री. औंधकर लिखित 'बेबंदशाही' नाटक उन्होंने दो-तीन बार देखा।

नाटक कंपनी के नाटक वे बड़ी उत्सुकता से देखते थे। 'आनंद-विलास मंडली' एक वर्ष या डेढ वर्ष के बाद कराड आती थी। मास्टर दीनानाथजी मंगेशकर और रघुवीरजी सावरकर इन प्रसिद्ध नटों के नाटक भी कराड में होते थे। यशवंतरावजी ने ये सभी नाटक उत्साह से देखे थे।

किर्लोस्करवाडी में 'माईसाहब' नाम का नाटक हुआ था। इसी नाटक में यशवंतरावजी ने काम किया था।

यशवंतरावजी ने बालगंधर्व और केशवरावजीने दाते इन प्रसिद्ध नटों के नाम सुने थे। पर प्रयत्न करके भी उनका काम देखने को नहीं मिला था। केशवरावजी दाते की महाराष्ट्र कंपनी का नाटक कोल्हापूर आ रहा था। यशवंतरावजी ने उनके 'प्रेमसंन्यास' का समाचार 'नवा काल' वृत्तपत्र में पढा था। इसलिए यशवंतरावजी ने कोल्हापूर जाकर 'प्रेमसंन्यास' नाटक देखा। जयंता की भूमिका में केशवराव दाते ने काम किया था। उनका अभिनय और शब्द उच्चारण की पद्धत यशवंतरावजी को आकर्षक लगी। जिसके लिए वे आये थे, उसका उपयोग हुआ और समाधान भी।

शाला में संमेलन था। इसलिए बर्नार्ड शॉ का 'डॉक्टर डायलेमा' नाटक किया गया। इस नाटक के एक प्रवेश में उन्होंने काम भी किया था। इससे उन्हें बर्नार्ड शॉ के नाम की पहचान हो गयी।

यशवंतरावजी को तमाशा देखने का भी शौक था। तमाशा का यश

लावनी पर और लावनी के साथही नक्काल के हाजिरजबाब पर और चतुर संभाषण शक्ति पर निर्भर रहता है । नक्काल यह प्राणी मराठी लोकनाट्य में विनोदी पुरुष होता है और ये काम करनेवाले कलावंत लोग बहुत सहजस्फूर्त काम करते हैं । उन में उनका बुद्धिचापल्य और संभाषणचातुर्य दिख पडता है ।

यशवंतरावजी ने अपने मित्रों की सहायता से 'शिव छत्रपती मंडल' शुरू किया । श्री. भाऊसाहेब बटाणे की मदद से उन्होंने यह काम शुरू किया । उनके बड़े चिरंजीव शिवाजी बटाणे उनके मंडलके प्रमुख सदस्य के रूप में काम करते थे । बटाणे के मंदिर में हरवर्ष गणेशोत्सव मनाया जाता था । इस उत्सव को कराड में एक प्रतिष्ठा थी । यशवंतरावजी और उनके मित्रों ने उस उत्सव के लिए एक मेला करने की कल्पना की । स्वयं यशवंतरावजी उस मेले में वर्ष-दो वर्ष गीत गाते हुए घूमते फिरते थे । उन्होंने इस मेले के लिए कुछ पद लिखकर देने का प्रयत्न किया था । यह बात उन्हें आज भी याद आती है ।

यह कहने का कारण यही है कि ब्राह्मणेतर आंदोलन के क्षुद्र दृष्टिकोन में से बाहर निकलकर कुछ किया जाना चाहिए, ऐसा उनके मन में जो आकर्षण था, उसे अब कहीं नया कार्यक्षेत्र मिल गया था ।

यशवंतरावजी ने शुरू किया हुआ शिवजयंती उत्सव आगे बहुत वर्षों तक चलता रहा । उत्सव में व्याख्यान, भजनों का आयोजन किया जाता था ।

□ वक्तृत्व स्पर्धा

यशवंतरावजी को तिलक हाइस्कूल में तिलकजी के संबंध में बहुत पढ़ने को मिला । हाइस्कूल में एक अच्छी प्रथा थी कि तिलकजी के विचार और जीवन के संबंध में निबंध स्पर्धा और वक्तृत्व स्पर्धा हर वर्ष ली जाती थी । इन दोनों में भाग लेने की यशवंतरावजी की बड़ी उत्सुकता थी । इसलिए तिलकजी के संबंध में जो भी साहित्य था उन्होंने वह पढ़ डाला ।

तिलक हाइस्कूल की तरह पूना के नूतन मराठी विद्यालय में हर वर्ष वक्तृत्व स्पर्धाएँ होती थी । यशवंतरावजी को उस स्पर्धा में भाग लेने की तीव्र इच्छा थी । १९३१ में पूना में होनेवाली स्पर्धा में यशवंतरावजी ने भाग लिया । पूना आने-जाने का खर्च था । लेकिन श्री. शिवाजीराव बटाणे ने इस काम के लिए सहयोग दिया । वहाँ छात्र को ऐन वक्त पर विषय देकर दस मिनट बोलने के लिए कहा जाता था ।

यशवंतरावजी को 'ग्राम सुधारणा' यह विषय देकर बोलने के लिए कहा

गया । उनका भाषण सुनकर परीक्षक खुश हुए दिखाई दिये । फिर उन्होंने बोलने के लिए यशवंतरावजी को दस मिनट दिये । भाषण होने के बाद सभी ने उनकी प्रशंसा की । उस स्पर्धा में उन्हें पारितोषिक मिला । १९३२ में यशवंतरावजी को सजा हुई । उस समय वह पारितोषिक भी जब्त हुआ – सरकार में जमा हुआ ।

□ यशवंतरावजी का अनेक व्यक्तियों से संपर्क

बचपन से लेकर अन्ततक यशवंतरावजी का अनेक व्यक्तियों से संपर्क आया । उनका संपर्क क्षेत्र बड़ा व्यापक है । उनका राजनैतिक, सामाजिक, शैक्षणिक, साहित्यिक व्यक्तियों से संपर्क आया । उन सबका विवेचन करना संभव नहीं है । इसलिए उनके संपर्क में आये प्रमुख व्यक्तियों का संक्षिप्त परिचय देना उचित है –

यशवंतरावजी के बडे भाई को नौकरी देने के लिए पिताजी के मित्र बेलीफ श्री. शिंगटेजी ने बहुत प्रयत्न किये । उनका नाम कभी भी भुलाया नहीं जा सकता ।

जिस अंग्रेज अधिकारीने भाई को नौकरी दी, उसकी मानवता अवर्णनीय है । यशवंतरावजी के ननिहाल के मकान के मित्र श्री. सखारामजी म्हस्के उनके हितचिंतक थे । भाऊसाहेब कलंबे गुरुजी सत्यशोधकीय विचारों के प्रचारक थे ।

१९२७ के आसपास भास्कररावजी जाधव बम्बई लेजिस्लेटिव्ह कौन्सिल के उम्मीदवार थे । यशवंतरावजी ने उनका प्रचार किया था । जाधवजी चुनकर आये थे ।

हरिभाऊजी लाड यशवंतरावजी के पुराने मित्र थे । वे छोटीसी दुकान चलाते थे । यशवंतरावजी वृत्तपत्र पढ़ने के लिए वहाँ जाते थे ।

श्री. गणपतरावजी ऊर्फ भाऊसाहबजी बटाणे के द्वारा गणेशोत्सव मनाया जाता था । इस उत्सव को बडी प्रतिष्ठा थी । इस उत्सव के लिए बटाणेजी सभी तरह की मदद करते थे ।

श्री. साहेबरावजी कडेपूरकर पहलवान थे और राष्ट्रीय आंदोलन में कार्य करते थे । यशवंतरावजी और उन में मित्रता हो गयी । सातारा जिले में यशवंतरावजी के सभी काम का समर्थन करनेवाला वह उनका सहकारी बन गया, यशवंतरावजी को हमेशा उनकी याद आती है ।

२६ जनवरी १९३० को स्वातंत्र्य दिन मनाने का निश्चय हुआ था। इधर कराड में भी झंडावंदन करने का निश्चय हुआ। झंडावंदन करने के समय यशवंतरावजी ने प्रतिज्ञापत्र तयार किया। हरिभाऊजी के नेतृत्व में यशवंतरावजी और उनके साथी कृष्णा नदी के किनारे पर पहुँचे। वहाँ झंडावंदन किया। स्वातंत्र्य के लिए प्रयत्न करना चाहिए ऐसी उन्होंने शपथ ली।

२६ जनवरी की सुबह यशवंतरावजी ने कभी भी नहीं भूलेंगे। राष्ट्रीय काँग्रेस के तिरंगे झंडे के नीचे यशवंतरावजी ने प्रतिज्ञा वाचन किया। इसलिए उनके मन की शांति बढ़ गयी। उनका राजनैतिक जीवन सच्चे अर्थों में शुरू हुआ।

ढेढ़ (हरिजन) समाज में यशवंतरावजी के एक मित्र थे। उनका नाम था उथलेजी। वे हमेशा यशवंतरावजी के साथ रहते थे। वे यशवंतरावजी जैसा बोलते थे वैसा ही करते थे। पर वे इस काम के लिए यशवंतरावजी को कभी भी उनके समाज में नहीं ले गये। यशवंतरावजी ने उनसे एक बार पूछा –

'ऐसा क्यों?'

उन्होंने उत्तर दिया,

'हमारे समाज का जो दुख है, वह तुम जैसा समझते हो, उसकी अपेक्षा अलग है। महात्मा गांधीजी, आंबेडकरजी को अपने साथ क्यों नहीं ले जाते, उन्होंने यह किया तो सब बदल जायेगा।'

लेकिन ये सब प्रश्न हमारी सीमा के बाहर के थे।

काकासाहेब गाडगीलजी भाषण के लिए कराड आये थे। उस समय उन्होंने उन्हें प्रथम देखा। काकासाहेबजी ने ब्रिटिश साम्राज्यशाही की प्रखर आलोचना की थी। उनका भाषण आवेशपूर्ण था। उनके शैलीदार भाषण का लोगों पर परिणाम हुआ। तब उनकी गाडगीलजी से पहचान हो गयी।

यशवंतरावजी के मत से तर्कतीर्थजी के भाषण का वैचारिक प्रभाव सामान्य मनुष्यों पर और विशेषत: युवकों पर अधिक पडा। उन्होंने कहा कि – 'तुम कृष्णा के किनारे पर जहाँ बैठे हो, वह जैसे गर्म हुआ है, वैसे तुम्हारी बुद्धि और मन भी गर्म होना चाहिए।' तर्कतीर्थ शास्त्रीजी ने इसी एक वाक्य से सभा को जीत लिया।

यशवंतरावजी के आंदोलन के दो-तीन केंद्र बन गये थे। ये गाँव हैं मसूर, इंदोली और तांबवे। मसूर के राघूजी आण्णा लिमये, डॉ. फाटकजी, विष्णुमास्तरजी निगडीकर, सीतारामपंतजी गरुड, इंदोली के दिनकररावजी निकम और उनके

साथे ये प्रमुख कार्यकर्ता थे। तांबवे के काशिनाथपंतजी देशमुख यशवंतरावजी के मित्र थे। देशमुखजी ने अपने आसपास कार्यकर्ताओं का बडा समूह खडा कर दिया था। और उन्होंने जंगल-सत्याग्रह का बडा कार्यक्रम भी किया था। इसलिए वहाँ के कुछ लोग जेल में गये थे।

इस आंदोलन में जो संघटित विद्रोह हुआ था वह बिलाशी में। वह वारणा नदी का प्रसिद्ध भाग है। श्री. बाबूरावजी चरणकर और गणपतरावजी पाटील के नेतृत्व में लगभग चालीस गाँव में पाटील लोगों ने सरकारी नौकरी के इस्तीफे दिये थे। जंगल सत्याग्रह बडे पैमाने पर हुआ और एक अर्थ से ब्रिटिश सरकार का अंमल समाप्त हुआ। ये सब यशवंतरावजी के संगी साथी थे।

रत्नागिरी में यशवंतरावजी की सावरकरजीसे भेट हुई थी।

सातारा के 'समर्थ' साप्ताहिक के संपादक श्री. अनंतरावजी कुलकर्णी और यशवंतरावजी दोनों एक ही शाला में और एक ही वर्ग में पढ़ते थे। वे यशवंतरावजी के राजनैतिक आंदोलन को समर्थन देते थे। उन्होंने यशवंतरावजी को संस्कृत भी पढ़ाया।

रावसाहब गोगटेजी और यशवंतरावजी दोनों भी मित्र थे। दोनों भी तिलक हाइस्कूल में पढ़ते थे और दोनों एकही बेंच पर बैठते थे। गोगटेजी की पत्नी उषाजी और यशवंतरावजी की पत्नी सौ. वेणूताईजी इन दोनों में मित्रता थी।

माधवराव अणेजी, माधवराव बागलजी, किसनवीरजी, आत्माराम पाटीलजी, पांडुरंगजी मास्तर, गौरीहर सिंहासनेजी ये सभी यशवंतरावजी के साथी थे। यशवंतरावजी को स्वातंत्र्य आंदोलन में इन लोगों की बड़ी मदद हुई है।

तात्या डोईफोडेजी और यशवंतरावजी झंडा लगाने के कारण दोनों को अठहरा महिनों की सजा हुई। आचार्य भागवतजी, ह. रा. महाजनीजी उनके स्नेही थे। मानवेंद्ररायजी के विचारों की ओर यशवंतरावजी आकर्षित हुए थे। परंतु उनके विचार यशवंतरावजी को पसंद नहीं आये इसलिए वे उनसे दूर हो गये।

समाजवादी विचारों के समर्थक श्री. एस. एम. जोशीजी और भुस्कुटेजी के साथ भी उनका स्नेह था।

यशवंतरावजी के मित्र आत्मारामजी बापू पाटील रायसाहेब के विचारों को समर्थन देने की मन:स्थिति में थे। और यशवंतरावजी काँग्रेस के विचारों के समर्थक बन गये। फिर दोनों के मार्ग अलग हो गये।

यशवंतरावजी पूना में लॉ कॉलेज में पढ़ते थे। उन्हें पढाने के लिए पूना के वकील श्री. ल. ब. भोपटकरजी थे। वे प्रसिद्ध वकील थे। वे यशवंतरावजी को टॉर्ट विषय पढ़ाते थे। उनका भाषा पर प्रभुत्व था और वे उत्तम शिक्षक थे। पूना के कम्युनिस्ट नेता श्री. विष्णुपंतजी चितले के साथ यशवंतरावजी का स्नेह था। श्री. चितलेजी मार्क्सवादी विचारधारा के समर्थक थे।

चंद्रोजी पाटील यशवंतरावजी के स्नेही थे। वे सांगली जिले में कामेरी के थे। उनकी सहायता से कामेरी के के. डी. उर्फ केशवरावजी पाटील से यशवंतरावजी की पहचान हो गयी। उनकी पहचान यशवंतरावजी की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण थी। आगे लगभग सात-आठ वर्ष उन से यशवंतरावजी का प्रगाढ स्नेह था और राजनीति में उन्होंने यशवंतरावजी को बहुत सहयोग दिया।

तासगाव के श्री. विठ्ठलरावजी पागे के साथ भी यशवंतरावजी के संबंध थे। वे स्वातंत्र्यसैनिक थे। दोनों के विचार एकसाथ जुड़ गये थे। वे पहले से निष्ठावान गांधीवादीजी थे। आगे उन्होंने तात्त्विक विचार स्वीकार किया। उन्होंने कहा कि महात्मा गांधी बड़े होशियार सेनापति है। वे काल और साधनों का उचित समय पर चुनाव करेंगे और वे अपने पीछे आने का संदेश देंगे। तब धैर्य न छोड़ते हुए विश्वास से बर्ताव करना चाहिए।

श्री. विठ्ठलरावजी पागे, स्वामी रामानंद भारतीजी, भाऊसाहेब सोमणजी, श्री. वसंतदादाजी पाटील, गौरीहरजी सिंहासने और व्यंकटरावजी पवार ऐसे अनेक लोगों ने वैयक्तिक सत्याग्रह में भाग लिया। ये सब यशवंतरावजी के स्नेही थे। श्री. व्यंकटरावजी पवार ये जिला काँग्रेस के अध्यक्ष थे। वे जेल में गये थे। उनके बाद यशवंतरावजी जिला काँग्रेस के अध्यक्ष बन गये।

एक बार हेडगेवारजी व्याख्यान देने के लिए कराड आये थे। उनके विचार सुनकर यशवंतरावजी को लगा कि इन लोगों को एक विशिष्ट वर्ग के लोगों की संघटना बनानी है। तब से वे उन से दूर रहने लगे।

सत्याग्रह के दिन वालचंद गांधीजी ने रविवार चौक में सभा की व्यवस्था कर रखी थी। उस सभा में यशवंतरावजी ने भाषण दिया। पर उनके भाषण में कोई आक्षेपार्ह नहीं था। इसलिए उन्हें गिरफ्तार नहीं किया। उनके मित्र वालचंदजी उठे और उन्होंने युद्धविरोधी घोषणाएँ दी। इसके बाद तुरंत पुलिस आयी और उन्होंने वालचंद शेठजी को गिरफ्तार किया।

१९३७ में जिला लोकल बोर्ड का चुनाव हुआ। उस चुनाव में धुलाप्पा आण्णा नवलेजी, सखाराम बाजी रेठरेकरजी और गौरीहर सिंहासनेजी ये

यशवंतरावजी के मित्र चुनाव जीत गये थे । यशवंतरावजी इन सदस्यों के सलाहकार बने । इन सबने बाबासाहेब शिंदेजी को जिला लोकल बोर्ड का अध्यक्ष बनाने की बात तय की और वे अध्यक्ष बन गये । तबसे शिंदेजी का यशवंतरावजी से संबंध आया और धीरे धीरे यह संबंध बढ़ गया । उस संबंध का रूपान्तर प्रगाढ़ स्नेह में हुआ ।

इससे पहले कपूरजी सातारा जिले के सर्वाधिकारी थे । पर चुनाव में हार जाने पर उनकी सत्ता समाप्त हुई ।

१९४१ में जो चुनाव हुआ उस समय कूपरजी के सहयोगी अण्णासाहेब कल्याणीजी और सरदार पाटणकरजी ये दोनों भी कूपरजी से अलग हुए । फिर अध्यक्षपद के लिए दो उम्मीदवार सामने आये । एक आनंदरावजी चव्हाण और दूसरे बालासाहेब देसाईजी । इन दोनों में से आनंदरावजी चव्हाण यशवंतरावजी के विद्यार्थी अवस्था से मित्र थे । आनंदरावजी और यशवंतरावजी इन दोनों ने इंटर और बी.ए. की परीक्षा के समय एकत्र अभ्यास किया था । आनंदरावजी और बालासाहेबजी दोनों का तहसील एक ही था । दोनों की शिक्षा कोल्हापूर में हुई थी । उनके रिश्ते कोल्हापूर परिवार से थे ।

फिर अध्यक्ष पद का चुनाव हुआ । हमारे काँग्रेस कार्यकर्ताओं ने बालासाहेब देसाईजी को सहयोग किया । वे चुनाव जीत गये । बालासाहबजी को यह बात महसूस हुई । इसी कारण आगे दोनों का सहयोग बढ़ता गया और सातारा जिले में उनका और यशवंतरावजी का एक गुट माना जाने लगा । इस प्रसंग में यशवंतरावजी ने आनंदरावजी चव्हाण को दुख दिया, इस बात का यशवंतरावजी को भी बडा दुख हुआ ।

बालासाहेबजी और आनंदरावजी दोनों भी महत्त्व के आदमी थे । भविष्यकालीन राजनीतिमें दोनों की भी आवश्यकता थी । जो होना था, वह हो गया । सत्ता की राजनीति में कभी कभी ऐसा होता है । उधर सातारा जिले में सभी प्रमुख कार्यकर्ता जेल में थे और ऐसी हालत में यशवंतरावजी ने स्थानिक संस्था अपने कब्जे में ली थी । इसलिए किसनवीरजी, के. डी. पाटीलजी और यशवंतरावजी ने यह जो कार्य किया था वह प्रशंसनीय था ।

१९४१ साल के जिला बोर्ड के चुनाव में जो कुछ नये मनुष्य यशवंतरावजी के निकट के साथी बने उस में से यशवंतरावजी का श्री. यशवंतरावजी पार्लेकरजी के साथ घनिष्ठ प्रेम हुआ था । १९४१ में यशवंतरावजी पार्लेकर और ये दोनों मित्र हो गये । आगे यशवंतरावजी को सभी कार्यों में उन्होंने

सहायता की ।

हरिभाऊजी जेल से बाहर आने पर यशवंतरावजी उनके साथी हुए । इस समय यशवंतरावजी के जीवन में एक महत्त्वपूर्ण घटना घटी थी । इन सब चर्चाओं और आंदोलनों के बारे में चर्चाएँ चल रही थी । ये सब समझने के लिए यशवंतरावजी मग्न हुए थे । लेकिन उनकी माँ ने यशवंतरावजी को विवाह करने के लिए आग्रह किया ।

उन्होंने बार बार आग्रह किया । विवाह प्रसंग में माँ की विजय हुई और मैं विवाह के लिए तैयार हुआ । फलटणनिवासी स्व. रघुनाथ मोरेजी की कन्या वेणूताई के स्थल का पैगाम यशवंतरावजी के लिए आया था ।

यशवंतरावजी ने कहा था कि यह लडकी सातारा आयेगी तो मैं उसे देख लूंगा । मई महिने के प्रारंभ में तय किये समय पर यशवंतरावजी ने लडकी देखी ।

वधु पसंदगी का यशवंतरावजी का एक दृष्टिकोन था । यशवंतरावजी के घर में और विशेषकर माँ से मिलती-जुलती रहेगी ऐसी वधु चाहिए ऐसा उनका विचार था । स्व. रघुनाथरावजी फलटण के होते हुए उनका संपूर्ण परिवार बम्बई में रहता था । एक वर्ष पहले उनका निधन हुआ था । बडोदा के राजघराणे के निजी खाते में वे महत्त्व के गृहस्थ थे । मई महिने के प्रारंभ में तय किये स्थानपर यशवंतरावजी ने लडकी देखी ।

स्व. रघुनाथरावजी मोरे की फलटण में खेती थी । वे वर्ष में एक बार फलटण आते थे । वे दो महिने फलटण में रहते थे । खानदानी लड़की को अच्छे संस्कार मिले, इसलिए वे चिंता करते थे ।

शिक्षित, पर संयुक्त परिवार में दिल लगाकर काम करेगी और परिवार में सभी सदस्यों के साथ प्रेम से बर्ताव करेगी, ऐसी वधु उन्हें चाहिए । सातारा में यादो गोपाल उनके रिश्तेदारों के घर में यशवंतरावजी ने वेणूताईजी को देखा । कुछ प्रश्नोत्तरे हुई ।

उस समय यशवंतरावजी ने कहा कि – 'मैं वकील हूँ, फिर मैं राजनैतिक कार्यकर्ता हूँ' यह बात मैंने स्पष्ट कर दी । मेरी बात सुनने पर मुझे विलक्षण सौम्य प्रसन्नता दिखाई दी । दीये के समान चमकदार बड़ी आँखे देखकर मेरे मन ने अनुमति दी ।

कराड वापस जाकर यशवंतरावजी ने अपनी अनुमति अपनी माँ से कह दी । मई महिने के प्रारंभ में ये सब हुआ । और २ जून १९४२ को उनका

सौ. वेणूताईजी के साथ विवाह संपन्न हुआ ।

आज जब मैं पीछे मुडकर देखता हूँ, तब एक तरफ से जन आंदोलन की तरफ से अपना मन तैयार करनेवाले यशवंतरावजी, और यह जन आंदोलन देहलीज पर आते समय यशवंतरावजी विवाह के लिए कैसे खडे रहे, यह विचार कभी कभी उनके मन में रहता है, परंतु निर्णय हुआ, यह सच है । और उसमें से उनका अगला जीवन निर्माण होता रहा । तर्क और जीवन हमेशा हाथ में हाथ डालकर चलते है, यह सच नहीं है यही उसका अर्थ है ।

और एक दृष्टि से जन आंदोलन का अगला तूफान देखना था । उसके लिए आवश्यक वह साथी – यशवंतरावजी को मिलनेवाली थी । उसका यह एक संयोग था अथवा अर्थ था, ऐसे कहा जाय तो चलेगा ।

यशवंतरावजी के विवाह के लिए हजारों कार्यकर्ता बड़े आनंद से और प्रेम से एकत्र हो गये थे । विवाह के लिए स्वामी रामानंद भारतीजी भी उपस्थित थे । विवाह के लिए उन्होंने भाषण भी दिया । उन्होंने भाषण में कहा –

'यह जन आंदोलन बडा सूचक है ।'

यशवंतरावजी का जो विवाह हुआ, उस में जो भीड थी, उसका वर्णन करना असंभव है । पर इतना निश्चित है कि इतना बडा विवाह कराड में पहले कभी नहीं हुआ था ।

श्री. के. डी. पाटीलजी यशवंतरावजी के स्नेही थे । लेकिन उन्हें इस्लामपूर में बडे प्रसिद्ध वकील श्री. रानडेजी का सहयोग मिलता था । श्री. के. डी.जी ने श्री. रानडेजी के साथ मेरा परिचय कर दिया था । वे प्रवृत्ति से धीर गंभीर थे । कोर्ट के काम में हमेशा यश मिलता रहता था ।

१९४२ में कराड में दक्षिण महाराष्ट्र साहित्य संमेलन बडे उत्साह से संपन्न हुआ । कवि बालकृष्णजी, पुं. पा. गोखलेजी, पंडित सप्रेजी, शंकरराव करंबलेकरजी, कृष्णराव सरडेजी आदि साहित्यिक उपस्थित थे । कराड के संमेलन में यशवंतरावजी ने क्रियाशील होकर भाग लिया था । इस संमेलन में दो परिसंवाद आयोजित किये थे । श्री. कृ. पां. कुलकर्णीजी पहले परिसंवाद के अध्यक्ष थे । दुसरे परिसंवाद के अध्यक्ष थे यशवंतरावजी चव्हाण । उनका व्याख्यान का विषय था – 'बहुजन समाज और साहित्य' । दोनों परिसंवाद बडे सुंदर हुए । यशवंतरावजी का अध्यक्षीय समापन का भाषण व्यासंगपूर्ण था । यशवंतरावजी का यह भाषण श्री. कृ. पां. कुलकर्णीजी को बहुत पसंद आया । उन्होंने यशवंतरावजी को यह बताया भी । उसके बाद यशवंतरावजी कृ. पां.

कुलकर्णीजी का आत्मचरित्र 'कृष्णाकाठची माती' पढ रहे थे । उन्होंने अपने आत्मचरित्र में यशवंतरावजी के परिसंवाद में किए भाषण का गौरवपूर्ण उल्लेख किया था ।

विश्वनाथ उर्फ तात्यासाहेब कोरेजी यह एक उत्कृष्ट सहयोगी कार्यकर्ता थे । उनका और यशवंतरावजी का जीवनभर संबंध रहा ।

१९४२ के आंदोलन में श्री. शांतारामजी इनामदार ने यशवंतरावजी को संपूर्ण सहयोग दिया । अदालत का समय समाप्त होने पर दोनों में स्वातंत्र्य की चर्चा होती थी ।

७ अगस्त १९४२ का बम्बई में वालिया टँक पर अखिल भारतीय काँग्रेस कमिटी की ऐतिहासिक बैठक हुई । इस बैठक में पंडित जवाहरलालजी नेहरूने 'भारत छोडो' का प्रस्ताव रख दिया । सर्व सम्मति से प्रस्ताव पारित हुआ । उन्होंने प्रस्ताव का स्पष्टीकरण करते हुए कहा कि – 'हमारा यह प्रस्ताव किसी को धमकी नहीं है । यह हमारी शत्रुता की भावना नहीं ।'

भारत छोडो का अर्थ पूछने के लिए यशवंतरावजी गांधीजी के पास गये । गांधीजी ने इसका अर्थ स्पष्ट करते हुए कहा – 'हम ब्रिटिशों को हिंदुस्थान से चले जाओ, ऐसा जो कहते हैं, इसका अर्थ अँग्रेज मनुष्य को तुरन्त हिंदुस्तान छोडना चाहिए, ऐसा नहीं है । फिर भी वे हिंदुस्तान में रह सकते है । मेरा कहना इतना ही है कि ब्रिटिश तुरंत अपनी सत्ता का त्याग करे । हिंदुस्तान में जो राज्यकर्ता अंग्रेज लोग है, वे हिंदुस्तान में मित्र के रूप मे रह सकते है ।

अधिवेशन समाप्त होने पर यशवंतरावजी वापस आ गये । फिर यशवंतरावजी वेणूताईजी को पत्र लिखकर संपूर्ण परिस्थिति की कल्पना दी । कहा कि – 'मैं एक तूफान में प्रवेश कर रहा हूँ । मैंने क्षमा मांगी । उसे क्या लगा होगा यह मैंने पूछा नहीं ।'

उधर रोड के पास थोडे अंतर पर मेरे स्नेही श्री. शंकररावजी बेलापुरे मेरी राह देखते हुए खडे थे । वे अच्छी तरह मोटर साइकिल चलाते थे । 'मैं आया हूँ' का इशारा करते ही वे मोटर साइकिल लेकर मेरे पास आ गये । उन्होंने मुझसे कहा – 'बैठो पीछे, चलेंगे हम ।'

यहाँ से यशवंतरावजी की धुमक्कडी की शुरुआत थी ।

२४ अगस्त को कराड तहसीलपर मोर्चा लेने का निश्चय हुआ । इस मोर्चा का नेतृत्व कराड तहसील में काँग्रेस के प्रमुख बालासाहेब पाटील उंडालकरजी करेंगे । श्री. शांतारामजी बापू, कासेगावकरजी वैद्य, सदाशिवरावजी पेंढारकर

और युवक पीढी में नये लड़कों की एक सेना कराड शहर में खडी रही । इसका नेतृत्व महादेवजी जाधव ने किया । बहुत भीड एकत्र हुई थी । कुछ लोग तहसील कचहरी के मैदान में तिरंगा झंडा लेकर गये । पुलिस ने उंडालकरजी को गिरफ्तार किया । इसके साथ अनेक लोगों को गिरफ्तार किया । किसी तरह का क्यो न हो, अपनी विजय हुई है इसी भावना से लोग अपने अपने गाँव गये । उन्हे कोई परवाह नहीं थी ।

१९४३ के जनवरी में यशवंतरावजी के दिन ऐसे ही चले जा रहे थे ।

शिरवडे स्टेशन के अग्निकांड के मुकदमे में प्राय: सभी लोग पकडे गये थे । श्री. सदाशिवजी पेंढारकर और उनके साथियों पर मुकदमे शुरू थे । इन अभियुक्तों में यशवंतरावजी का भांजा बाबूरावजी कोतवाल भी था । इन सभी को सजा हुई । इन सभी लोगों ने यंत्रणाएँ सहन की । वह भी यशवंतरावजी के लिये और अपनी राष्ट्रनिष्ठा के लिए । सजाएँ होने पर भी ये नहीं डरे थे । विशेषकर श्री. आत्मारामजी बापू जाधव, बाबूरावजी कोतवाल, बाबूरावजी काले मालदणकर को पुलिसों ने बहुत यंत्रणाएँ दी । उनकी कहानियाँ सुनकर यशवंतरावजी के शरीरपर रोंगटे खड़े हो गये थे ।

□ जीवन के कुछ महत्त्वपूर्ण प्रसंग

यशवंतरावजी का व्यक्तित्व और कर्तृत्व इतना बडा है कि उनके जीवन में अनेक सुख-दुख के प्रसंग आये । उन सभी का उल्लेख करना असंभव है । लेकिन जो महत्त्वपूर्ण प्रसंग है, उनका उल्लेख करना मैं उचित समझता हूँ ।

□ मैं यशवंतरावजी चव्हाण हो जाऊँगा ।

यशवंतरावजी जब पढते थे तब उनकी शाला में श्री. शेणोलीकर नाम के शिक्षक थे । समयपर व्यवस्थित तथा अच्छे काम करनेवाले शिक्षक के रूप में उनकी ख्याति थी । उन्हें पढाने का और क्रिकेट का शौक था ।

उन्होंने एक बार यशवंतरावजी की कक्षा में लडकों से पूछा,

'तुम्हें हर एक को क्या होना है, वह तुम एक कागज की चिठ्ठी पर लिख कर दो ।'

हर एक विद्यार्थीने अपने सामने आदर्श होनेवाले एक एक पुरुष का नाम लिखकर दिया । यशवंतरावजी ने अपने मन में विचार किया कि किसी तरह बडे पुरुष का नाम लिखकर देना अर्थात स्वयं को धोखा देना है । बडे व्यक्ति

अपने कर्तृत्व से बडे हुए है। उनके समान हम भी हो जाये, यह विचार तो अच्छा है। लेकिन वैसा निर्णय अवास्तव। इसलिए मैंने मेरी चिठ्ठीपर लिखा–

'मैं यशवंतरावजी चव्हाण हो जाऊँगा।'

शिक्षक ने सभी लडकों की चिठ्ठीयाँ देखी और मेरी चिठ्ठी देखकर वे मेरे पास आये और कहा –

'अरे, तू तो अच्छा अहंकारी दिखता है। तू सार्वजनिक काम में भाग लेता है, यह तो अच्छा है। लेकिन तुम्हें तो कम से कम देश में बडे मनुष्यों का आदर्श अपनी आँखों के सामने रखना चाहिए।'

यशवंतरावजी ने कहा – 'आपका कहना तो सही है। लेकिन मुझे जो लगा, वह मैंने लिख दिया।'

मेरी दृष्टि से यह विषय कक्षा में ही समाप्त हुआ। लेकिन उन्होंने टीचर्स रूम में जाकर शिक्षक बंधुओं से इस बात की चर्चा की होगी। क्योंकि पाठक सर ने मुझे पूछा। वे हमारे मुख्याध्यापक थे। मैंने उनसे सच्ची बात कहीं। तब उन्होंने मुझसे कहा –

'इस में अनुचित क्या है? अपना व्यक्तिमत्त्व बढाने का प्रयत्न करने की तुम्हारी इच्छा है, ऐसा उसका अर्थ है, और वह उचित भी है। शेणोलीकरजीने तुम्हें कुछ कहा होगा, तो उसकी ओर ध्यान मत दो।'

□ झंडा फहराने का प्रसंग

यशवंतरावजी और उनके मित्रों ने झंडा फहराने का निर्णय लिया। दूसरे दिन सुबह आठ बजे यशवंतरावजी और उनके मित्र हाइस्कूल के मैदान में जो नीम का पेड है उसके आसपास इकठ्ठा हो गये। यशवंतरावजी ने पेड़ पर चढकर झंडा फहराया। फिर सबने ध्वज-वंदन करके झंडे को सलामी दी। यशवंतरावजी और उनके मित्रों ने 'वंदे मातरम्' की घोषणाएँ दी और राष्ट्रगीत होने के बाद सब विद्यार्थी अपने-अपने घर गए। परंतु शाला की जाँच के लिए आये हुए एज्युकेशनल इन्स्पेक्टर सामनेवाले बहुलेकरजी के बंगले में मुक़ाम के लिए ठहरे थे। उन्होंने यशवंतरावजी का झंडा वंदन का कार्यक्रम देखा था। यह कार्यक्रम देखने के बाद उन्होंने प्रधान अध्यापक से पूछताछ शुरू की।

इधर पांडू तात्या डोईफोडेजी को पुलिस ने गिरफ्तार किया। दूसरे दिन यशवंतरावजी ११ बजे हाइस्कूल में गए। हाइस्कूल शुरू हुआ और यशवंतजी अपनी कक्षा में बैठे। हाइस्कूल की तासिका शुरू थी। पर यशवंतरावजी का

उस में ध्यान नहीं था। हाईस्कूल की तासिका समाप्त होने से पहले मुख्याध्यापक एक पुलिस अधिकारी को लेकर यशवंतरावजी की कक्षा में आए। उन्होंने यशवंतरावजी को बाहर बुलाकर झंडावंदन के कार्यक्रम के बारे में पूछा –

यशवंतराव ने कहा – 'हाँ, मैंने यह सब किया और ऐसा करते रहना मेरा निश्चय है।'

पुलिस अधिकारीने मुख्याध्यापक से कहा,

'मैं इस विद्यार्थी को गिरफ्तार करता हूँ और ले जाता हूँ। उसके अभिभावकों को सूचना दो।'

और इस प्रकार यशवंतरावजी की पहली शास्त्रशुद्ध गिरफ्तारी हुई।

पूरे दिनभर पुलिस-कचहरी में यशवंतरावजी को बिठाकर रखा। वे बीच बीच में यशवंतरावजी के पास आते और उनसे कुछ जानकारी मिलती है कि नहीं, इसकी पूछताछ करते। लेकिन यशवंतरावजी कुछ भी नहीं कहते थे। दिनभर प्रयत्न करनेपर भी यशवंतरावजी की ओर से कुछ अधिक जानकारी नहीं मिलती, यह देखने के बाद रात होते ही उन्होंने यशवंतरावजी को जेल की एक कोठरी में ढकेल दिया।

यशवंतरावजी के घर के लोगों को यह खबर मिली थी। पर वे इस संबंध में कुछ नहीं कर सकते थे।

कुछ दिन चले जाने के बाद एक दिन यशवंतरावजी और तात्या डोईफोडेजी इन दोनों को मॅजिस्ट्रेट के आगे खड़ा कर दिया। उन्होंने उन पर लगाये गए इलज़ाम पढ़कर उनको सुनाये दिए। यशवंतरावजी ने अपने ऊपर लगाए इलजाम स्वीकार किये। फिर मॅजिस्ट्रेट का काम आसान हो गया। उसने तुरंत यशवंतरावजी को अठारह महिनों की सख्त कैद की सजा फरमायी और मुकदमे का काम समाप्त हुआ।

एक मिनट के पहले यशवंतरावजी कच्चे कैदी थे और अब पक्के कैदी बन गये। उस उम्र में अठराह महीने घर से और गाँव से दूर रहने की कल्पना यशवंतरावजी को थोडी-सी अस्वस्थ करनेवाली लगी।

सजा के दूसरे दिन माँ और घर के सब लोक यशवंतरावजी से मिलने के लिए आये। उनके साथ उनकी मराठी शाला में के एक पुराने शिक्षक भी आये थे। पुलिस ने यशवंतरावजी को कोठरी से बाहर निकाला और उनके पहरे में उन्हें फौजदार के कार्यालय की ओर ले गये। फौजदार की उपस्थिति में माँ की भेंट हुई। यशवंतरावजी को देखते ही माँ की आँखों में आँसू आये।

यशवंतरावजी उम्र से छोटे, इसी उम्र में सजा, वह भी दीर्घ अवधि की । इसलिए माँ का रोना स्वाभाविक था । शिक्षक घर के लोगों को दिलासा दे रहे थे । बीच में ही उन्होंने यशवंतरावजी से कहा –

'फौजदार साहब दयालु है । क्षमा मांगी तो छोड देंगे ।'

'मास्तरजी, क्या बोलते है आप? क्षमा माँगना! मुआफी मांगने का कोई एक कारण नहीं । तबीयत को संभालो ।'

'भगवान अपने पीछे हैं ।' माँ ने यह बात कहीं और उठकर चली गयी ।

यशवंतरावजी और माँ की भेंट समाप्त हुई ।

माँ के इस स्वाभिमानी गुण की धरोहर अपने हृदय में सुरक्षित रखकर यशवंतरावजी अपनी कोठरी में वापस गये । वे अपने मन से निश्चिंत हो गये ।

यशवंतरावजी ने कहा था कि – 'आज जब यह प्रसंग याद आता है, तब माँ का यह बडप्पन मुझे कितना उदात्त मोड़ देकर गया, यह मुझे महसूस होता है ।'

जिन्दगी में बहुत वर्ष दुख की साथ करने पर भी दिलासा देना, दिलदार रहना यह ईश्वर की देन होती है ।

यशवंतरावजी कहते हैं कि – 'मेरी माँ का जीवन हमेशा दीपक की ज्योति के समान लगता है । दीपक जलता है । उसके प्रकाश में मनुष्य विचरते हैं, घूमते हैं । लेकिन लोगों को मेरा उपयोग होता है, यह उस ज्योति को, उस प्रकाश को मालूम नहीं होता । उस दीपक ज्योति का जलना मेरी माँ का जलना है ।'

यशवंतरावजी कहते हैं – 'पेड़ पर झंडा फहराने के कारण मुझे सजा हुई ।' ऐसे अनेक प्रसंग आगे मेरे जीवन में आये । दुख के प्रसंग आये, वैसे सुख के भी प्रसंग आये । हर प्रसंग के समय मेरी माँ एक ही वाक्य बोलती रहती थी कि – 'ईश्वर अपने पीछे है ।' यशवंतरावजी के जीवन की कठिन सफर में उन्हें ईश्वर अपने पीछे है का अनुभव आता रहा ।

ऐसा पुत्र-प्रेम और मातृभक्ति अन्यत्र दुर्लभ है ।

□ सौ. वेणूताई की गिरफ्तारी ।

१५ जनवरी को यशवंतरावजी को कराड से संदेश आया कि १४ जनवरी को अर्थात संक्रांति के दिन कराड पुलिस ने उनकी पत्नी वेणूताईजी को गिरफ्तार कर कराड के जेल में रखा है । पुलिस वहाँ तक जायेगी ऐसी

यशवंतरावजी की अपेक्षा नहीं थी। वह भी उसके विवाह के बाद पहले संक्रांति के दिन उसे इस प्रकार जेल में जाना पडा, यह बात उन्हे अच्छी नहीं लगी। इस बात का उसकी तबीयत पर और मन:स्थितिपर क्या परिणाम होगा ? यशवंतरावजी को इस बात की चिंता लगी हुई थी। यशवंतरावजी के परिवार को आंदोलन का अनुभव था। लेकिन वह जिस घर में से यशवंतरावजी के घर में आयी थी, वह घर यशवंतरावजी के घर की अपेक्षा अधिक सुस्थिति में था। उसके पिताजी अभी अभी चल बसे थे। वे बडोदा महाराजा के निजी काम करते थे। उनके विश्वासपात्र गृहस्थ थे। तब उनकी रहन-सहन और जीवन पद्धति उच्च दर्जे की थी। इस पद्धति का विचार करते हुए विवाह के बाद उसे तुरंत जेल में जाना पडा, यह बात मानसिक यंत्रणा देनेवाली थी, ऐसे कुछ विचार यशवंतरावजी के मन में आ गये। लेकिन यशवंतरावजी ने स्वयं को समझाया कि प्रत्यक्ष बलिदान करने का काम लोग आंदोलन में करते हैं, तो इस इतनीसी मामूली बात का अपने मनपर बोझ क्यों। इसलिए यशवंतरावजी ने इस बोझ को दूर कर दिया।

सौ. वेणूताईजी को पुलिस ने लगभग छ: सप्ताह कराड और इस्लामपूर जेल में रखा था।

आंदोलन समाप्त होनेपर मैंने जब उसे पूछा –

'पुलिसने तुम्हारे साथ कैसा बर्ताव किया?'

तब उसने कहा –

'पुलिस जैसे बर्ताव करती है, वैसा बर्ताव किया।'

जब वे पूछताछ के प्रश्न पूछते थे, तब प्रश्न पूछने की पद्धति में उद्धता थी। पर शेष कुछ परेशानी नहीं हुई। जेल का अन्न घर के अन्न जैसा नहीं था, इसलिए उसे कुछ थोडा बहुत कष्ट हुआ होगा।

इस पद्धति से उनके परिवार पर भूमिगत आंदोलन का आघात धीरे-धीरे पड रहा था। श्री. गणपतरावजी विजापूर जेल में थे। सौ. वेणूताई कराड या इस्लामपूर जेल में थी। और यशवंतरावजी ऐसे ही कहीं घुमक्कडी करते हुए घूमते फिरते रहे। इसकी कुछ टीस यशवंतरावजी के मन को हमेशा लगी रही।

यशवंतरावजी पुणे शहर और जिले के ग्रामीण क्षेत्र में भूमिगत पद्धति से काम करके नये संपर्क सूत्र जोडने का प्रयत्न कर रहे थे। इस समय एक दिन मई महीने के मध्य में यशवंतरावजी को फलटण से संदेश आया कि सौ.

वेणूताईजी की तबीयत बिगड गयी है और वह मरणोन्मुख है । उस पूरे दिन और रात में यशवंतरावजी सो नहीं सके । मेरा कर्तव्य क्या है, इसका यशवंतरावजी अपने मन में विचार करने लगे कि – 'परिवार के लिए मेरी कुछ जिम्मेदारी है कि नहीं, इसी विचार से में अस्वस्थ हो गया और दूसरे दिन फलटण जाने का निर्णय लिया ।'

यशवंतरावजी फलटण पहुँचे । यशवंतरावजी फलटण आनेपर वेणूताईजी की तबीयत पर अच्छा परिणाम हुआ । उसके मन का धैर्य बढ़ गया । उसकी बीमारी जैसे शारीरिक थी वैसे मानसिक भी थी । यशवंतरावजी ने वेणूताई से कहा कि आज का दिन यहाँ रहूँगा और रात में निकल जाऊँगा । फलटण में डॉक्टर बर्वेजीने प्रसिद्ध देशभक्त थे । यशवंतरावजी ने उन्हें बुलाया । यशवंतरावजी को देखकर उन्हें धक्का लगा । यशवंतरावजी ने उन्हें सभी परिस्थिति और उनकी मानसिक स्थिति की कल्पना दी ।

यशवंतरावजी ने उनसे कहा – 'किसी अच्छे डॉक्टर के पास वेणूताईजी को सौंपा जाना चाहिए, इसलिए मैं यहाँ आया हूँ ।'

डॉ. बर्वेजी ने यशवंतरावजी की बात स्वीकार की और उस दिन यशवंतरावजी वहाँ ठहरे ।

यशवंतरावजी की कल्पना के अनुसार वे वहाँ आने की जानकारी बहुत कम लोगों को होगी । लेकिन कहा नहीं जा सकता । आसपास के घरों में रहनेवाले लोगों में से किसीने देखा होगा । क्योंकि दूसरे दिन वे वेणूताईजी के पास बैठे थे । उसी दिन दोपहर के समय संस्थान के पुलिसोंने उनके ससुराल के घर को घेरा डाल दिया ।

यशवंतरावजी का छोटा साला बाबासाहबजी मोरे फलटण में ही था । उसने यशवंतरावजी से आकर कहा कि पुलिस आयी है । यशवंतरावजी समझ चुके कि उनकी भूमिगत आयु समाप्त हो गयी । उन्हें एकही चिंता थी कि उनकी गिरफ्तारी का परिणाम वेणूताईजी की तबीयत पर क्या होता है? क्योंकि पुलिस ने आकर उसके समक्ष यशवंतरावजी को गिरफ्तार किया था । यशवंतरावजी ने वेणूताईजी को समझाया और कहा कि –

'मुझे कुछ नहीं होगा, तुम चिंता मत करो । अब तो तुम अपनी तबीयत की ओर ध्यान दो और फलटण में मत रहो और तुरंत कराड में माँ के पास चली जाओ ।'

सौ. वेणूताईजी की तबीयत अच्छी नहीं थी । लेकिन उन्होंने यशवंतरावजी

की गिरफ्तारी का प्रकार बडे धैर्य से सहन किया और उस रात फलटण संस्थान ने बाँधे हुए नये जेल में प्रथम राजकैदी के रूप में यशवंतरावजी का मुकाम हुआ।

आश्चर्य इस बात का है कि उस रात में यशवंतरावजी गहरी नींद में सो गये। यशवंतरावजी की जिम्मेदारियाँ और चिंताएँ समाप्त हो गयी थी। दस महिनों का उनका भूमिगत जीवन समाप्त हुआ था। अब सरकार के हाथ में जो होगा वह सरकार करेगी, ऐसा विचार उनके मन में आया।

यशवंतरावजी जेल में है, यह समझने के बाद उनकी माँ उनसे मिलने के लिए आयी। यशवंतरावजी ने जेल के प्रमुख अधिकारियों से प्रार्थना की कि मैं जब मेरी माँ से मिलूँगा तब तुम में से कोई पुलिस या अधिकारी वहाँ उपस्थित न हो। वह दुखी है, उसे इससे मुक्त होना है। इसलिए वहाँ तीसरा मनुष्य होना ठीक नहीं है। उस जेल के अधिकारी के पास मानवता थी। उसने कहा कि मैं वैसी व्यवस्था करता हूँ। लगभग छ: महिनों के बाद यशवंतरावजी अपनी माँ से मिल रहे थे। दादा की मृत्यु का दुख माँ ने रो-रोकर हलका किया था। यशवंतरावजी ने उसे समझाया। यशवंतरावजी की तबीयत अच्छी है यह देखकर माँ खुश हुई। इस दुख के समय यशवंतरावजी इतने दिन अपनी माँ से मिले नहीं थे। यशवंतरावजी के मन में यह जो चुभन थी, वह कम हो गयी।

दो-तीन सप्ताह बीत गये और उसके बाद सौ. वेणूताईजी के आग्रह से वह और यशवंतरावजी दोनों भी दो दिन के मुक़ाम के लिए फलटण चले गये। आश्चर्य की बात तो यह है कि फलटण में रहते हुए फिर से सातारा जिले के पुलिस अधिकारी प्रतिबंधक स्थानबद्धता कानून का वारंट लेकर आये थे। जिस स्थानपर यशवंतरावजी को पहले पहल गिरफ्तार किया था, उस स्थान पर आये थे। सौ. वेणूताईजी को तो धक्का लगा। उसे लगा कि यशवंतरावजी फलटण आये कि उन्हें गिरफ्तार किया जाता है। सौ. वेणूताईजी ने यशवंतरावजी से कहा – 'मैंने तुम्हे फलटण आनेका किसलिए आग्रह किया।' इस प्रकार वह दुख करने लगी। यशवंतरावजी ने उसे समझाया और उसके साथ यशवंतरावजी कराड की ओर निकल पडे। यशवंतरावजी ने पुलिस अधिकारी से कहा – 'मैं मेरी पत्नी को घर में छोड दूँगा और वहाँ मैं तुम्हारे कब्जे में आऊँगा। तब तक तुम्हारा प्रबंध मेरे आसपास रखने के लिए मेरा कोई हर्ज नहीं है।' उसके अनुसार सब हुआ और फिर येरवडा की सफर शुरू हुई।

इस समय यशवंतरावजी को 'ब' वर्ग नहीं दिया गया। येरवडा के कैदियों के लिए जो तीसरा वर्तुल है उसमें से एक बराकी में यशवंतरावजी को भेज दिया। इस बराकी में यशवंतरावजी को जिले में अनेक कार्यकर्ता, मित्र मिल गये। उन्हें याद आता है कि वहाँ आत्मारामजी जाधव, हरिभाऊजी लाड जैसे अनेक कार्यकर्ता मिले। आत्मारामजी बापू को जो भयंकर यंत्रणाएँ दी गयी थी, उसकी बातें आत्मारामजी बापू ने यशवंतरावजी को इसी बराकी में कह दी। यशवंतरावजी की सामनेवाली बराकी में श्री. ना. ग. गोरेजी और सहयोगी मित्र थे। यशवंतरावजी की और उन मित्रों की बीच बीच में भेट होती थी।

इन तीन महिनों में यशवंतरावजी का कुछ विशेष पठन नहीं हुआ था। लेकिन उन्हें कार्यकर्ताओं का सहवास तो मिल गया था। उनके साथ गपशप करना, अपने अनुभव कहना, उनके अनुभव सुनना आदि में उनका सारा समय बीत गया। इन तीन महीनों में यशवंतरावजी की तबीयत अच्छी नहीं रही। घर की ओर से गणपतरावजी की तबीयत का समाचार आता था। वे डॉक्टर से औषध लेते थे और गृहस्थी चलाने का प्रयत्न कर रहे थे। यशवंतरावजी के मन में विचारसंघर्ष शुरू हुआ था कि मैं मेरे परिवार के लिए कितनी यंत्रणाएँ दूँ? दादाजी गये, गणपतरावजी गंभीर बीमारी से बीमार है। सौ. वेणूताई की तबीयत ठीक नहीं है। माँजीने कुछ बिना बोले सब सहन कर रही थी। लेकिन वह दुखी है। उन्होंने मुझसे बहुत अपेक्षाएँ की होंगी। लेकिन यशवंतरावजी ने उनकी कुछ भी अपेक्षाएँ पूरी नहीं की। उनके मन में यह जो चुभन है वह उन्हें जीवनभर चुभती रही।

सौ. वेणूताईजी की तबीयत कभी ठीक रहती, कभी बिगडती। इसलिए वेणूताईजी को मिरज के अस्पताल में रखा गया। यशवंतरावजी भी वहाँ गये। एक डॉक्टरने उनकी तबीयत देखी, उसकी जाँच की और थोडे ही दिनो में औषध से वेणूताईजी की तबीयत अच्छी हुई। यशवंतरावजी को बहुत आनंद हुआ। उतना आनंद उन्हें कभी नहीं हुआ। यशवंतरावजी की यह पत्नीनिष्ठा प्रशंसनीय, प्रेरणादायी और अनुकरणीय है।

□ यशवंतरावजी की करुणा

वडूज जि. सातारा का स्वातंत्र्य आंदोलन – इतिहास में अमर हो गया है। वडूज में जब सब आंदोलनकारियों ने एकत्र होकर मोर्चा निकाला तब अँग्रेज सरकार की पुलिसों ने उन पर अंदाधुंद गोलीबार किया था। उन में छः सात

लोग मारे गये । सबके आगे परशुरामजी घार्गे था ।

यशवंतरावजी ने यह सब देखा और वे एक तरफ जाकर छुपकर बैठे थे । उनकी आँखों से आँसू बह रहे थे । उस समय वहाँ व्यंकटरावजी आये और उन्होंने यशवंतरावजी से पूछा – 'आपकी आँखों में आँसू क्यों?' तब यशवंतरावजी ने कहा – 'व्यंकटरावजी, इन लोगों ने स्वतंत्रता के लिए बलिदान किया हें । उन्होंने अपने परिवार तक का विचार नहीं किया हैं । अब उनके परिवार में लोगों की क्या हालत होगी । वे क्या खायेंगे, और कैसे रहेंगे? उन्हें किसका आधार है, इसी चिंता में मैं हूँ ।'

व्यंकटरावजीने कहा – 'यशवंतरावजी, चिंता मत किजिए । मैं उन सब हुतात्माओं के परिवार की देखभाल करूँगा ।' तब उनकी बात सुनकर यशवंतरावजी को अच्छा लगा और उनके दुख का बोझ भी कम हुआ ।

□ देशभक्तों के प्रति यशवंतरावजी की निष्ठा

अनेक क्रांतिकारकों को जेल में भेज दिया था । वहाँ उन्हें बेहद यंत्रणाएँ दी गयी । नौकरशाही का जिनपर गुस्सा था, ऐसे अनेक क्रांतिकारियों को कोलाहोर के षडयंत्र के जाल में उलझाया था । इसी समय यशवंतरावजी के भाव-विश्व में क्रांति करनेवाली एक विशेष घटना घटित हो गयी थी । वह घटना है –

'यतीन्द्रनाथ दास ने शुरू किया हुआ आमरण उपोषण ।'

वस्तुत: लाहोर के षडयंत्र से यतीन्द्रदास का दूर से भी संबंध होने का सबूत अँग्रेजों के पास नहीं था । लेकिन २० साल के असहयोग आंदोलन में भाग लेने के कारण सरकार का उनपर गुस्सा था । पाँच वर्षों में उन्हें चार बार जेल में भेज दिया था । चौथी बार जब मैमनसिंग के जेल में थे, तब उन्हें बहुत यंत्रणाएँ दी गयी, इससे परेशान होकर उन्होंने जेल सुपरिंटेंडंट के साथ संघर्ष किया । इसलिए उन्हें कालकोठरी की प्रखर सजा दी गयी ।

राजनैतिक कैदियों के साथ गुनाहगार जैसे बर्ताव किया जाता था यह देखकर सात्विक संताप से यतीन्द्रने जेल में उपोषण शुरू किया था । इससे पहले सरदार भगतसिंग और बटुकेश्वर दत्त इन दोनों ने उपोषण शुरू किया था । उस समय इस उपोषण ने सारे देश का ध्यान आकर्षित किया था । पहले चार-छ: दिन बीत जाने पर बहुत चिंता लगी रही । उस समय यशवंतरावजी की झोपडी कृष्णा नदी के किनारे पर एक खेत में थी । वहाँ से कराड में आकर

वे वृत्तपत्र देखते थे कि उपोषण में यतीन्द्रनाथ दास की तबीयत कैसी है ।

क्रांतिकारियों के उपोषण से यशवंतरावजी अस्वस्थ हुए थे । यतीन्द्रनाथ दास की तबीयत उपोषण से कमजोर होती जा रही थी । प्रत्येक दिन यशवंतरावजी की अस्वस्थता बढ़ रही थी । उस समय अखबार में आनेवाले वर्णन हृदयद्रावक थे । यतीन्द्रदास के शरीर पर मुर्दनी छा गयी है, यह बात पढ़कर यशवंतरावजी अस्वस्थ हो रहे थे । वे बेचैन हो गये थे और घायल हो गये थे । ब्रिटिश सरकार की यह निष्ठुर अमानुषता यम को भी लज्जित करनेवाली है ऐसा उन्हें लगा । जमानत देने की शर्त पर सरकार ने उसकी मुक्तता करने की अनुचित उदारता दिखायी । पर स्वयं यतीन्द्रदास ऐसी बदनामी के लिए तैयार नहीं थे । उसकी अपेक्षा उसने इस इहलोक के बंदीवास में से छुटकारा कर लेने की बात सोची होगी ।

आखिर वह दुष्ट दिन निकल आया । एक दिन लाहोर के जेल में दोपहर के समय एक के आसपास प्रखर सूर्य को साक्षी रखकर उन्होंने प्राणाहुति दी । मातृभूमि के लिए कण कण से सिंचकर उन्होंने तेजस्वी आत्मार्पण किया ।

इस घटना से यशवंतरावजी बेचैन हो गये । उनके बालमन पर इस घटना का गहरा परिणाम हुआ । 'देश के लिए प्राणार्पण करनेवाले यतीन्द्रदास मेरे निकट के रिश्तेदार है, ऐसा मुझे लगा ।'

दैनंदिन व्यवहार चल रहे थे । लेकिन यशवंतरावजी अपने मन में खो गए थे । वे गहरे दुख में डूब गये थे । कहाँ जाऊँ, क्या करूँ, किसे कहूँ, उन्हें कुछ सुझता नहीं था ।

साठवे दिन सारे देश को शोकसागर में डुबाकर उपोषण करनेवाले यतीन्द्रदास का निधन हुआ । उस दिन देवराष्ट्र का छोटा यशवंत अपने वापसी के पथ पर फूटफूटकर रो रहा था । रोते रोते चल रहा था । चलना जरूरी था इसलिए वह चल रहा था । और रो रहा था एक बंगाली कार्यकर्ता के लिए और एक देशभक्त के लिए । जब वे अचेत मन से खेत में अपनी झोपडी की ओर चल रहे थे, तब उन्हें वातावरण धुँधला दिखाई दे रहा था ।

जब बस्ती पर पहुँचे तब अंधकार हो गया था । पेट में भूख होने पर भी भोजन करने की इच्छा नहीं हुई । वे केवल जमीन पर शांत पडे रहे । वे रात के अंधकार में आकाश में शून्य दृष्टि से देख रहे थे । आकाश में तारकापुंज में यतीन्द्र कहाँ दिख पडते हैं, यह वे पागल जैसे देख रहे थे । लेकिन लगभग ९० दिन अथवा शायद अधिक भी होंगे एक मानसिक क्रांति में से यतीन्द्रदासने

धैर्य से यह उपोषण जारी रखा था। राजकैदियों के हक के लिए और ब्रिटिश सत्ता का निषेध करने के लिए उन्होंने जो उपोषण किया था, वह एक बड़ी तपश्चर्या थी। उनकी तपश्चर्या उनकी मृत्यु से पूरी हुई। यतीन्द्रदास का बलिदान युग-युग के लिए अमर रहेगा।

इतना तो सच है कि इस घटना से यशवंतरावजी की मनोवृत्ति में बदल हो गया। यशवंतरावजी देश में घटनेवाली घटनाओं का अर्थ समझ लेने की मन:स्थिति तक पहुँचे थे। जातीय विचारों के संकुचित कांजी हाऊस में से बाहर पडने का उनका विचार दृढ हुआ। उन्होंने निर्णय लिया कि मुझे अपना जीवन देश-कार्य के लिए समर्पित करना चाहिए। उनके बचपन में उन्हें छोटी-छोटी जातियों का और धार्मिक प्रश्नों का थोडा बहुत आकर्षण था। लेकिन उनके विचार धीरे-धीरे स्पष्ट हो रहे थे, यह भी उतना सच है। संकुचित वृत्ति से काम करने की अपेक्षा किसी व्यापक दृष्टि से काम करना चाहिए, ऐसे उनके मन का गठन हो रहा था। यतीन्द्रदास की मृत्यु से उनका दृढ निश्चय हुआ और यह प्रश्न यशवंतरावजी ने अपने आप सुलझाया। क्षण-क्षण से और कण-कण से जिसके लिए देहत्याग करना चाहिए, ऐसे ध्येय और काम इस देश में खूब हैं, उसके लिए तो अपना जीवन है ऐसा उनका विचार था। 'मुझे मेरे आयु का मतलब समझ गया, ऐसा कहा तो हर्ज नहीं।'

□ सभी जाति धर्म के प्रति आदर

उस समय श्री. विठ्ठलजी रामजी शिंदे शैक्षणिक और सामाजिक क्षेत्र में अग्रणी थे। यशवंतरावजी के मन में उनके बारे में आदर की भावना थी। उनसे मिलना है तो कैसे? अन्त में यशवंतरावजी अकेले ही पूना गये। सुबह होते ही पूछताछ करते हुए वे श्री. विठ्ठलजी रामजी शिंदे के घर पहुँचे। श्री. विठ्ठलजी शिंदे घर में ही थे। नमस्कार करके यशवंतरावजी ने आने का कारण बताया। वे यशवंतरावजी की ओर देख रहे थे। पहले पहले वे बहुत नहीं बोले। लेकिन वे बीच बीच में पूछते थे – 'आप कौन है? कहाँ के रहनेवाले, क्या करते हो, घरमें कौन कौन हैं, उनकी स्वीकृति है कि नहीं?' उनका यशवंतरावजी की बोल-चाल पर बारीकी से ध्यान था। आखिर कराड आने के लिए अनुमति दी। उसके साथ एक शर्त रखी। उन्होंने कहा –

'मेरे साथ भोजन के लिए हरिजन को भी घर में बुलाना पडेगा।'

यशवंतरावजी ने तुरंत स्वीकृति दी। तब उन्होंने कहा –

'लेकिन घर में लोगों से पूछा हैं?'

यशवंतरावजी ने इन्कार करते हुए कहा –

'सभी जाति के मित्र घर में आते हैं । उस संबंध में माँ की कोई शिकायत नहीं है ।'

आखिर हरिजनों के साथ पंगत होगी, इसका विश्वास होने पर उन्होंने अनुमति दी ।

तय किये हुए समय पर वे आये । यशवंतरावजी को मानो स्वर्ग मिल गया । स्टेशन पर से तांगे से वे गाँव में आये । वे यशवंतरावजी के साथ घूमे, फिरे । हरिजन बस्ती में आये और कार्यक्रम समाप्त हुआ ।

यशवंतरावजी हररोज शाम के समय सात बजकर तीस मिनट के बाद हरिजन बस्ती में शाला चलाने के लिए जाते थे । उनकी शाला प्रौढ लोगों के लिए थी । उन में से कोई आयेगा, ऐसे मुझे दिख नहीं पडा । फिर वे चार घर में गये और उनसे शिक्षा के संबंध में बातचीत की । तब एक वयोवृद्ध मनुष्य को दया आयी और उन्होंने अपने लोगों से कहा –

'अरे लडकों, ये हररोज अपनी ओर आते हैं । तब हम में से कुछ लोगों को पढ़ने के लिए जाना चाहिए ।'

दूसरे दिन से पाँच-दस लडके आने लगे । यशवंतरावजी ने अध्यापक का काम किया । वास्तव में तो उन्हें इस काम का अनुभव नहीं था । फिर भी उन्होंने कक्षा चलाने का प्रयत्न किया । उनका यह प्रयोग दो-तीन महिने चला । प्रौढ विद्यार्थियों की संख्या कम हो गयी । उन्होंने बड़े उत्साह से शुरू की हुई शाला अपने आप बंद पड गयी ।

यशवंतरावजी को लगा कि यह सब हकीकत कर्मवीर शिंदे को सूचित करनी चाहिए । नहीं तो उन्हें लगेगा कि मुझे धोखा दिया गया । इसलिए उन्हें जो अनुभव आया, वह उन्होंने शिंदे को विस्तृत पत्र लिखकर सूचित किया ।

□ यशवंतरावजी की नम्रता

एक बूढ़ी फटी हुई साड़ी में कुछ लपेटकर लायी थी । बुढ़ापे के कारण थरथर काँपते-काँपते यशवंतरावजी से मिलने का प्रयत्न कर रही थी । लेकिन पुलिस ने उस बूढ़ी को यशवंतरावजी के पास जाने नहीं दिया । यशवंतरावजी ने यह देखा । उन्होंने उस बूढ़ी को अपने पास बुलाया और पूछा – 'क्यों आयी थी माँजी?'

बूढीने उत्तर दिया – 'सभी गाँव यशवंत की प्रशंसा करता है । इसलिए

उसे यह फूलों का हार देने की इच्छा है । इसलिए आयी हूँ ।' उसने फटी हुई साड़ी में से वह फूलों का हार बाहर निकाला और वह हार उसने यशवंतरावजी को दिया और यशवंतरावजी ने वह हार लिया और बूढ़ी के गले में डाल दिया और उन्होंने उसके पैरोंपर मस्तक रखकर नमस्कार किया । उसके बाद उन्होंने वेणूताईजी से उस बूढ़ी को खाना खिलाने के लिए कहा ।

है ऐसी नम्रता किसी बडे नेता के पास?

□ यशवंतरावजी की कृपा, प्रेम और सहानुभूति

बागलाण प्रांत में एक बूढ़ी स्त्री थी । उसका एक लडका था । वह पढा लिखा था । वह नौकरी के लिए जिला अधिकारी कार्यालय में चक्कर काट रहा था । लेकिन उसे नौकरी नहीं मिली । इसलिए वह परेशान था । उसे मजदूरी के सिवा मार्ग नहीं था । उसने अपनी बूढ़ी माँ से सारी हकीकत कह डाली । उसे काम न मिलने से माँ-बेटे दोनो भी बिना खाये सो जाते थे ।

एक दिन वह बूढ़ी बागलाण प्रांत से दिल्ली चली गयी । दिल्ली स्टेशनपर उतरने पर जब वह स्टेशन के बाहर आयी तो चारों ओर रिक्षाएँ और गाडियाँ थी । इससे वह झुंझला गयी । उसने एक रिक्षावाले से पूछा – 'अरं बाबा, आमच्या महाराष्ट्र सायबाचं घर कुठं हाय, त्ये सांग. अन् म्या तुला दोन रुपये देती बग.' रिक्षावाले को दया आयी । उसे मालूम था कि महाराष्ट्र का साहब यशवंतरावजी चव्हाण हैं । उस रिक्षावाले ने उस बूढ़ी को बंगले के फाटक के सामने छोड दिया और वह चला गया ।

छः बजे चव्हाणसाहब आये । उन्होंने देखा कि एक बूढ़ी अपने फाटक के पास बैठी है । यशवंतरावजी झुँझला गये । वे गाडी से नीचे उतरे और बूढीसे पूछा – 'हे माँ, तू कहाँ से आयी है?' उसने कहा – 'मैं बागलाण से आयी हूँ ।' 'तुम्हे किससे मिलना है और उनके पास तुम्हारा क्या काम है?'

उसने कहा – 'आमच्या महाराष्ट्राचा साहेब इथं राहतो म्हणत्यात. आमी उपासीच राहतो बगा. पोरगं शिकलंय, पण जिल्ह्याचा अधिकारी असतू म्हणं की, त्याच्याकडं पोरगं गेलतं पण त्यानं काय नवकरी दिली नाय. मग आमी जगायचं कसं? का फास घेऊन मरायचं?' बूढ़ी की बाते सुनकर यशवंतरावजी उसे बंगले में ले गये । उन्होंने उसे बंगले में दो दिन रख लिया और उन्होंने उस बूढ़ीको साडी चोली पहनाकर सत्कार किया, खिलाया, पिलाया ।

उस बूढ़ी के लडके पर अन्याय हुआ था । यशवंतरावजी उस समय

नाशिक के संसद सदस्य थे । यशवंतरावजी ने कहाडोल और नाशिक के जिलाधिकारी को फोन लगाकर इस बूढ़ी के लडके को नौकरी दिलवायी ।

यशवंतरावजी ने बूढ़ी से कहा – 'तुम्हारे लडके को नौकरी दी है ।' बूढ़ी खुश हुई और उसने यशवंतरावजी को आशीर्वाद दिया । यशवंतरावजी ने उस बूढ़ी को वापसी का टिकट निकालकर रेल गाडी में बिठाकर नाशिक भेज दिया । जब यह वार्ता अखबार में छपकर आयी तब नाशिक के सभी लोगों को आश्चर्य लगा ।

यशवंतरावजी सर्वोच्च पदपर विराजमान थे । फिर भी उन्होंने सामान्य बूढी को जो सहानुभूति, प्रेम दिखाया यह प्रशंसनीय है ।

३ | भारतीय राजनीति में यशवंतरावजी का प्रवेश

□ पहला चुनाव

१९३७ साल का चुनाव और १९४६ साल का चुनाव इन दोनों चुनावों में बहुत फर्क है । एक बडा जन-आंदोलन समाप्त हुआ था । द्वितीय महायुद्ध भी समाप्त हुआ था । इस समय उम्मीदवार का चुनाव उच्च स्तर से और सभी के सलाहमशविरे से होना चाहिए । यशवंतरावजी के अनेक साथीदार भूमिगत हैं और कुछ जेल में हैं । ऐसी परिस्थिति में इसे उम्मीदवारी दो और इसे उम्मीदवारी मत दो, ऐसी चर्चा में कम से कम वे तो भाग नहीं लेंगे और मैं उम्मीदवार हूँ ऐसी बात कहने के लिए यशवंतरावजी किसी से कहने के लिए नहीं जायेंगे ।

चुनाव नजदीक आये थे । इसलिए उम्मीदवारों की चर्चा शुरू होना स्वाभाविक था । स्वामी रामानंद भारती के मत से सभी कार्यकर्ताओं को इकठ्ठे करके सलाह लेनी चाहिए । भारती के अध्यक्षता में वालवे तहसील में एक गाँव में बडी सभा हुई और बहुत चर्चा हुई, ऐसी बात यशवंतरावजी ने सुनी थी । यशवंतरावजी उस सभा में नहीं गये थे । अधीर होकर इस सभा में उपस्थित नहीं रहना चाहिए, ऐसा कुछ विचार यशवंतरावजी के मन में घर कर गया था । और दूसरी बात यह है कि गणपतरावजी को बीमारी की अवस्था में रखकर चुनाव की राजनीति में भाग लेना, यह कल्पना यशवंतरावजी को अच्छी नहीं लगती थी । उस सभा में उलट-सुलट, नरम-गरम चर्चाएँ हुई । अन्त में उम्मीदवार के नाम के संबंध में कार्यकर्ताओंने मतदान किया । तब यशवंतरावजी मिरज में थे । सभा में उपस्थित कार्यकर्ता यशवंतरावजी से मिलने के लिए शाम के समय मिरज आये । उन्होंने कहा कि – 'सबसे अधिक मत तुम्हारे नाम को मिले हैं । अब तुम आगे पैर रखो और चुनाव की तैयारी में लग जाओ ।' यशवंतरावजी को यही सलाह देने के लिये ये कार्यकर्ता मिरज

आये थे । यशवंतरावजी की 'हाँ' या 'ना' चर्चा में गणपतरावजी ने मध्यस्थता की और उन्होंने कहा –

'यदी मेरी बीमारी के लिए तू यह चुनाव नहीं लड़ेगा तो इस अस्पताल में मैं एक क्षणभर भी नहीं रहूँगा । जीवन में कुछ अवसर अपने आप चलकर आते हैं तब उनका इन्कार नहीं करना चाहिए । उनके सामने जाना चाहिए । ऐसे अवसर फिर आयेंगे, इसका यकीन नहीं होता । दुराग्रह छोड़ दे ।'

गणपतरावजी का शब्द यशवंतरावजीने स्वीकार किया और उसके बाद उम्मीदवार होने की दृष्टि से यशवंतरावजी काम में लग गये । यशवंतरावजी के सभी मित्रों को आनंद हुआ । जिले के प्रमुख नेताओं ने यशवंतरावजी से पूछा कि अन्य कौन उम्मीदवार होने चाहिए । यशवंतरावजी के मत से वालवे तहसील की ओर से श्री. के. डी. पाटीलजी को उम्मीदवार के रूप से चुनना चाहिए । उनके नाम को स्वातंत्र्यसैनिकों का समर्थन था । जिला काँग्रेस के पुराने अध्यक्ष श्री. व्यंकटराव पवारजी ये भी एक उम्मीदवार होने चाहिए । सातारा जिले के दक्षिण भाग के लिए यशवंतरावजी के नाम के साथ चार नाम स्वीकृत हुए ।

पिछले लगभग ४० वर्ष से यशवंतरावजी चुनाव की राजनीति करते हैं । लेकिन इतनी सरल, बिनाखर्च की, तत्त्वनिष्ठ जनता के स्वयंस्फूर्त समर्थन पर आधारित ऐसा कौनसा चुनाव होगा, तो १९४६ का चुनाव है । यह उन्हें स्वीकार करना चाहिए ।

□ १९४६ का चुनाव

१९४२ के आंदोलन के बाद होनेवाला यह पहला चुनाव था । इस आंदोलन का प्रचार यह इस आंदोलन का यश का प्रचार था । लोगों का मन उत्साह से इतना लबालब हुआ था कि हम उम्मीदवार भाषण करने के बजाय केवल नमस्कार करने के लिए लोगों के सामने खड़े रहे तो तालियों की कडकडाहट होती थीं । लोगों का प्रेम लबालब भरा हुआ था । हम जहाँ जाते, वहाँ हजारों लोग हमारी राह देखते हुए खड़े रहते थे । यशवंतरावजीने कहा हम चारों उम्मीदवार प्रचार के लिए एकत्र घूमे, फिरे, उसका भी उचित परिणाम हुआ । यशवंतरावजी का चुनाव का काम शुरू होने पर श्री. गणपतरावजीने अस्पताल छोड दिया और सीधे कराड में रहकर वे चुनाव प्रचार के काम में लग गए । यशवंतरावजीने उनसे कहा भी पर उसका कुछ फायदा नहीं हुआ ।

अपना भाई बम्बई विधान सभा के लिए चुनाव लड़ रहा है, इसका ही उन्हें बहुत आनंद हुआ था । उनके उस आनंद में कुछ कमी आये, ऐसी इच्छा यशवंतरावजी के मन में नहीं थी । इसलिए यशवंतरावजीने वह प्रश्न वहाँ ही छोड दिया ।

पिछले चालीस वर्षों में यशवंतरावजी ने विधान सभा और संसद के दस चुनाव लडे । कभी कम मतों से, कधी लाख मतों से तो कभी बिनाविरोध ऐसे सभी चुनाव यशवंतरावजी ने जीते हैं । हर एक चुनाव में अलग अनुभव, राजनैतिक कसौटियाँ अलग, राजनैतिक पक्ष भी अलग थे, लेकिन १९४६ के चुनाव के समान दूसरा सर्वमान्य चुनाव कभी नहीं हुआ था । यह और नाशिक का लोकसभा का चुनाव छोड़ दिया जाय तो यशवंतरावजी के सभी चुनाव तूफानी हो गये थे । प्रतिपक्षों ने अपनी अपनी तोफें रोख दी थी । उन्होंने अभद्र और कटुता का प्रचार किया । इन सभी चुनाव में यशवंतरावजी अपने आप के ही प्रचारक थे । यशवंतरावजी के ध्यान में आया था कि संभाषणशैली में मिलनसार स्वभाव, सुसंस्कृत, तत्त्वनिष्ठ और प्रांजल प्रचार ये उनकी बडी शक्ति है । इन सभी तूफानों में जनता के आशीर्वादसे और उनके कार्यकर्ता, मित्रों के सहयोग से यशवंतरावजी अपराजित रह गए । जनतंत्र राजनीति में इसकी अपेक्षा अधिक करने की क्या जरूरी है?

लोकसभा के लिए १९६३ में यशवंतरावजी नाशिक जिले में से चुनाव लडे तब किसी के विरोध के बिना वे चुनकर आये । इसी कारण से लोगों में प्रचार के लिए जाने की आवश्यकता नहीं पड़ी और जनसंपर्क भी नहीं हुआ । इस चुनाव में यह एक त्रुटि यशवंतरावजी को महसूस हुई । नाशिक के लोगों ने यशवंतरावजी को विरोध किये बिना चुनकर दिया, इसका उन्हें हमेशा अभिमान लगता है । नाशिक के चुनाव के बाद नाशिक में भरी हुई सभा में कवि कुसुमाग्रज ने जो उद्‌गार निकाले थे, वे उद्‌गार यशवंतरावजी कभी नहीं भूलेंगे ।

'भूगोल में कृष्णा-गोदावरी संगम नहीं है – पर इतिहास में इस चुनाव के कारण यह संगम हुआ है ।'

यशवंतरावजी और उनके साथीदार चुनाव जीतकर आये । यशवंतरावजीने जीवन के एक नये क्षेत्र में प्रवेश किया था । इस चुनाव से यशवंतरावजी के जीवन में संपूर्ण बदल हुआ है, यह बात उन्हें स्वीकृत करनी चाहिए । यशवंतरावजी अपने बंधु की सलाह न मानते हुए थोडा दूर रहने का प्रयत्न

करते तो उनकी जीवन में यह बड़ी गलती हो जाती । वे इस बात को प्रामाणिकता से स्वीकृत करते हैं ।

चुनाव में यश मिलने पर यशवंतरावजी ने माँ के चरणों को स्पर्श कर के नमस्कार किया ।

उसके बाद अनेक महिलाओं ने यशवंतरावजी की आरती उतारी ।

यशवंतरावजी की पत्नी सौ. वेणूताईजी ने भी यशवंतरावजी की आरती उतारी। तब यशवंतरावजी की आँखों में आँसू आये । उन्होंने उससे कहा –

'वेणूबाई, इस यश में तुम्हारा हिस्सा है ।'

वह तनिक हँसी और कहा –

'ऐसा बँटवारा नहीं करना चाहिए ।'

स्वातंत्र्यलडाई में होनेवाले अनेक मित्र आये और आँखों में आँसू लाकर गले में गला डालकर अभिनंदन करके चले गये ।

यशवंतरावजीने यश के आनंद का अनुभव लिया, वह कुछ और ही था । जीवन में ऐसे क्षण एकाध बार आते हैं ।

□ पार्लमेंटरी सेक्रेटरी

१९४६ के मार्च महिने में चुनाव हुआ था और मार्च की तीस तारीख को काँग्रेस पार्लमेंटरी बोर्ड की सभा बम्बई प्रदेश काँग्रेस कमिटी के कार्यालय में भरी थी । पक्ष की सभा यह एक औपचारिक सभा थी । श्री. बालासाहेबजी खेर पक्षनेता चुने गये । उस समय सरदार पटेलजी भी उपस्थित थे । उन्होंने आशीर्वादात्मक भाषण किया और सभा समाप्त हुई । मंत्रिमंडल बनाने की चर्चा शुरू हुई । उनकी और श्री. बालासाहेबजी खेर की पहचान नहीं थी । इसलिए बालासाहब से मिलने की बात यशवंतरावजी के मन में नहीं आयी । श्री. भाऊसाहेबजी सोमण हरिजन उम्मीदवार के लिए प्रयत्न करने के लिए आये थे । यही बात उन्होंने यशवंतरावजी से कहीं थी । श्री. सोमणजी यशवंतरावजीके लिए किसी से कह दे, ऐसा प्रश्न ही निर्माण नहीं हुआ । लेकिन श्री. के. डी. पाटीलजी की इच्छा थी कि हमे भी कुछ प्रयत्न करना चाहिए । उनकी और मोरारजीभाई देसाईजी की येरवडा जेल में पहचान हुई थी। उनके मन में आया कि मोरारजीभाई से मिलना चाहिए । लेकिन यशवंतरावजीने उन्हें रोक लिया । यशवंतरावजीने उनसे कहा –

'अपना काम और अपने नाम नेताओं को मालूम होने चाहिए । नहीं तो

वे नेता कैसे? आप कृपा करके मेरे लिए प्रयत्न करने के लिए मत जाओ। तुम्हारे लिए प्रयत्न करना है तो जरूर जाओ।'

यशवंतरावजीने कहा –

'मुझे मंत्रिमंडल में जाने की बिलकुल इच्छा नहीं है। प्रयत्न करना होगा तो तुम्हारे लिए।'

ऐसा ही एक दिन बीत जानेपर यशवंतरावजी के जिले में से चुनकर आये हुए विधानसभा सदस्य श्री. बाबासाहेब शिंदेजी और शिराला पेटा के निवासी बम्बई में वकालत करनेवाले श्री. माधवराव देशपांडेजी यशवंतरावजी की खोज करते हुए माधवाश्रम में आये। श्री. के. डी. पाटीलजी कहीं बाहर गये थे। वहाँ यशवंतरावजी अकेले ही थे। श्री. बाबासाहेब शिंदेजीने यशवंतरावजी को अपने साथ चलने का आग्रह किया। उन्होंने कहा –

'श्री. माधवराव देशपांडेजी तुम्हे ले जाने के लिए आये हैं। उनके साथ हम जायेंगे।'

'किसलिए? कहाँ?' यह यशवंतरावजीने पूछा। पर उन्होंने उत्तर देने के लिए टालमटोल की। वे गाडी लेकर आये थे और वे उनकी गाडी में ही गये।

यशवंतरावजी ने उनसे पूछा –

'हम कहाँ जा रहे हैं ?'

श्री. माधवराव देशपांडेजी ने कहा –

'हम उपनगर में चले जा रहे है। श्री. बालासाहेबजी खेर ने तुम्हे ले आने के लिए कहा है। इसलिए मैं तुम्हारे पास आया हूँ।'

इस समय तक हम श्री. बालासाहेबजी के बंगले के दरवाजे तक पहुँचे। यशवंतरावजी कुछ आश्चर्यचकित हो गये थे। वे कुछ झुँझला गये थे। मेरे साथ होनेवाले दो ज्येष्ठ मित्रों के साथ यशवंतरावजी ने उस घर में प्रवेश किया और हम बालासाहेबजी की बैठक में जाकर खड़े रहे। साधा पोशाख पहने हुए श्री. बालासाहेबजी खेर हमेशा की तरह हँसते हुए, नमस्कार करते हुए आगे आये और कहा –

'आइए चव्हाणजी, आइए, बैठिए।'

'मैं तुम्हें मंत्रिमंडल में ले नहीं सकता। पर मैंने पार्लमेंटरी सेक्रेटरी (संसदीय सचिव) के लिए तुम्हारा चुनाव किया है।'

यह सब यशवंतरावजी को बिलकुल अनपेक्षित था।

उसके संबंध में क्या बोलना चाहिए, यह यशवंतरावजी के ध्यान में नहीं

आया । उन्होंने कहा, 'ठीक है, मैं घर जाकर वापस आता हूँ । मैं कुछ जल्दी उपस्थित नहीं रहूँगा ।'

यशवंतरावजी जब इस घटना का विचार करते हैं। तब उन्हें पार्लमेंटरी सेक्रेटरी का पद दिया गया था, इसलिए यह उन्हें कुछ अच्छा नहीं लगा था । उनका काम और उनकी जानकारी की तुलना से यह मामूली काम है, ऐसी उनकी भावना हुई थी ।

वहाँ चर्चा किये बिना हम वहाँ से निकले । यशवंतरावजी ने बालासाहेबजी खेर के आभार माने । उन्होंने दोनों मित्रों के भी आभार माने ।

श्री. बालासाहेबजी शिंदे को यशवंतरावजी की मन:स्थिति समझी होगी । बाहर आने के बाद उन्होंने यशवंतरावजी से कहा,

'यशवंतरावजी, गलती करोगे । इन्कार मत करो । तुम्हारी फुरसत से क्यों न हो, पर आकर उपस्थित रहो ।'

बाबासाहेब का यशवंतरावजी पर बहुत लोभ था । यशवंतरावजी ने उनके भी आभार माने और टॅक्सी करके माधवाश्रम में आये । तब तक के. डी. भी वहाँ वापस आये थे । यशवंतरावजी ने सब वृत्तान्त उन्हें कह दिया । श्री. के. डी. ये बड़े व्यवहारी मनुष्य थे । यशवंतरावजी ने उनके पास उनकी भावना स्पष्ट की । तब उन्होंने कहा,

'तुम्हारी भावना मैं समझ सकता हूँ । पर बाबासाहेब शिंदे ने जो सलाह दी है, उसे मानकर चलना चाहिए ।'

यशवंतरावजी को उनकी सभी बातें समझ में आ रही थी । पर पसंद नहीं लग रही थी ।

यशवंतरावजीने कहा,

'मुझे इस संबंध में विचार करना चाहिए । मैं जल्दी से हाजिर नहीं रहूँगा । हम अब वापस जायेंगे ।'

श्री. बालासाहेबजी खेर ने नामों की घोषणा की । उस में यशवंतरावजी का नाम पार्लमेंटरी सेक्रेटरी के रूप में प्रसिद्ध हुआ और इस प्रसिद्धी के वातावरण में यशवंतरावजी कराड पहुँचे ।

श्री. गणपतरावजी की कुछ निराशा हुई दिख पडी । यशवंतरावजी ने उनसे – मुझे क्या लगता है, वह कह दिया । उन्होंने सलाह मान लेनी चाहिए, ऐसा मत व्यक्त किया ।

उसके बाद दस दिन यशवंतरावजी कराड में थे और अन्य मित्रों से चर्चा

कर रहे थे । सभी का मनोदय था – 'मुझे जाना चाहिए ।'

सौ. वेणूताईजी के मन में क्या है, यह जानने का प्रयत्न यशवंतरावजी ने किया ।

सौ. वेणूताईजी ने कहा – 'आज तक इतने बडे कठिन निर्णय लिये, तब आप के मन की द्विधा अवस्था नहीं हुई थी । फिर अब ही ऐसा क्यों?'

यशवंतरावजी इसका अर्थ समझ गये ।

अन्त में यशवंतरावजी ने अपनी माँजी से पूछा – तब माँजी ने कहा,

'मुझे तुम्हारी राजनीति समझती नहीं । लेकिन तुम्हें कुछ नया काम करने का मौका आया है, तो अब इन्कार मत करो ।'

यशवंतरावजी के लिये यह वरिष्ठ न्यायालय का आदेश था । इसलिए यशवंतरावजीने बम्बई जाने का निर्णय लिया ।

दूसरे दिन शाम के समय सबसे बिदा ली । और फिर माँजी के पैरों पर मस्तक रखकर यशवंतरावजी घर के बाहर निकल पडे और बम्बई पहुँचे ।

यशवंतरावजी मन में विचार करने लगे कि – 'मेरे जीवन में बडा बदल हुआ है । कृष्णा के किनारे मैं बड़ा हुआ, घूमा, फिरा, संघर्ष किया । अनेक नये काम किये, मित्रता की, अनेक मनुष्यों से संबंध प्रस्थापित किये । बड़े अभिमान का आनंद का काल था । अब मैं कृष्णा का किनारा छोड़कर नये क्षितिज की ओर जा रहा हूँ । अब वह क्षितिज रंगबिरंगा दिख रहा है । लेकिन प्रत्यक्ष वहाँ पहुँचने तक क्या वैसा रहेंगा? यह बात कौन जाने?'

यशवंतरावजी ऐसे विचार के धुन में थे । ठीक उसी समय उनके जिले के रिपब्लिकन पक्ष के एक नेता रावसाहेबजी मधाले यशवंतरावजी के पास आये और कहा,

'कहाँ जा रहे हो?'

यशवंतरावजीने उनसे कहा –

'बम्बई । नया काम करने के लिए ।'

उन्होंने आनंद व्यक्त किया और कहा,

'तुम बहुत अच्छे दिन यह नया काम स्वीकार कर रहे हो ।'

यशवंतरावजीने कहा,

'मैं पंचांग देखकर नहीं जा रहा हूँ । लेकिन आज कौनसा महत्त्वपूर्ण दिन है?'

उन्होंने कहा – 'आज १४ अप्रैल है । डॉक्टर आंबेडकर का आज जनम

दिन है ।'

यशवंतरावजीने कहा –

'बहुत अच्छा संयोग है ।' मेरे ध्यान में न होते हुए यह दिन चुना गया । यह मेरे जीवन की महत्त्वपूर्ण घटना है, यह मैं मानता हूँ ।

और हमारी डेक्कन क्वीन खंडाली की घाटी में से एक के पीछे एक सुरंग छोडते हुए तीव्र गति से आगे जा रही थी ।

कभी अंधकार, तो कभी प्रकाश में हमारी सफर आगे बढ़ रही है ।

क्या अगले जीवन का यह प्रतीक तो नहीं है?

पिताजी बळवंत चव्हाण

माताश्री विठामाता बळवंत चव्हाण

जन्मस्थल – देवराष्ट्र (जिला – सांगली) यहाँ का घर

द्विभाषी महाराष्ट्र राज्य के मुख्यमंत्री के रूप मे पदभार ग्रहण करने के बाद
राज्यपाल एम. सी. छगलाजी से भेंट करते हुए

संयुक्त महाराष्ट्र राज्य की स्थापना-मंगलकलश का स्वागत करते हुए (१ मे १९६०)

रक्षामंत्री के शपथ समारोह मे महामहिम राष्ट्रपति डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन एवं पं. नेहरूजी (२२ नव्हंबर १९६२)

रेसकोर्स रोड, नई दिल्ली – यही आपका दिल्लीस्थित आवास रहा

प्रधानमंत्री पं. नेहरूजी के साथ यशवंतजी...
दोनों के मनमे एक दुसरे के प्रती बडी आस्था थी

श्रीमती इंदिरा गांधीजी के साथ ज़ख़्मी सैनिकों की पूछताछ करते हुए

भारत के विदेश मंत्री के रूप में 'इंडो यू. एस. कमिशन' समझौते पर हस्ताक्षर करते हुए – साथ में अमरिका के विदेश मंत्री डॉ. हेन्री किसिंजर

भारत के अर्थमंत्री के रूप में 'नेशनल इन्स्टिट्यूट ऑफ हिस्टारिकल रिसर्च' की सभा में चर्चा के दौरान

भारत के उप प्रधानमंत्री एवं गृहमंत्री के नाते 'इंडियन कौन्सिल ऑफ ॲग्रीकल्चर रिसर्च' की स्वर्णजयंती समारोह में वक्तव्य प्रस्तुत करते हुए...

केंद्रीय वित्तमंत्री के नाते संसद में बजट प्रस्तुत करने के पूर्व गौर करते हुए

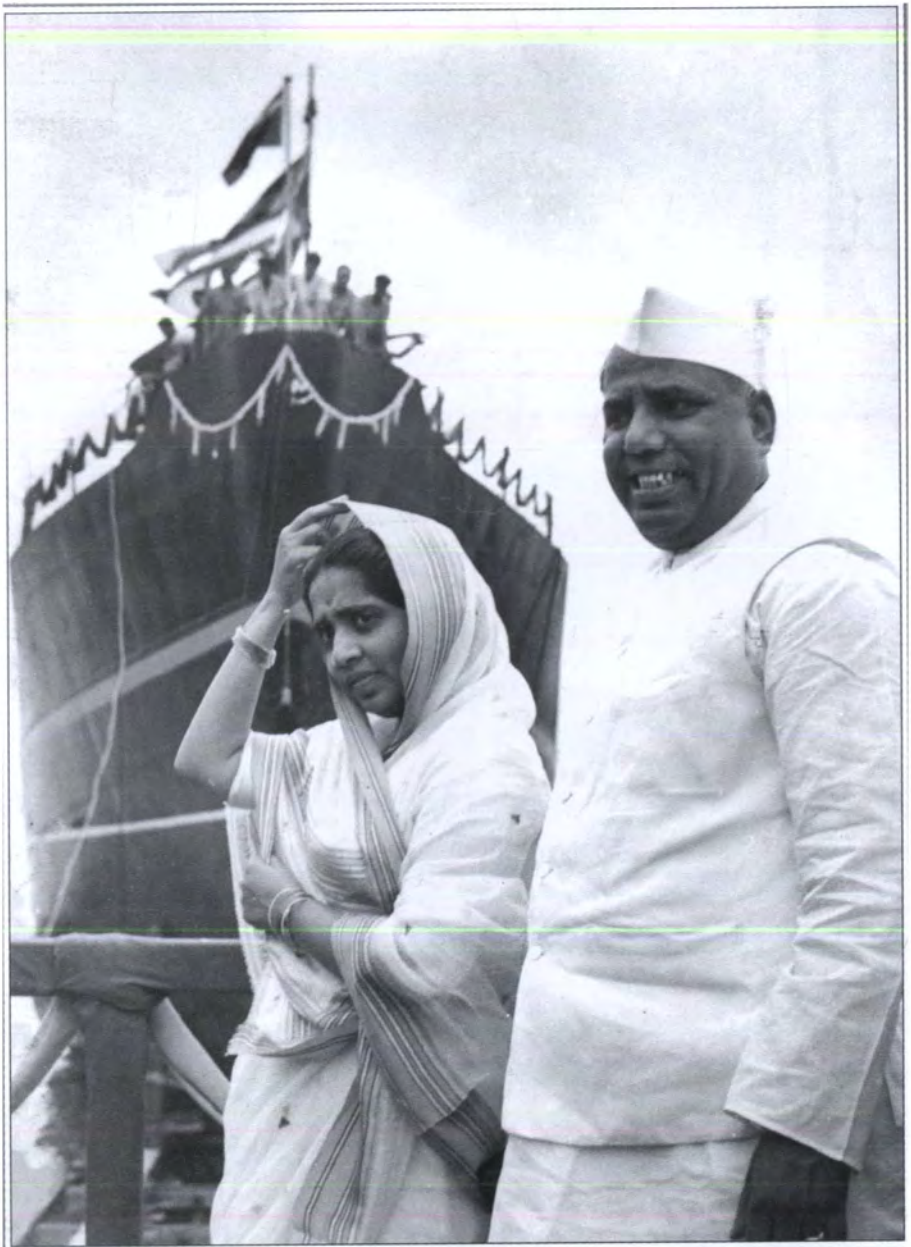

भारतीय नौसेना की नौका सेवा में सौंपते हुए – धर्मपत्नी श्रीमती वेणूजी के साथ

पारिवारिक सुखद क्षणों की अनुभूति – धर्मपत्नी श्रीमती वेणूजी के साथ

फुर्सत के क्षण, चाय का प्याला और श्रीमती वेणूजी...

एक नीरव क्षण...

शरदजी पवार के साथ गुफ़्तगू करते हुए

शहीद भगतसिंग की माताजी से एक भावविभोर भेंट

छठें पोप पॉल के साथ

महामहिम राष्ट्रपति श्री नीलम संजीव रेड्डीजी से भारत के उप प्रधानमंत्री
एवं गृहमंत्री पद को ग्रहण करते हुए

'दिल्ली दरवाजा' संस्था की ओर से दिल्ली में आयोजित प्रथम गणेशोत्सव में
श्रोताओं से संवाद – मंच पर रणजीत देसाई, ज्योत्स्ना भोळे एवं मो. ग. रांगणेकरजी

भारत के गृहमंत्री के नाते नई दिल्ली की जामा मस्जिद के दर्शन करने हेतु प्रस्थान

भारते के उपप्रधानमंत्री एवं गृहमंत्री के रूप में दिल्ली पुलिस से मानवंदन स्वीकारते हुए

धनंजय कीरजी का सत्कार करते हुए – साथ में बालासाहेब देसाई

संगीतकार वसंत देसाईजी का सन्मान करते हुए

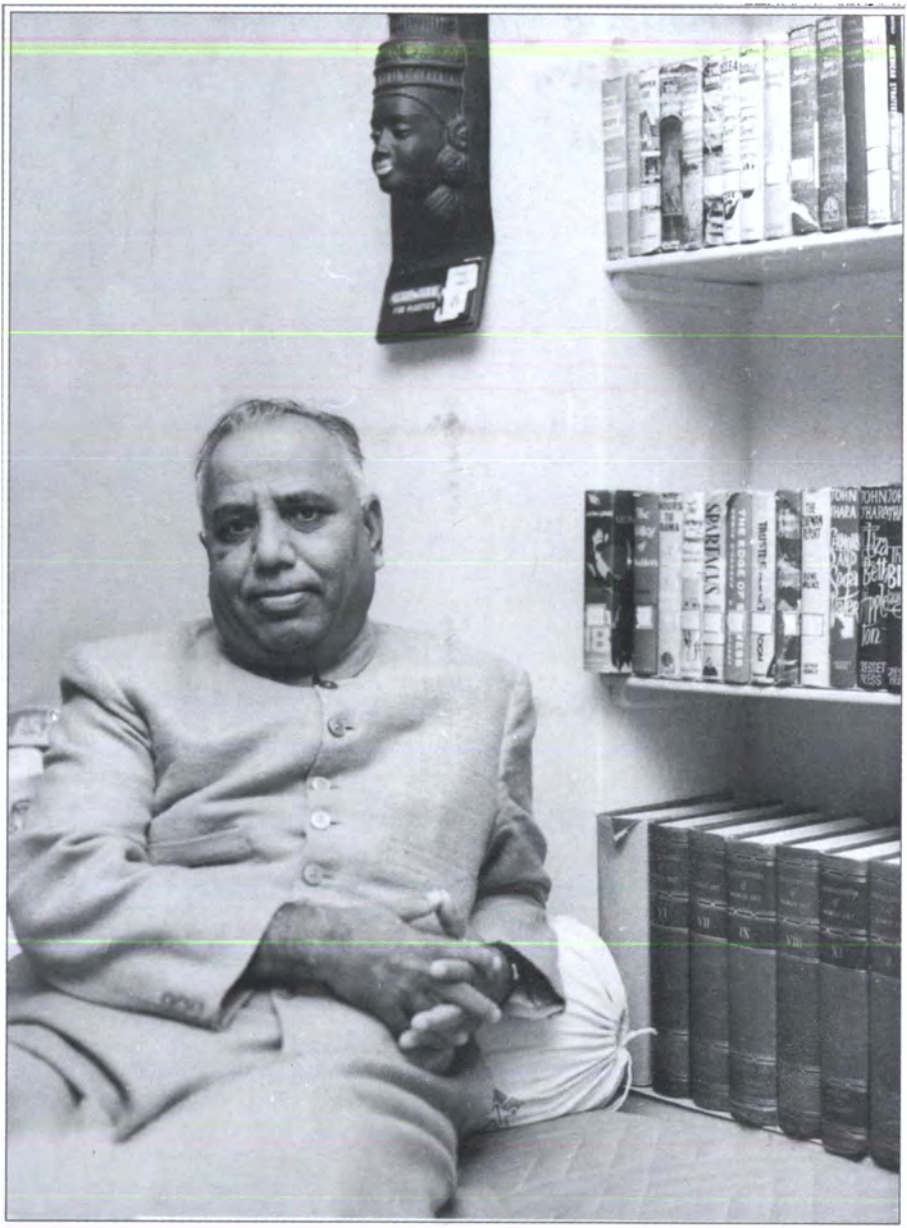

ग्रंथविश्व में लीन – यशवंतराव

४ | विशाल द्विभाषिक और संयुक्त महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री

२६ फरवरी १९६१ में रविवार का दिन । यशवंतरावजी अहमदाबाद के दौरे पर जाने के लिए निकल पडे थे । उसी समय तर्कतीर्थ लक्ष्मणशास्त्री जोशीजी ने उनसे पूछा – 'यशवंतरावजी, परसो मैंने दी हुई दो अंग्रेजी पुस्तके क्या अपने पढी है?' यशवंतरावजी ने कहा कि, 'मुझे समय ही नहीं मिला । आजकल काम की व्याप्ति इतनी बढ़ी है कि पुस्तके पढ़ने के लिए समय ही नहीं मिलता । ऐसी ही परिस्थिति रहेगी तो मुझे लगता है कि छः वर्षों में मैं अज्ञानी बन जाऊँग ।'

यशवंतरावजी की परिस्थिति ऐसी है कि लोग जब सोने देंगे तब सो जायेंगे, लोक जब भोजन करने देंगे तब भोजन करेंगे ।

म. गांधीजी की इच्छानुसार एक गरीब किसान का बेटा आज महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री के पद पर आरूढ हुआ है ।

जो अपनी विद्यार्थी अवस्था में शाला की फीस भी भर नहीं सकता था, जिसके शरीर पर कोट और पैरों में जूते डालना भी असंभव था, जिसकी माता को कष्ट, मजदूरी करनी पडती थी ऐसी गरिबी की परिस्थिति बितानेवाला यह 'यशवंत' आगे महाराष्ट्र का मुख्यमंत्री होगा ऐसा किसी के भी सपने में आया नहीं होगा । यशवंतरावजी ने १९३० के गांधीजी प्रणित असहकारिता के आंदोलन में भाग लिया । किसी की परवाह किये बिना गांधीजी के राजनीतिक आंदोलन में सामील होना अर्थात सभी संकटों को गले लगाना होगा – मतलब फकीरी से दोस्ताना करना था ।

गांधीजी की पुकार सुनकर यशवंतरावजी ने आगे पीछे नहीं देखा । उन्होंने अपने घर और जीवन की परवाह नहीं की । उन्होंने एक के पीछे एक आनेवाले संकटों का मुकाबला किया । १९३२ मे उन्हे अठारह महिनोंकी सजा भुगतनी

पडी। उन्होने १९४१ में वकालत शुरू की। १९४२ के 'करेंगे या मरेंगे' की लडाई में वे कूद पडे। आगे वे भूमिगत हुए। बडे भाई की मौत हो गयी। नवविवाहित पत्नी को गिरफ्तार किया गया और वह आगे बहुत बीमार पडी। परंतु यशवंतरावजी इन दिनों में डगमगायें नहीं। ध्येय से उनका मन विचलित नहीं हुआ।

इस समय उनकी वीर माताजी ने और सहनशील पत्नी ने बड़ा धैर्य दिखाया। यशवंतरावजी के बड़प्पन का श्रेय इन दोनों को है।

'मैं महात्मा हुआ इसका कारण मेरी कस्तुरबा' ये उद्‌गार निकलकर गांधीजी ने स्त्री जाति का बडा गौरव किया था। वैसाही प्रभाव वेणूताईजी के त्याग का यशवंतरावजी के मन पर है। वेणूताईजी के कमजोर तबीयत के बारे में किसीने प्रश्न पूछा तो यशवंतरावजी कहते है कि, 'उनकी तबीयत खराब होने के लिए मैं ही कारण हूँ।' स्त्रियों के संबंध में उनकी दृष्टि हमेशा अत्यंत सहानुभूतिपूर्ण थी। उनका उपहास और असुविधा होती है ऐसा दिख पडनेपर उन्हें वह सहन नहीं होता। एक बार ऐसा प्रसंग आया। असेंब्ली हॉल में काम समाप्त कर वे बाहर ही जाने के लिए निकले तब उन्हें दिख पडा कि विधानसभा भवन की प्रेक्षकों की गॅलरी में कुछ महिलाएँ जगह के अभाव में खड़ी हैं। ये देखतेही वे बेचैन हो गये। उन्होंने तुरंत उनके बैठने की व्यवस्था की। जब वे महिलाएँ बैठी, तब उन्होंने कहा –

'हुआ मेरा काम, अब मैं चलता हूँ।' इसलिए तो इतनी देर वे ठहरे थे।

जवाहरलालजी कहते थे कि गांधीजी का संपूर्ण दृष्टिकोन किसानों का था। हिंदुस्तान के किसानों के अर्थात बहुजन समाज के जीवन से वे एकरूप हो गये थे। बहुजन समाज के विषय में उनका प्रेम इतना गहरा था कि 'ये लोग है इसलिए मेरा अस्तित्व है' ऐसे गांधीजी कहते थे। यशवंतरावजी का विशाल दृष्टिकोन वैसा ही था।

मुख्यमंत्री पद की जिम्मेदारी यशवंतरावजी ने किसान, काम करनेवाले लोगों के लिए ली। 'मैं जिम्मेदारी के काम में फँस गया, गलती की तो किसान फँस जायेगा और मजदूर भी फँस जायेगा।' ऐसे उनके विचार थे। आज राष्ट्रपिता गांधीजी होते तो वे यशवंतरावजी की ओर देखकर प्रशंसा करते और कहते, 'मेरी स्वातंत्र्य लड़ाई में होनेवाला एक तरुण किसान सैनिक महाराष्ट्र राज्य का मुख्यमंत्री पद विभूषित करता है और किसानों की हिमायत लेकर उनके कल्याण की प्रतिज्ञा करता है।'

गांधीजी की ईश्वरनिष्ठा गहरी थी । यशवंतरावजी भी अन्त में ईश्वरी इच्छा पर निर्भर रहकर निश्चिंत होते थे । जब जब एकाध गुत्थमगुत्थी का, अत्यंत कठिन समस्या का प्रश्न निर्माण होता है, तब क्या करना चाहिए और क्या न करना चाहिए, ऐसे समय वे कहते है 'ठीक है, मुझे ईश्वर जो सूचित करेगा अथवा जो प्रेरणा देगा वैसा मैं निर्णय लूँगा ।'

विदर्भवासियों का यशवंतरावजी पर प्रेम था । उसके अनेक कारण थे । एक तो वर्धा सेवाग्राम में महात्मा गांधी का अनेक वर्ष वास्तव्य था । उस काल में सेवाग्राम भारत की राजनैतिक राजधानी बनी थी । नागपूर विभाग में चार जिलों में रहनेवाली जनता गांधीजी के वास्तव्य से, उनकी विचारप्रणाली से विशेष प्रभावित हुई थी । यशवंतरावजी मुख्यमंत्री हुए इसलिए उन पर विदर्भवासियोंका प्रेम दृढ हुआ । यही नहीं, युग में होकर, गांधीजी की पुकार सुनकर स्वातंत्र्य के यज्ञकुंड में कूद पडनेवाले यशवंतरावजी हम में से एक बहादूर सेनानी थे । इसलिए विदर्भ की जनता का उन पर प्रेम था । राज्य पुनर्रचना नहीं होती तो उनके विषय में अत्यादर का, अपनत्व का भाव विदर्भ की जनता में नहीं हो सकता ।

पश्चिम महाराष्ट्र और विदर्भ का भाग अलग अलग प्रांतों में रहता था । फिर भी राष्ट्रीय आंदोलन की दृष्टि से उन में हमेशा एकात्मता थी । लोकमान्य तिलकजी की मृत्यु के बाद उनके शिष्यों में दो गुट पडे थे । एक गुट गांधीजी का नेतृत्व हृदय से माननेवाला और दूसरा गुट गांधीजी का नेतृत्व न माननेवाला । विदर्भ विभाग में गांधीजी का नेतृत्व माननेवाला बडा गुट था । बहुसंख्य जनता गांधीजी के नेतृत्व की ओर आकर्षित हुई थी । महाराष्ट्र में राष्ट्रीय विचार में हुई यह पहली वैचारिक क्रांति थी और वह एक दूसरे की अभिमानी बन गयी । इस क्रांति से पश्चिम महाराष्ट्र और विदर्भ में गांधीप्रेमी जनता एक विचारसूत्र में आयी और दूसरी वैचारिक क्रांति राज्य पुनर्रचना काल में हुई । इस विचार क्रांति का झंडा यशवंतरावजी के हाथ में आया । इस क्रांति की घोषणा दिनांक १ दिसंबर १९५५ में फलटण में हुई । राज्य पुनर्रचना के आंदोलन के काल में यह ऐतिहासिक महत्त्वपूर्ण क्षण था । काँग्रेस की नौका तूफान में फँस गयी थी । काँग्रेस तहस-नहस होने के पथ पर लगी थी । व्यक्तिनिष्ठा श्रेष्ठ कि संस्थानिष्ठा श्रेष्ठ यह प्रश्न सुलझाना था । इस समय यशवंतरावजी निर्भयता से सामने आये । १ दिसंबर १९५५ में उन्होंने फलटण में घोषणा की कि – 'बम्बई राज्य रचना के बारे में काँग्रेस कार्यकारिणी

जो अंतिम निर्णय लेगी, वह निर्णय मैं शिरोधार्य मानूँगा । संयुक्त महाराष्ट्र और पंडित नेहरूजी ऐसी समस्या मेरे सामने आयी तो मैं पंडित नेहरूजी के प्रति निष्ठा रखूँगा । 'इस में काँग्रेस सुरक्षित रहेगी यही हेतु था । यशवंतरावजी ने काँग्रेस जनों को प्रसंगोचित मार्गदर्शन किया और उन्होंने महाराष्ट्र का 'पानिपत' नहीं होने दिया ।

इस निर्णय से उनके विषय में जनता में बहुत क्षोभ निर्माण हुआ । उन पर गालियों की बौछार हुई । उनका जगह-जगह पर उपहास, अपमान होने लगा । उन्हें राजकीय जीवन से निर्वासित करने के चारों ओर से प्रयत्न शुरू हुए थे । उन्होंने ये सब शांति से और धैर्य से सहन किया । अन्त में वे इस अग्निदिव्य में से पार हो गये और महाराष्ट्र काँग्रेस को संजीवन प्राप्त कर दिया । कन्नमवारजी और उनके साथी उस समय विदर्भ के पुरस्कर्ता थे । फिर भी यशवंतरावजी के इस पुरुषार्थ से और बहादूरी से वे प्रभावित हुए और उनके नेतृत्व की ओर आकर्षित हुए । क्योंकि वे भी विदर्भ की अपेक्षा काँग्रेस-निष्ठा और भारत-निष्ठा को प्रथम स्थान देनेवाले थे । सारांश यह है कि यशवंतरावजी के समर्थकों की ओर काँग्रेस निष्ठावंतों की पलटन इधर पश्चिम महाराष्ट्र में और उधर विदर्भ में खड़ी हुई था ।

□ बम्बई केंद्रशासित

इसके बाद थोडे दिनों में दिनांक १६ जनवरी १९५६ को पंडित जवाहरलाल नेहरूने रेडिओपर भाषण करके बम्बई को केंद्रशासित रखने की बात जाहिर की । यह निर्णय जाहिर होते ही तुरंत दुसरे दिन ७ जनवरी को कन्नमवारजी और उनके साथियोंने स्वतंत्र विदर्भ का आंदोलन स्थगित कर दिया ।

जवाहरलालजी की उपर्युक्त घोषणा के बाद महाराष्ट्र काँग्रेस कमिटी की सभा पुना में हुई । उनके निमंत्रण से कन्नमवारजी और उनके साथी वहाँ उपस्थित हुए । बम्बई अलग करके महाराष्ट्र राज्य स्थापना की शुरूआत हुई थी । बम्बई के सचिवालय में दो बैठके हुई थी । इस अवसर का फायदा उठाकर कन्नमवारजीने सातारा, कोल्हापूर और सांगली जिले में दौरा किया और काँग्रेस कार्यकर्ताओं की सभाओं में भाषण किये । वहाँ अनेक लोगों ने कन्नमवारजी से कहा कि – 'आप नये हैं? आप यशवंतरावजी के पीछे रहने से आप अपना और विदर्भ का भला नहीं कर सकोगे ।' सातारा के मुकाम में

राजासाहब निंबालकरने कन्नमवारजी से पूछा कि 'तुम्हारी और तुम्हारे साथियों की नीति क्या रहेगी।' कन्नमवारजीने तुरंत उत्तर दिया कि – 'जहाँ यशवंतरावजी वहाँ मैं और मेरे साथी रहेंगे। फिर यशवंतरावजी अल्पमत में रहे या बहुमत में। क्योंकि अपनी और हमारी जात एक है, वह भारत और निष्ठावंतों की। यह रिश्ता हम सब को हमेशा के लिए एक सूत्र में जकड़कर रखने के लिए होगा।'

वे आये, उन्होंने देखा और जीत लिया। किसी के ध्यान में और मन में नहीं था। अचानक १० अगस्त १९५६ को विशाल द्विभाषिक बम्बई राज्य का बिल लोकसभा में पारित हुआ। इच्छा हो अथवा न हो, संसद का निर्णय हम सभी को स्वीकृत करना पडा।

आगे तारीख १ नवंबर १९५६ को विशाल बम्बई राज्य की स्थापना हुई। यशवंतरावजी इस राज्य के मुख्यमंत्री पद पर आरूढ हुए।

द्विभाषिक राज्य यह भारत में प्रथम श्रेणी का राज्य है, ऐसी जो ख्याति हुई थी उसके लिए यशवंतरावजी ही कारण हुए। यह राज्य चलाने का कार्य अत्यंत कठिन एवं पेचीदा था। इस द्विभाषिक राज्य के मंत्रिमंडल में एक दूसरे के संबंध दृढ नहीं हो सके। अन्त में आपस के झगडे से यह राज्य टूट गया ऐसा किसी तरहका इलजाम यशवंतरावजी ने अपने ऊपर आने नहीं दिया।

अब द्विभाषिक राज्य का विसर्जन होगा इसलिए गुजराथी लोगों ने यशवंतरावजी पर गुस्सा निकाल लिया। वे यशवंतरावजी को वाहियात बोलने लगे।

एक ओर विदर्भ का प्रश्न तो दूसरी ओर दोनों राज्यों के बँटवारा के प्रसंग में गुजराथी बांधवों की अनुमति प्राप्त करने के संबंध में विचारविनिमय चल रहा था। बीच बीच में मतभेदों की चिनगारियाँ उठती थी, पर यशवंतरावजी ने गुस्सा आने नहीं दिया, तीव्रता बढने नहीं दी।

द्विभाषिक बम्बई राज्य का विसर्जन होने का प्रश्न निर्माण हुआ तब से लेकर अन्त तक यशवंतरावजी ने मोरारजीभाई के साथ अच्छे संबंध रखे थे। मोरारजी भाई के निवास स्थान में रहकर यशवंतरावजी मोरारजीभाई से कहते थे – 'अब हम गुजराथी भाई-भाई अलग हो रहे हैं, हमे आशीर्वाद दो। पिताजी की हैसियत से हमारी जायदाद का उचित विभाजन करने के लिए आप हमे साहाय्य कीजिए।'

दूसरों का विश्वास संपादन कर काम करवा लेने की कला बहुत कठिन होती है। पर यशवंतरावजी इस में सफल हुए। बाहर के कुछ लोग यह समस्या

हल होने के समय बाधाएँ पैदा करने लगे । उनका कहना था कि यह प्रश्न १९६२ के चुनाव के बाद लेना चाहिए । पर यशवंतरावजी ने ऐसा मौका आने नहीं दिया । सारी बातचीतें सफल की, यशस्वी बनायी ।

महाराष्ट्र राज्य निर्मिति के संबंध में अनेक पक्षों वा दलों के प्रयत्न हुए हैं । इस में जनता का विशेष श्रेय भी है । लेकिन यशवंतरावजी जैसा कुशल, प्रसंगावधानी, विचारवंत नेता न होता तो आज का यह महाराष्ट्र इतना जल्दी देख सकते कि नहीं इसका शक होता है ।

सैंकडों वर्षों से विदर्भ और मराठवाडा का पश्चिम महाराष्ट्र से यातायात नहीं था । इन दो महान खाड़िया और (समुद्र का वह भाग जो तीन ओर खुश्की से घिरा हो । खलीज़ नदी का वह भाग जिस में समुद्र के ज्वार का पानी पहुँचता हैं ।) नदियों के कारण विदर्भ के ९० लाख लोग और मराठवाडा की ५० लाख महाराष्ट्रीयन जनता अलग पड़ी थी । अत्यंत प्रयत्न से और परिश्रम से महाराष्ट्र के महान तज्ज्ञ इंजिनिअरने– यशवंतरावजी ने हाल ही में दो बड़े सेतु बाँधकर महाराष्ट्र की साडेतीन कोटी जनता एकत्र लायी । सभी दृष्टि से परस्पर यातायात की व्यवस्था की । इसलिए यशवंतरावजी नागपूर को कोलंब पूल के लिए आ सके । महाराष्ट्र स्थिर, मजबूत करने के लिए हम सब को प्रयत्नों की चरम सीमा तक प्रयत्न करना चाहिए । फिर ऐसे कितने भी पत्थरों के मिट्टी के पूल और रास्ते जगह-जगह तैयार हो जायेंगे और जनता के सुख में वृद्धि होगी । अब तुम्हारी समस्या तो हमारी समस्या समझकर एकता की भावना हम में निर्माण होनी चाहिए ।

स्वातंत्र्यप्राप्ति तक बम्बई सांस्कृतिक, धार्मिक और आंदोलन का श्रेष्ठ और प्रमुख केंद्र स्थान था । उस समय के बहुभाषिक बम्बई राज्य के राजधानी में यशवंतरावजी एक पार्लमेंटरी सचिव का पद स्वीकारने के लिए गये । उन्होंने पार्लमेंटरी सचिव के पद का स्वीकार किया । यशवंतरावजी का स्वभाव ऐसा था कि जो सहज मिलता है, उस में संतोष मानना चाहिए । शासन के मुख्य प्रवाह में प्रवेश मिल गया है, इसलिए उन्होंने उस में ही संतोष माना ।

□ मोरारजी गृहमंत्री

उस समय मोरारजी देसाईजी गृहमंत्री थे । महाराष्ट्र की राजनीति में अपना स्थान मजबूत किये बिना बम्बई राज्य का प्रशासन अच्छी तरह चला नहीं सकेंगे, यह जानकर उन्होंने सामान्य ग्रामीण जनता में नवोदित, कर्तृत्वसंपन्न

तरुण को अपने काम की मदद के लिए आवश्यक समझा । इसलिए मोरारजीभाई ने आत्मीयता और नम्र भाषा में यशवंतरावजी की पूछताछ की कि – 'आप गृह विभाग में दाखिल क्यों नहीं होते?' फिर यशवंतरावजी गृह विभाग में दाखिल होकर गृह विभाग का कारोबार देखने लगे । मोरारजी ब्रिटिश शासन में साहब थे । इस साहब की कृपा संभालकर यशवंतरावजी ने प्रशासन पर बड़ी खूबी से कब्जा किया । उत्कृष्ट प्रशासक के रूप में मोरारजीभाई की ख्याति थी । यशवंतरावजी ने मोरारजी के प्रशासन की कुशलता प्राप्त की । मोरारजी स्वभाव से करारी थे । यशवंतरावजी ने मोरारजी द्वारा सौंपे हुए सभी काम अच्छी तरह से पूरे किये । यशवंतरावजी ने पुलिस यंत्रणा का प्रमुख विभाग बारिकी से जाँच लिया ।

□ हिंदू-मुसलमानों के दंगे

१९४८-४९ में हिंदू-मुसलमानों के दंगे उमड़कर आये । उस समय चव्हाणजी ने होमगार्ड की संघटना तैयार की । संरक्षणार्थ सिद्ध ऐसी स्वतंत्र नागरिकों की एक प्रकार की सेना ही उन्होंने तैयार की । नागरी पूर्ति में अनुशासन लाया । उन में जैसे उच्च अभिजात रसिकता थी वैसेही ग्रामीण भाग में डफ़ली-तुरही के मैदानी लोककला में उन्हें खूब रुचि थी । यशवंतरावजीने पहल पहल तमाशा लोककला को शासकीय मान्यता प्रदान की ।

□ १९४६ से १९५६ तक विलक्षण संग्राम

१९४६ से १९५६ इन दस वर्षों में महाराष्ट्र में और भारत में राजनीति का रंगमंच विलक्षण संग्राम नाट्य से जल्दी से बदल रहा था । काँग्रेस में दाये-बाये ऐसे गुट निर्माण हुए थे और उन में स्पर्धा शुरू हुई थी । स्वतंत्र भारत की घटना समिति स्वतंत्र और एकात्म भारत की जनतंत्रप्रधान राज्यघटना निर्माण करने में यशस्वी हुई थी । आशिया खंड में एक विशाल जनतंत्र राष्ट्र की अर्थात भारत की निर्मिति हुई । लेकिन यह राज्यघटना निर्माण होते समय राष्ट्रपिता म. गांधाजी का एक हिंदुत्ववादी उग्रवादी ने हत्या की । उसकी भीषण प्रतिक्रिया महाराष्ट्र के शहरों में और विशेषकर ग्रामीण भागों में उमड़कर आयी । पिछले कई वर्षों से वृद्धिंगत हुए ब्राह्मण-ब्राह्मणेतर वाद ने हिंसक और विध्वंसक रूप लिया । लगभग ६ महिने तक ऐसी संहारक घटनाएँ शुरू थी । उस में यशवंतरावजी के नेतृत्व की कसौटी लग गयी । उन्होंने कराड और

कराड के आसपास के ग्रामीण भागों में स्वयं उपस्थित रहकर प्रक्षुब्ध होकर घूमनेवाले लोगों को शांत किया ।

प्रत्यक्ष काँग्रेस संघटना में महाराष्ट्र में काँग्रेस में से फूटकर निकले हुए बाये गुट का 'शेतकरी कामकरी पक्ष' १९४९ के दरमियान स्थापित हुआ । बहुजन समाज में कुछ अनुभवी नेता काँग्रेस छोडकर इस नये पक्ष का नेतृत्व करने लगे । शंकररावजी मोरे, भास्कररावजी जेधे, दत्ताजी देशमुख, तुलसीदासजी जाधव, र. के. खाडिलकरजी, यशवंतरावजी मोहिते आदिने इस पक्ष प्रसार के लिए गति लायी । यशवंतरावजी भी उनकी चर्चा में सामील हुए थे । पक्ष स्थापना के समय यशवंतरावजी विवेक से दूर हो गये और अंतिमत: वे काँग्रेस में रहे ।

□ पहला सार्वत्रिक चुनाव

१९५२ में भारत का पहला सार्वत्रिक चुनाव हुआ । महाराष्ट्र में काँग्रेस विरुद्ध शेतकरी और कामकरी पक्ष ऐसा मुकाबला हुआ । इस चुनाव में मोरे-जेधे के पक्ष की पराजय हुई । उसके बाद चार-पाँच वर्षों में जेधे-मोरेजी, तुलसीदास जाधवजी, खाडिलकरजी, यशवंतरावजी मोहिते काँग्रेस में यानी कि स्वगृह में वापस आये ।

१९५२ के चुनाव में बालासाहेब खेरजी खड़े नहीं हुए । खेरजी का शासन समाप्त हुआ । सच्चे अर्थों में वह मोरारजी का शासन था । परंतु अब इस चुनाव के बाद मोरारजी पक्षनेता के रूप में चुनकर आये । मोरारजीने अपने मंत्रीमंडल में यशवंतरावजी चव्हाण और भाऊसाहेबजी हिरे इन दोनों ग्रामीण जनता के नेताओंको अपने मंत्रीमंडल में समाविष्ट किया । इस काल में महाराष्ट्र प्रांतिक के अध्यक्षपद भाऊसाहेबजी हिरे की ओर चला गया । यह बहुभाषिक बम्बई राज्य था । इस में गुजरात, महाराष्ट्र और कर्नाटक ये तीन भाषिक प्रदेश समाविष्ट हो गये ।

सीर्फ महाराष्ट्र की राजनीति में नहीं भारत की राजनीति में भी भाषिक राज्यों की माँग का आंदोलन बढ गया । भारत के काँग्रेसपक्षीय केंद्रीय सत्ताधारी भाषिक राज्य निर्मिति के संबंध में साशंक मन:स्थिति में थे, परंतु भाषिक प्रदेश राज्यों की माँग अत्यंत गगनभेदी आवाज से होने लगी । आंध्र में इस प्रश्न का तकाजा बढ़ गया । प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरूजीने स्वतंत्र आंध्र राज्य की योजना संसद के सामने रखी और आंध्र की माँग को

स्वीकृत किया। १९४६ से संयुक्त महाराष्ट्र की माँग का आंदोलन शुरू हुआ। इस आंदोलन में महाराष्ट्र के साहित्यकारों ने अगुआई की। साहित्यकारों द्वारा शुरू किया आंदोलन का जनता के आंदोलन में रूपांतर हो गया। इसका आश्चर्यकारक प्रत्यंतर संयुक्त महाराष्ट्र के आंदोलन में मिल गया। भारत सरकारने भाषावार प्रांत रचना के लिए फाजल अली आयोग की स्थापना की। उस आयोग की रपट १९५५ के अक्तूबर में प्रसिद्ध हुई। तब महाराष्ट्र के काँग्रेस पक्ष में संयुक्त महाराष्ट्र की माँग का प्रस्ताव एकमतसे पारित किया। फाजल अली आयोग ने संयुक्त महाराष्ट्र की माँग को स्वीकृत नहीं किया।

□ द्विभाषिक बम्बई राज्य

१ नवंबर १९५६ को द्विभाषिक बम्बई राज्य निर्माण हुआ। उस द्विभाषिक बम्बई राज्य के मुख्यमंत्री के रूप में यशवंतरावजी चव्हाण ने सत्ता अपने हाथ में ली। उस समय संयुक्त महाराष्ट्र के आंदोलन को अत्यंत विशाल, उत्कट और भव्य रूप प्राप्त हुआ था। भव्य मोर्चे और बड़ी विस्तृत प्रचंड सभाओं से संपूर्ण महाराष्ट्र क्षुब्ध होकर खड़ा हो गया था। मोरारजी देसाई के शासनकाल में, १९५५ से १९५६ तक के कार्यकाल में आंदोलन दबाने के लिए १०५ लोग मारे गये और हुतात्मा हुए।

फाजल अली आयोग महाराष्ट्र की माँग अस्वीकृत करने पर महाराष्ट्र काँग्रेस में गरम और नरम दल ऐसे दो गुट पडे थे। भाऊसाहेब हिरे गरम (उग्र) दल के नेता थे। संयुक्त महाराष्ट्र की लडाई बढ रही थी। भाऊसाहबजी हिरे संयुक्त महाराष्ट्र के आंदोलन को समर्थन दे रहे थे। यशवंतरावजी चव्हाण मन से संयुक्त महाराष्ट्र के माँग के पुरस्कर्ता थे। पर समय आने पर काँग्रेस से फूटकर आंदोलन में सामील होने के लिए उत्सुक नहीं थे। इसलिए मोरारजी देसाई नेता के लिए खडे नहीं हुए। इसलिए उन्होंने यशवंतरावजी को पक्षनेता के रूप में खड़ा किया। यशवंतरावजी चव्हाण पक्षनेता के रूप में विजयी हुए। यह सारा इतिहास आँखों के सामने होते हुए भी यशवंतरावजी ने यह कठिन, बड़ी जिम्मेदारी लेने पर उन्होंने कहा कि 'मैं एक भी गोली नहीं चलाऊँगा। फिर भी राजकारोबार अच्छी तरह चलाऊँगा।' उन्होंने बडी होशियारी और कुशलता से राज्य चलाया। पंडित जवाहरलाल नेहरूजी जैसे महाराष्ट्र स्थापना के बारे में साशंक होनेवाले वरिष्ठ नेताओं के गले उतार दिया कि गुजराथी, मराठी और कानडी इन तीन भाषिक जनताओं के नेताओं की

एक राज्य में रहकर मन से सहकार्य से काम करने की तैयारी नहीं है । अन्त में यशवंतरावजी ने यह भी कहा कि अगले सार्वत्रिक चुनाव में काँग्रेस महाराष्ट्र और गुजराथ राज्य में नहीं आ सकेगी । इन दो राज्यों में काँग्रेस की पराजय होगी । यह बात वरिष्ठ नेताओं के गले उतर गयी । वऱ्हाड (विदर्भ), मराठवाडा और कोकण के साथ उत्तर-दक्षिण महाराष्ट्र को मिलाकर मराठी भाषिक राज्य स्थापन करने का विधेयक संसद और राज्यसभा ने स्वीकृत किया। १ मई १९६० को यशवंतरावजी के नेतृत्व में महाराष्ट्र राज्य की स्थापना हुई । १९४६-६० तक के कालखंड में यशवंतरावजी चव्हाण की बेरीज की राजनीति सफल हुई । मैत्री, सद्भावना, शुद्ध चारित्र्य और व्यावहारिक होशियारी इन सद्गुणों के कारण यशवंतरावजी यशस्वी हुए ।

□ महाराष्ट्र का सर्वांगीण विकास

१९५६ से लेकर १९६२ तक के छः वर्षों के शासन काल में यशवंतरावजीने महाराष्ट्र के सर्वांगीण विकास की नीव डाली । गरीब मनुष्य को शिक्षा के संबंध में कहीं समस्या न हो, इसलिए उन्होंने शिक्षाविषयक महत्त्वपूर्ण बिल अमल में लाया । ग्रामीण भागों की दुर्दशा दूर करने के लिए स्थानिक स्वराज्य संस्था को समर्थ बनाने का कानून पारित किया । सहकारी संस्था का विस्तार कर के महाराष्ट्र के कृषि-औद्योगिक अर्थव्यवस्था की नीव डाली । इस अवधी में यशवंतरावजी की महाराष्ट्र में राजनैतिक कर्तृत्व की कीर्ति सारे भारत में तेजी से फैल गयी ।

□ रक्षामंत्री

१९६२ में चीन ने भारत पर आक्रमण किया । इस आक्रमण तक 'हिंदी-चिनी भाई-भाई' की भावना में भारतीय राज्यकर्ता नेतागण मग्न थे । इस समय के प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरूजी के सच्चे मित्र कृष्णमेनन थे । उन्हें इस आक्रमण की तनिक भी चिंता नहीं आयी । उनके विरुद्ध लोगों का क्षोभ चरणसीमा तक पहुँचा । संसद ने और राज्यसभाने कृष्णमेनन को हटाने की माँग की । यशवंतरावजी ने महाराष्ट्र के विकास का भविष्यकालीन चित्र अपने सामने रखकर महाराष्ट्र का कारोबार चलाया था । भारत सरकारने उन्हें रक्षा मंत्री पद स्वीकारने के लिए निमंत्रित किया । उन्होंने निरूपाय होकर महाराष्ट्र का मुख्यमंत्री पद छोड़ दिया और केंद्र सरकार में रक्षा मंत्री का पद स्वीकार किया ।

□ काँग्रेस की पराजय

१९७७ में लोकसभा के चुनाव में इंदिराजी के नेतृत्व में काँग्रेस की पराजय हुई । उसके बाद १९८० तक यशवंतरावजी और भूतपूर्व प्रधानमंत्री इंदिरा गांधीजी इन दोनों में दुरावा आया । बाद में १९८१ में यशवंतरावजी ने इंदिरा काँग्रेस में प्रवेश किया ।

इतना होने पर भी यशवंतरावजी के मन में कभी कटुता की, तिरस्कार की भावना निर्माण नहीं हुई । उनके मने में इंदिराजी के प्रति उदार भावना थी । ऐसी उदारता अन्यत्र दुर्लभ है ।

यशवंतरावजी की भूमिका में एक प्रकार की दूरदर्शिता थी । क्योंकि संयुक्त महाराष्ट्र की निर्मिति का निर्णय केंद्रीय सरकार लेनेवाली थी । विशेषत: काँग्रेस पक्ष की कार्यकारिणी इस संबंध में निर्णय लेनेवाली थी । निर्णय लेने की जिम्मेदारी बहुत बडे पैमाने पर पंडित जवाहरलाल नेहरूजी पर थी । यशवंतरावजी पहले से राष्ट्रीय एकता और राष्ट्र के राजनैतिक मुख्य प्रवाह या इस संबंध में अत्यंत सुस्पष्ट मत होनेवाले नेता थे और इसलिए उनकी भूमिका के बारे में गलतफहमी हुई । फिर भी वे अपनी भूमिका के आग्रही रहे । इसलिए उस मंच पर रहकर महाराष्ट्रीय जनता का मनोगत स्पष्ट करने का जब अवसर मिला तब उन्होंने अपना और जनता का मनोगत स्पष्ट किया और अपनी भावनाएँ व्यक्त की । पंडित जवाहरलाल नेहरूजी को इस प्रश्न के बारे में राजी करके उन्होंने अपने साथ लिया । इसलिए तो सच्चे अर्थों में संयुक्त महाराष्ट्र की निर्मिति होने के लिए बहुत बड़ा सहाय्य हुआ । इसका अर्थ संयुक्त महाराष्ट्र की निर्मिति के लिए संयुक्त महाराष्ट्र समितिद्वारा किया हुआ जनजागरण और उस में अनेक तरुणों का हौतात्म्य इसका महत्त्व कम नहीं है । समिति ने जनजागरण करने का और जनमत संघटित करने का बड़ा महत्त्वपूर्ण काम किया । इसलिए दिल्ली को यही बात दर्ज करनी पडी । पंडित जवाहरलाल नेहरूजी और तत्कालीन काँग्रेस अध्यक्षा श्रीमती इंदिरा गांधीजी इन दोनों को साथ लेने में चतुरता दिखाई । इसलिए संयुक्त महाराष्ट्र निर्मिति में उनका बहुत बड़ा हिस्सा है इस बात में दो मत नहीं हो सकते ।

□ जनतंत्र के समर्थक

यशवंतरावजी मूलत: जनतंत्र के समर्थक थे । सत्ता का विकेंद्रीकरण करना आवश्यक है । क्योंकि सामान्य मनुष्य को उस में शामिल होने का मौका देना

चाहिए । जब ऐसा मौका दिया जाय तो वे सामाजिक प्रश्न सुलझा देंगे । क्योंकि उन्हें सामाजिक प्रश्नों की जानकारी होती है । सत्ता के विकेंद्रीकरण का सूत्र कृति में लाने की दृष्टि से जिला परिषदों के संदर्भ में उन्होंने अपनी यह भूमिका प्रस्तुत की ।

जिला परिषद के द्वारा ग्रामीण नेतृत्व निर्माण करने की यशवंतरावजी की यह अपेक्षा बहुत बड़े अनुपात में यशस्वी हुई यह बात हमे निश्चित रूप से माननी पडेगी । महाराष्ट्र के अनेक जिला परिषद में से तैयार हुए तरुण विधान सभा में, संसद में और अनेक स्थानों पर जा सके और अच्छे काम कर सके, इसलिए वे राज्य स्तर पर मंत्री का काम करते समय चमक गये । यशवंतरावजी की यह बड़ी विजय थी ।

महाराष्ट्र में कारखाने या अन्य सहकारी आंदोलन बडे पैमाने पर बढ़ गये । इनमें सभी का सहयोग, सभीका समान अधिकार यह नीति बड़े पैमाने पर स्वीकृत की गयी । इसका सारा श्रेय यशवंतरावजी की पुरोगामी विचारधारा को है ।

तिलक भवन की बैठक में १९६४ में बैंकों का राष्ट्रीयीकरण होना चाहिए, यह प्रस्ताव यशवंतरावजी की प्रेरणा से महाराष्ट्र प्रदेश काँग्रेस समिति ने एकमत से संमत किया था । प्रत्यक्ष रूप से उसका निर्णय १९६९ में हुआ । भारत में वह भूमिका सबसे पहले महाराष्ट्र ने यशवंतरावजी के नेतृत्व में स्वीकृत की थी ।

महाराष्ट्र ने देश के प्रवाह में सतत रहना चाहिए ऐसा उनका दृष्टिकोन था । उनका यह दृष्टिकोन पंडित जवाहरलाल नेहरूजी के समय से चला आ रहा था । महाराष्ट्र को राष्ट्रीय मुख्य प्रवाह में रखने के लिए १९५६-५७ में उन्हें महाराष्ट्र के अनेक लोगों की नाराजगी सहन करनी पडी थी । उसी पद्धति से उनके कार्यकाल के आखिर भी 'अब हमे राष्ट्रीय मुख्य प्रवाह में जाना चाहिए', यह उनकी सुसंगत भूमिका थी । इसलिए यशवंतरावजी अपनी भूमिका का पुरस्कार करके आय काँग्रेस में चले गये । इस संबंध में उनकी आलोचना हुई । कुछ लोगोंने कहा कि – 'वे लाभ के लिए, कुछ कमाने के लिए गये है । कुछ प्राप्ति और लाभ की अपेक्षा से वे बहुत पल्याड गये थे । कुछ मिलेगा और कुछ लाभ होगा इसलिए वे इंदिरा काँग्रेस में गये ऐसा हेतुपूर्वक इलज़ाम लगानेवाला एक वर्ग है उसे यशवंतरावजी समझे ही नहीं थे ।'

यशवंतरावजी की प्रशासनकुशलता का अवश्य उल्लेख करना चाहिए ।

१९५६-५७ के समय राज्य में काँग्रेस पक्ष को नाममात्र बहुमत था.। एक ओर सर्वश्री एस.एम.जोशीजी, उद्धवरावजी पाटील, आचार्य अत्रेजी जैसे धुरंधर नेता थे। फिर भी उन्होंने निर्विवाद रूप से काम चलाया। अत्यंत कठिन काल में यशवंतरावजीने देश का गृहमंत्री पद सँभाला। उसी समय अनेक राज्यों में अलग अलग पक्षों की सरकारे थीं। देश में अनेक समस्याएँ थीं। उसके साथ ही पूर्वीय राज्य का प्रश्न कठिन हुआ था। उस काल में वे प्रभावी संसदपटू के रूप में प्रसिद्ध हुए। वे अच्छे प्रशासक भी हुए। उन्होंने देश को स्वच्छ प्रशासन दिया। उन्होंने सत्ता का दुरुपयोग किया ऐसा इलज़ाम विरोधी पक्ष के लोग भी नहीं लगा सके। प्रभावी प्रशासक के रूप में उनका लौकिक हुआ। नौकरशाही को विश्वास में लेकर वे काम करते थे।

राज्यकर्ताओं को दूसरों का दृष्टिकोन समझ लेना चाहिए। अखबार में होनेवाली आलोचना से अथवा व्यासपीठ पर से होनेवाले हमले से घबराना नहीं चाहिए और मन में गुस्सा और शत्रुत्व की भावना न रखते हुए दृष्टिकोन समतोल और वृत्ति शांत रखनी चाहिए। इस भूमिका का यशवंतरावजी को तूफान की स्थिति में बहुत उपयोग हुआ। राज्य किस पक्ष का है, वह कौन चलाता है, इसकी अपेक्षा वह कैसे चलाया जाता है इसे बहुत बड़ा महत्त्व है। चालू काल संक्रमण का है, उसके साथ कसौटी का भी है। जनतंत्र को आव्हान दिये जा रहे हैं। इन आव्हानों का मुकाबला करनेपर भारतीय जनतंत्र बना रहेगा, बढ़ेगा ऐसी यशवंतरावजी की श्रद्धा थी।

एक दिन यशवंतरावजी ने अपनी याद बताते हुए कहा कि, मैं उस समय डिफेन्स मिनिस्टर था। लेकिन उस समय उस खाते का एक वरिष्ठ नेता हमेशा यशवंतरावजी को विरोध करता था। इसलिए वो त्रस्त हो गये थे। परेशान होकर एक दिन नेहरूजी के नाम पर यशवंतरावजी ने इस्तीफा लिखकर भेज दिया। पंडित नेहरूजीने यशवंतरावजी को रात के नौ बजे बुलाया। वे गये तब नेहरूजी का गुलाब के समान होनेवाला चेहरा सूर्यबिंब के समान हुआ। अपनी शेरवानी के जेब में से यशवंतरावजी का इस्तीफे का कागज़ फडफडाते हुए उन्होंने कहा– 'यह क्या बदतमीजी है? मुझे इस्तीफा भेज देता है? किसलिए?' मैने उन्हें सब बताया। उन्होंने हँसकर कहा – 'मूर्ख है। वह जो नेता है न जो तुम्हे परेशान करता है, उसे रक्षा मंत्री होना था। इसलिए मैंने उसे तुम्हारे खाते में भेज दिया। मुझे कह देता तो मैं सब निपटा लेता। लेकिन इसके आगे ऐसा इस्तीफा भेज देने की बेवकूफी मत करो'। उन्होंने मेरा

इस्तीफा फाड़कर मेरे मूँह पर फेंक कर कहा – 'फिर से ऐसी मूर्खता न करना।' ऐसे थे प्रधानमंत्री पंडितजी ।

□ दलितों को न्याय

दलितों को न्याय मिलना चाहिए, उन्हें सामाजिक स्थान प्राप्त होना चाहिए इसलिए यशवंतरावजीने समझदारी से प्रयत्न किये । हरिजन-गिरिजन लोगों के काम की ओर अधिक ध्यान दिया । 'महार वतन' रद करके हरिजनों की लज्जित जीवन से मुक्तता की । डॉ. आंबेडकरजी की बहुत दिनों की माँग पूर्ण की । गिरिजनों के लडकों के लिए आश्रमशालाएँ शुरू की । उन्हें खेती उपजाऊ बनाने के लिए जंगल में जमीन की रिआयते दी । इतनाही नहीं, 'नहीं,' रे वर्ग के लोगों को आगे लाने का प्रयत्न किया । राज्य में नये नये उद्योग शुरू करने के लिए वे उद्योगपतियों से मिले और महाराष्ट्र में उद्योग शुरू करने के लिए प्रवृत्त किया । उन्होंने कानून से औद्योगिक वसाहत निर्माण की । जमीन, पानी, बिजली, शास्त्र आदि की सुविधा उपलब्ध कर कारखाने खडे करने के लिए उत्तेजन दिया । खेती के साथ कारखानों में उत्पादन बढाना चाहिए, मजदूरी भी अधिकाधिक उपलब्ध होनी चाहिए इसलिए चव्हाणजीने ये सब जानकर प्रयत्न किये । महाराष्ट्र आज उद्योग क्षेत्र में आगे दिखाई देता है, जगह-जगह पर औद्योगिक वसाहते खड़ी हैं इसका बहुत श्रेय यशवंतरावजी को जाता है ।

बालासाहेबजी खेर और मोरारजी देसाई इन दो मुख्यमंत्रियों के साथ तुलना की जाय तो यशवंतरावजी चव्हाण की भूमिका वास्तववादी और पुरोगामी लगती है । मूलोद्योग, शिक्षा योजना, शराबबंदी का अवास्तव कार्यक्रम, कुटुंब नियोजन, सख्ती की अंग्रेजी शिक्षा, कला, साहित्य आदि ललित कला के संबंध में प्रतिगामी, दुराग्रही भूमिका यशवंतरावजी चव्हाण नहीं ले सके । सभी प्रश्नों के संबंध में उनका मन खुला था । पुराने अनुभवों का और नये विचारों का स्वागत करने के लिए उनका मन हमेशा तत्पर और उत्सुक रहता था । सभी आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक प्रश्नों के संबंध में उनके विचार प्रकट हुए है ।

सहकारी आंदोलन के समान शक्कर कारखाने के संबंध में यशवंतरावजी ने अलग निर्णय लिया और महाराष्ट्र में शक्कर कारखाने के विकास को अलग मोड दिया । १९५७-१९५८ में सांगली जिले में शक्कर कारखाना शुरू करने

के लिए श्री. वसंतदादाजी पाटील ने अर्जी की थी । परंतु उस समय शक्कर कारखाने को मंजूरी देने की पद्धत तय की हुई थी । गन्ने की फसल कितनी है यह देखकर वह गन्ना कारखाने की जरूरत पूरी करेगा तो कारखाने को परवाना देने की पद्धत थी । यह निष्कर्ष यहाँ लगाया जाता तो यह कारखाना हो ही सकता । परंतु इस विभाग में गन्ने की फसल बढने की सुप्त शक्ति बड़ी थी । और उसके आधार पर शक्कर कारखाना उत्तम चलाने का पूर्ण संभव था । ऐसे समय तय की हुई लीक पर न जाते हुए अलग मार्ग से निर्णय लेने की आवश्यकता थी । इसलिए यशवंतरावजी ने वहाँ स्वतंत्र दृष्टि से निर्णय लिया । उन्होंने वहाँ पहले शक्कर कारखाने की मंजूरी दी थी उसके बाद वहाँ गन्ने की वृद्धि होने लगी । हमेशा का जो मार्ग था उसे दूर कर दिया। इसलिए वहाँ भारत में प्रथम श्रेणी का शक्कर कारखाना हो गया । आज इस शक्कर कारखाने से सैंकडों किसानों के जीवन में परिवर्तन आ गया है । इसका श्रेय वसंतदादाजी पाटील के अविश्रांत प्रयत्न को और नेतृत्व को देना पडेगा । इसके सभी कारण यशवंतरावजी के स्वतंत्र और सर्जनशील कारोबारविषयक निर्णय में खोजने पडेंगे ।

□ विद्यापीठ की स्थापना

मराठवाडा विद्यापीठ के स्थापना के समय उन्होंने लिया हुआ निर्णय भी उनके अलग कारोबारविषयक नीति की साक्ष देता है । द्विभाषिक राज्य में मराठवाडा हाल ही में शामील हुआ था । इससे पहले अनेक वर्ष मराठवाडा हैदराबाद संस्थान के राज्य में था । इसलिए मराठवाडा में शिक्षा की प्रगति लगभग सौ वर्ष नहीं हो सकी थी । मराठवाडा के शैक्षणिक प्रगति को सहाय्य करना जरूर था । यशवंतरावजी का यही विचार था कि मराठवाडा को स्वतंत्र विद्यापीठ देना चाहिए । उस समय विद्यापीठ के लिए आवश्यक महाविद्यालय वहाँ नहीं थे । पहले महाविद्यालयों की संख्या बढनी चाहिए और फिर विद्यापीठ अस्तित्व में आना चाहिए, ऐसा विचार कुछ शिक्षाविषयक तज्ज्ञोंने प्रस्तुत किया । इस पद्धति से पुणे विद्यापीठ, नागपूर विद्यापीठ और अन्य कुछ विद्यापीठों की स्थापना हुई थी । परंतु मराठवाडा के संबंध में हम इसी मार्ग से गये तो उसकी शिक्षा की प्रगति में देरी होगी, ऐसा डर यशवंतरावजी के मन में था । इसलिए उन्होंने वहाँ पहले विद्यापीठ और उसके बाद महाविद्यालय स्थापना का कार्यक्रम स्वीकार करने का निर्णय लिया । उसके अनुसार उन्होंने

वहाँ १९५८ में विद्यापीठ स्थापन करने का निर्णय किया । अगले दो-तीन वर्षों में अनेक महाविद्यालय शुरू हुए । तब मराठवाडा विद्यापीठ जैसे अनेक महाविद्यालय शुरु हुए । अब उनकी संख्या साठ थी । विद्यापीठ स्थापन करते समय यशवंतरावजी नियम और पुराने मार्ग पर से चले जाते तो मराठवाडा की शैक्षणिक प्रगति होने के लिए अनेक वर्ष लग जाते । सैंकडों विद्यार्थी इस विद्यापीठ से उपाधियाँ लेकर बाहर आ रहे हैं, इसका संपूर्ण यश यशवंतरावजी चव्हाण के निर्णय का है ।

यशवंतरावजी ललित कला के भोक्ता थे । मंत्रालय, संसद गृह, काँग्रेस पक्ष कार्यालय में काम करते हुए उन्होंने अपने कलाप्रेम की ओर अनदेखी नहीं की । उनका पठन बहुत था । शास्त्रोक्त संगीत और नाटकों के वे रसिक थे । महाराष्ट्र में संगीतकार, नाटककार और सिनेमा कलाकार, लेखक और कवि दिल्ली में आने पर यशवंतरावजी की भेट लिए बिना नहीं जाते थे और यशवंतरावजी भी उनका खुले दिल से स्वागत करते थे ।

□ साहित्यिकों की लडाख मोर्चे को भेट

इस संबंध में दो घटनाएँ याद आती हैं । यशवंतरावजी ने बिनती करने पर महाराष्ट्र में कुछ लेखक और कवियों की एक टुकडी ने लडाख में मोर्चे (सरहद पर सैनिकों के ठाने को) को भेट दी । इस टुकडी में ग. दि. माडगूलकर, पु.भा. भावे और वसंत बापट आदि समाविष्ट थे । उनके आवेशपूर्ण लेखन से रक्षाविषयक समस्या सामान्य जनता को समझने के लिए मदद हुई । अन्य राज्यों में होनेवाले लेखक और कवियों के ऐसे ही दौरे आयोजित किये गये । उनकी सूचना से ही लता मंगेशकर ने 'ए मेरे वतन के लोगों' यह प्रसिद्ध गीत ध्वनिमुद्रित किया । यह गीत लता मंगेशकर ने १९६३ में गणराज्य दिन के समारोह में नैशनल स्टेडियम पर गाया था । इस ग्रामोफोन रिकार्ड का बिक्री का उत्पन्न राष्ट्रीय रक्षा निधि में जमा कर दिया जाय तो बहुत अच्छा होगा, यह यशवंतरावजी की इच्छा कवि प्रदीप, संगीतकार सी. रामचंद्र और गायिका लता मंगेशकरने तुरंत पूरी की ।

संयुक्त महाराष्ट्र निर्मिति में संघर्ष काल में निर्माण हुआ काँग्रेसविरोधी वातावरण धीरे-धीरे शांत करने में यशवंतरावजी की राजनैतिक कुशलता सफल हुई । संयुक्त महाराष्ट्र की निर्मिति के लिए जो प्रखर आंदोलन हुआ था उसी कारण ही बम्बई के साथ संयुक्त महाराष्ट्र की निर्मिति हो सकी, यह सत्य

कभी भी इन्कार नहीं किया जा सकता । संयुक्त महाराष्ट्र निर्मिति के बाद बम्बई, पश्चिम महाराष्ट्र, मराठवाडा और विदर्भ इन सब विभागों में भावनात्मक ऐक्य निर्माण करने का ऐतिहासिक कार्य यशवंतरावजी ने किया । यह सत्य भावी इतिहासकार कभी भी भूल नहीं सकते । डॉ. गोपालरावजी खेडकर, दादासाहेब कन्नमवार, वसंतरावजी नाईक, नरेन्द्रजी तिडके, शेषरावजी वानखेडे, नासिकरावजी तिरपुडे, शंकररावजी चव्हाण, प्रा. चौहानजी, देशमुखजी आदि विदर्भ, वऱ्हाड, मराठवाडा में वैसेही पश्चिम महाराष्ट्र में असंख्य सहकारी मित्रों को इकठ्ठा करके संयुक्त महाराष्ट्र की भावनात्मक एकता की मजबूत नीव रखने का काम यशवंतरावजी के नेतृत्व में हुआ । उनके नेतृत्व में ही महाराष्ट्र काँग्रेस कमिटी को पुरोगामी विचार और दिशा देने का कार्य कार्यान्वित हुआ । भारत में उस दृष्टि से महाराष्ट्र प्रदेश काँग्रेस कमिटी सभी की चर्चा का और कुतूहल का विषय हुआ था । जिलानिहाय और प्रांतनिहाय कार्यकर्ताओं के असंख्य शिबिर आयोजित किये गये और उस में समता पर आधारित कृषि औद्योगिक समाजरचना निर्माण करने का निर्धार व्यक्त किया गया ।

यशवंतरावजीने उनके मुख्यमंत्री पद के शासन काल में सहकारी आंदोलनविषयक एक विधेयक तैयार किया । १८ अक्तूबर १९६० को यह बिल राजपत्र में जाहिर किया । राज्य घटना में मार्गदर्शक तत्त्वनुसार सहकारी आंदोलन का क्रमशः उचित विचार करने के लिए यह विधेयक चव्हाण सरकारने प्रस्तुत किया था । सहकारी कानून के अनुसार इस विधेयक ने बहुत सारी दुरुस्तियाँ की थी । इसलिए संस्था स्थापन करने के बारे में लवचिकता आयी और परिणामतः सहकारी क्षेत्र समाज के निचले स्तर तक पहुँचकर विस्तृत होने के लिए मदद हुई । लोगों ने उसका संपूर्ण फायदा उठाया । सहकारी आंदोलन ग्रामीण क्षेत्र में बडे अनुपात से छा गया । उस में से सहकारी कारखानदारी खडी हुई । हजारों लोगों को ग्रामीण विभाग में व्यवसाय और रोजगार मिल गया । पेट भरने के लिए शहर की ओर भागनेवाले लोगों की भीड़ बडे अनुपात में रोकी गयी और यहाँ की खेती सुधार को प्रेरणा मिल गयी ।

किसान महाराष्ट्र का प्राण है, किसान महाराष्ट्र के राज्यकर्ता है, यह बात प्रकट रूप से कहनेवाले यशवंतरावजी महाराष्ट्र के पहले मुख्यमंत्री थे । खेती और आवश्यक उद्योगधंदों के लिए व्यक्तियों को प्रशिक्षित करने के लिये खेतीविषयक शालाओं की निर्मिति की । महाराष्ट्र के प्रत्येक देहात में बिजली

पहुँचाने के लिए उन्होंने योजना बनायी । खेती क्षेत्र में सीलिंग ॲक्ट बनाया । यह देखकर भारत सरकारने दस-बारह वर्षों के बाद सीलिंग का कानून बनाया यानी कि कमाल जमीन धारणा विधेयक बनाया ।

शासकीय कार्य करते समय यशवंतरावजी मानवता को नहीं भूले । नवंबर १९६६ में उन्होंने केंद्रीय पदभार संभाला । तब सात-आठ दिनों में दिल्ली पुलिसों ने एकाएक आंदोलन शुरू किया । असंख्य पुलिसोंने उनके निवासस्थान को घेर दिया । इतनाही नहीं तो शाम के समय कुछ पुलिस अहातें में घुसे और उन्होंने घोषणा देने की शुरुवात की । यह सब खेल मन को मनस्ताप देनेवाला था । ये लोग दूसरे दिन भी कामपर नहीं गये । साहब ऑफिस के बाहर आये और उन्होंने पुलिसोंको संबोधित करके कहा, 'आप अपनी ड्यूटी पर वापस जाओ । आपके प्रश्न मैं समझ सकता हूँ । आप का बर्ताव उचित नहीं है । फिर भी मैं आप के बच्चों की तरफ देखकर कहूँगा कि यदि आप वापस ड्यूटीपर गए तो मैं सब भूल जाऊँगा । किसी ने आप को बहकाया है ।'

□ लोकप्रिय नेतृत्त्व

सन १९४२ से १९६२ तक श्री. बालासाहेबजी खेर, श्री. मोरारजी देसाई और यशवंतरावजी चव्हाण इन तीनों ने महाराष्ट्र के नेतृत्व की जिम्मेदारी संभाली । परंतु यशवंतरावजीने अपने कार्यकाल में वास्तववादी और पुरोगामी नीति अपनायी । इसलिए उनका नेतृत्व अधिक लोकप्रिय हुआ । इस काल में साहित्य, संस्कृति, समाजसुधार, सहकार, कृषि, शिक्षा, उद्योग आदि के बारे में महाराष्ट्र को प्रगति पथ पर ले जाने का महान कार्य उन्होंने किया । अपने कार्यकाल में सहकार के लिए पूरक योजना, सिंचन प्रकल्प शुरू किये । कोयना जल विद्युत प्रकल्प, मराठवाडा में पूर्णा प्रकल्प, विदर्भ में पारस थर्मल पॉवर स्टेशन ये यशवंतरावजीने महाराष्ट्र को दिये हुए बडे उपहार है । वरली दूध योजना, कोकण रेल्वे का श्रीगणेशा, भूमिहिनों को जमीन देना आदि योजना का आरंभ उनके कार्यकाल में हुआ । देश में स्थिर, पुरोगामी और सभी बारे में जागृत राज्य ऐसी महाराष्ट्र की प्रतिमा निर्माण हुई और वह आज भी कायम है । इसका संपूर्ण श्रेय यशवंतरावजी के पुरोगामी और वास्तव दृष्टिकोन है ।

जातिपर आधारित ग्रामीण समाजसुधारणा नष्ट करने का और स्वातंत्र्य, समता, बंधुत्व और न्याय इन तत्त्वोंपर आधारित नयी ग्रामीण समाजरचना

निर्माण करने का क्रांतिकारी कार्य उन्होंने किया । यह राज्य 'मराठा' राज्य होगा, या 'मराठी' राज्य होगा यह शक दूर कर महाराष्ट्र राज्य का नाम सार्थक किया। यह राज्य किसी एक विशेष जाति-जमाति का न होकर सभी मराठी जनता का राज्य है ऐसा यकीन उन्होंने दिलाया ।

यशवंतरावजी ने अपने कार्यकाल में डगमगानेवाली काँग्रेस को सँभाला और उसे योग्य दिशा दी । उन्होंने काँग्रेस कार्यकर्ताओं की एक बलशाली संघटना बनायी । जगह जगह पर काँग्रेस शिबिर लेकर काँग्रेस कार्यकर्ताओं को समाजबोधन की शिक्षा दी । उन्होंने कार्यकर्ताओं को एक वैचारिक अधिष्ठान प्राप्त कर दिया । वैसेही काँग्रेस संघटना और शासन इन दोनों में सुसंवाद स्थापित किया और तरुण पिढी को, काँग्रेस को बलवान करने की दृष्टि से प्रयत्न किया । यशवंतरावजी की वैचारिक विरासत लेकर आगे हुए शरद पवारजी जैसे अनेक तरुण उस पिढी के प्रतिनिधि है ।

इंदिरा गांधीजी की हत्या के बाद जो परिस्थिति निर्माण हुई थी उसे ध्यान में लेकर यशवंतरावजी ने राजीव गांधीजी का समर्थन किया। यशवंतरावजी को अपनी आयु में कुछ प्राप्त करने की अभिलाषा नहीं थी । स्वातंत्र्य के लिए वे अपने सोलहवे वर्ष में स्वातंत्र्यसंग्राम में कूद पडे थे । अपना देश अखण्ड रहना चाहिए यहीं उनकी दृढ इच्छा थी । काँग्रेस पर उनकी अनन्य निष्ठा थी । काँग्रेस ही उनके जीवन का धर्म बन गया था । उस काँग्रेस की शतसंवत्सरी देखने के लिए वे आज अपने में नहीं है, इसका अफसोस असंख्य काँग्रेस नेताओं को होता रहेगा ।

□ द्विभाषिक के मुख्यमंत्री

संयुक्त महाराष्ट्र के संबंध में उनकी भूमिका स्वच्छ थी । इस के साथ ही उनकी नेहरूनिष्ठा वैचारिक स्वरूप की थी । पं. नेहरूजी को वे भारतीय संस्कृति का प्रतीक मानते थे । १९५७ का चुनाव होने के बाद फिरसे यशवंतरावजी मुख्यमंत्री बने ।

जुलै १९६१ में पानशेत और खडकवासला बाँध फूटकर पुणे शहर जलमय हुआ । इन शहरों की अपरिमित हानी हुई । यशवंतरावजी तुरंत पूना गये । यशवंतरावजीने परिस्थिति का अनुमान लगाया और मदद पहुँचायी । मदद कार्य के लिए स. गो. बर्वेजी की अध्यक्षता में एक समिति नियुक्त की । बाढ़ के बाद १२ दिनों में इस आपत्ति की जाँच के लिए न्या. बावडेकर

कमिशन नियुक्त किया । लेकिन थोडे ही दिनों में बावडेकर ने आत्महत्या की । यशवंतरावजी सरकार पर आलोचना का तूफान उठा । उन्होंने आलोचना का उत्तर दिया और न्या. नाईक की अध्यक्षता में दूसरा कमिशन नियुक्त किया । यशवंतरावजी का यह जो विकासकार्य चल रहा था इसी बीच यह समस्या खडी हुई थी । यशवंतरावजीने अपनी कार्यकुशलता से यह समस्या सुलझायी ।

□ काँग्रेस की प्रचंड विजय

फरवरी १९६२ में महाराष्ट्र विधान सभा का चुनाव हुआ । यशवंतरावजी के नेतृत्व में काँग्रेस पक्ष की प्रचंड विजय हुई । यशवंतरावजी फिर मुख्यमंत्री हुए । यशवंतरावजी की लोकप्रियता शिखर तक पहुँची । लोग उन्हें 'प्रति शिवाजी' के नाम से संबोधित करने लगे । उन्होंने लोगों से कहा – 'मैं एक कार्यकर्ताओं का प्रतिनिधि हूँ । शिवाजी नहीं, प्रति शिवाजी भी नहीं । मुझे फँसाओं मत, तुम भी फँसो मत ।' पंडित जवाहरलाल नेहरूजी ने जाहिर सभा में यशवंतरावजी के राजकारोबार का गौरव किया । सर्वोदयवादी लोकनायक जयप्रकाशजी नारायण के अनुसार 'यशवंतरावजी देश में सर्वोत्तम मुख्यमंत्री है ।'

सोलापूर में 'सुशील रसिक सभा' इस संस्था का उद्घाटन करते समय ना. यशवंतरावजी चव्हाण ने जुलै १९८४ में किये हुए भाषण में कहा – 'साहित्य में राज्यकर्ताओं का हस्तक्षेप नहीं होना चाहिए ऐसे कहा जा रहा है । लेकिन राजनैतिक कार्यकर्ताओं को साहित्य में रुचि होगी और यदि वे साहित्य के क्षेत्र में आये तो क्या बिगडेगा?'

महाराष्ट्र में आज वैचारिक लेखन का अभाव दिखाई देता है । उस विषय में खेद व्यक्त करते हुए मा. यशवंतरावजीने आगे कहा – 'मराठी सारस्वत विविध वाङ्मय प्रकार से समृद्ध हो और मराठी भाषा संपन्न हो इसलिए एक व्यापक वैचारिक बैठक की अब बहुत आवश्यकता है ।'

सिंहासनपर आरूढ हुई अपनी मराठी भाषा में ओजस्वी, प्रभावी छटपटानेवाली साहित्य कृतियों को आकाश तक पहुँचने के लिए गरूड झेप अब फिर से लेनी चाहिए ।

शस्त्र की अपेक्षा शब्द और लेखन अधिक प्रभावशाली होता है । यह दुनिया बहुत कठिन है यह ध्यान में लेना चाहिए । एक कवि की कविता मुझे याद आती है । कवि कहता है कि – 'धज्जिया ओढकर सोना बेचने के लिए

बैठा तो चिडियाँ भी पास नहीं आयेगी । परंतु सोना ओढकर धज्जियाँ बेचने को बैठा तो भीड़ नहीं हटेगी ।' ऐसी अवस्था आज हुई है । इस अवस्था को दूर करने के लिए साहित्यकारों को प्रयत्न करना चाहिए ।

□ चव्हाणजी की जीत

केंद्रीय वित्तमंत्री श्री. चिंतामणरावजी देशमुख ने संयुक्त महाराष्ट्र के प्रश्न पर इस्तीफा दिया । और उनका इस्तीफा २६ जुलै १९५६ को स्वीकृत हुआ । उसके बाद पंद्रह दिनों के भीतर संसद ने द्विभाषिक बम्बई राज्य की कल्पना का समर्थन किया । एक मत से चुनाव हुआ तो नये राज्य के काँग्रेस विधिमंडल पक्ष का नेतृत्व करने के लिए मोरारजी देसाई तैयार थे । परंतु भाऊसाहेब हिरे ने मोरारजी भाई के विरुद्ध नेतृत्व पद का चुनाव लडने की घोषणा की तब मोरारजी पीछे हट गये । १६ अक्तूबर १९५६ को हिरेजी और चव्हाणजी में चुनाव हुआ । इस चुनाव में यशवंतरावजी की जीत हुई ।

चव्हाणजीने मुख्यमंत्री के रूप में बम्बई राज्य के सूत्र अपने हाथ में लिये । जाहिर सभा लेना और भाषण करना काँग्रेस के लोगों को असंभव और कठिन हो रहा था । पत्थरों की और जूतों की बौछार व्यासपीठपर होती थी और नेताओं को हमेशा पुलिस की रक्षा लेनी पडती थी । काले झंडों से नेताओंका स्वागत होता था । लोग पुलिसों का घेरा तोडकर नेताओं की मोटर गाडियों को घेरा डालते थे और संयुक्त महाराष्ट्र की घोषणा देते थे । संतप्त जमाव को काबू में रखने का कष्टप्रद काम पुलिसों को करना पडता था ।

मार्च १९५७ में दूसरा सार्वत्रिक चुनाव हुआ । यशवंतरावजी १७०० मतों से विजयी हुए । इस चुनाव में काकासाहेजी गाडगील, हरिभाऊजी पाटसकर, पी.के. सावंतजी और डी. के. कुंटेजी जैसे अनेक नेता चुनाव में पराजित हो गये । इस चुनाव के बाद केवल छः महिनों में महाराष्ट्र प्रदेश काँग्रेस समिति के नेताओं को संरक्षणात्मक भूमिका लेनी पडी । यशवंतरावजी महाराष्ट्र काँग्रेस में से पुराने नेताओं को बाजू हटाकर अपने समर्थकों को ले आये । महाराष्ट्र काँग्रेस को बलवान बनाने के लिए उन्होंने विचारपूर्वक योजना बनायी । ३० नवंबर १९५७ को प्रतापगडपर छत्रपती शिवाजी महाराज के पुतले का उद्घाटन करने के लिए पंडित जवाहरलाल नेहरूजी को बुलाया । महाराष्ट्र काँग्रेस समिति के नेताओं को प्रधानमंत्री के इस भेट का फायदा लेकर ग्रामीण विभाग में भी बहुत लोगों का हमे समर्थन मिलता है यह दिखाना था ।

यशवंतरावजी इस कार्यक्रम में यशस्वी हुए । उन्होंने पंडित नेहरूजी को यह भी दिखाया कि पश्चिम महाराष्ट्र में काँग्रेस जिन्दा है ।

फिर भी उप-चुनाव में काँग्रेस हार गयी । बम्बई और मराठवाडा में हुए पराभव से नेताओं को आश्चर्य का धक्का लगा । इसलिए स. का. पाटीलजी ने प्रधानमंत्री को पूर्वनिर्णय के पुन:विचार की माँग किये बिना महाराष्ट्र में लोगों के मन जीते जा नहीं सकेंगे यह उन्होंने पहचाना । २३ अगस्त १९५८ के औरंगाबाद में हुई सभा में भाषण करते हुए कहा – 'संस्था का पूर्वनिर्णय बदलने के लिए सदस्यों के मन शांतिपूर्ण तरीके से मोड दिये जाय तो मेरी कोई बाधा नहीं होगी' अक्तूबर १९५८ में नेहरूजी ने हैदराबाद में अपनी साथियों के साथ चर्चा में बम्बई राज्य के विभाजन का विषय निकाला था । नेहरूजी के चरित्रकार एम. गोपालजी के मतानुसार – 'इस प्रश्न का सर्वांगीण विचार करने के लिए प्रधानमंत्रीजी ने निजी बैठक बुलायी थी ।' बैठक में पंतजी, मोरारजी और यशवंतरावजी चव्हाण उपस्थित थे । इस संबंध में निर्णय लेनेवालों का दृष्टिकोन जानकर चव्हाणजी ने उन्हें बताया कि द्विभाषिक राज्य चलाना दिन-ब-दिन कठिन हो रहा है । बम्बई मंत्रीमंडल में दो गुट पडे थे । यह बात बहुत लोग जानते थे और यशवंतरावजी बडे प्रयत्न से उन्हें सँभाल रहे थे । इस प्रश्न का अभ्यास करने के लिए काँग्रेस की नयी अध्यक्षा श्रीमती इंदिरा गांधीजी की मदद करने के लिए नौ सदस्यों की समिति नियुक्त की थी । पंतजी इस समिति के अध्यक्ष थे । प्रादेशिक लेन-देन की बहुत बाधाएँ निर्माण नहीं हुई । क्योंकि डांग जिला और ठाणे तथा पश्चिम खानदेश में अनेक गाँव गुजरात को देने की बात यशवंतरावजीने कबूल की थी । विभाजन के समय आर्थिक प्रश्न पर वाद निर्माण हुआ था । इसलिए गुजरात को दस वर्षोंतक अर्थसहाय्य देने के लिए यशवंतरावजी तैयार हुए । १ मई १९६० को बम्बईसह नया संयुक्त महाराष्ट्र राज्य अस्तित्व में आया । यशवंतरावजी ने बातचीत से अंतिम ध्येय प्राप्त किया । फिर भी उन्होंने जनता को श्रेय दिया । इस संबंध में विरोधी पक्षने जो आव्हान दिया था राज्यकर्ता पक्ष ने भी इस आव्हान को प्रतिसाद दिया । इसलिए अंतिम ध्येय प्राप्त हुआ ।

५ | यशवंतरावजी के निर्णय और कार्यनीति

बीसवी शताब्दी में महाराष्ट्र में आधुनिक नेताओं में यशवंतराव चव्हाण का स्थान अग्रगण्य है । महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री पद के साथ ही केंद्र सरकार में रक्षा, अर्थ, विदेश, गृहमंत्री पद से लेकर आंतरराष्ट्रीय स्तर पर कार्य करते समय संसार में कूटनीतिज्ञ, राजनैतिक प्रज्ञावंत, अर्थशास्त्रज्ञ, राजनैतिक सत्ताधारी आदि में उनका व्यक्तिमत्त्व निखर उठा । द्विभाषिक महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री पद के सूत्र उन्होंने अपनी उम्र के ४२ वे वर्ष में हाथ में लिए । इतनी तरुण उम्र में मुख्यमंत्री पद का बहुमान मिले हुए वे पहले मुख्यमंत्री थे । उनका मुख्यमंत्री पद का कार्यकाल खूब मशहूर हुआ ।

महाराष्ट्र में जनसामान्य के हित के लिए यशवंतरावजी ने १९५७ से १९६०-६२ के काल में जो निर्णय लिये, जनता का सहकार्य लिया, प्रशासन को गति दी उसके कारण महाराष्ट्र की सामाजिक, आर्थिक, औद्योगिक, खेती और शिक्षाविषयक सूरत-शक्ल पूरी तरह से बदल गयी । इसलिए महाराष्ट्र की देश में पुरोगामी और सभी क्षेत्रों में जागृत राज्य के रूप में भारत में प्रतिमा निर्माण हुई और वह आजतक स्थायी रूप से विद्यमान है ।

ग्रामपंचायत और उसके संघटनपर उन्होंने अपना ध्यान केंद्रित किया । ग्रामपंचायत यह जनतंत्र की नींव है । ये संस्थाएँ केवल देहातों का नागरी कारोबार चलानेवाली संस्थाएँ नहीं रहनी चाहिए । उनपर देहात में समाज जीवन के सर्वांगीण विकास की जिम्मेदारी है, ऐसी यशवंतरावजी की धारणा थी । देहात स्वावलंबी हो, जनतंत्र की स्थापना देहात में हो, इसलिए ग्रामपंचायत, सहकार संस्था और शाला इन्हीं के सहयोग से पुनरुज्जीवन करनेवाला ग्रामपंचायत का कानून उन्होंने बनाया । सत्ता का विकेंद्रीकरण कर के देहाती आदमी को राजनैतिक सबक सिखाने का प्रयत्न यशस्वी हुआ ।

पार्लमेंटरी सेक्रेटरी और विविध विभागों के मंत्री के रूप में उनका कार्य अच्छा हुआ। उस में से उनकी प्रशासकीय कुशलता और पुरोगामी विचारधारा का अनुभव आया। उस काल में यशवंतरावजी में होनेवाले गुण विशेष रूप से प्रकट हुए। उस समय राजनैतिक वातावरण तप्त था। संयुक्त महाराष्ट्र का आंदोलन जोरों पर था। १ नवंबर १९५६ को द्विभाषिक बम्बई राज्य अस्तित्व में आया। इस विशाल द्विभाषिक राज्य का काँटोभरा मुकुट यशवंतरावजीने स्वीकार किया। बम्बई राज्य भारत में सभी राज्यों में विस्तार से बड़ा था। परंतु ये बड़े राज्य का कारोबार उम्र से सब में छोटे मुख्यमंत्री होनेवाले यशवंतरावजी ने बडी सूझ-बूझ संभालकर सब पर अपना प्रभाव डाल दिया।

लोगों का, लोगों के लिए और लोगों द्वारा चलाया गया यह राज्य है। लोगों के हित के लिए यशवंतरावजी ने अधिकारों का और काम का विकेंद्रीकरण करने का महत्त्वपूर्ण निर्णय लिया। लोगों की दृष्टि से यह आवश्यक था। मामूली और दैनंदिन कामों के लिए लोगों को इस सिरे से उस सिरे तक राजधानी की ओर जाना न पडे, उनका काम जल्दी और बिना कष्ट से हो, इस उद्देश से उन्होंने राज्यों का छः विभागों में विभाजन किया। राजकोट, अहमदाबाद, बम्बई, पुणे, औरंगाबाद और नागपूर ये विभागों के मुख्य स्थान बनाये गये।

छः विभाग में विभाजन करते समय सचिवालय के विभाग के काम में भी फेरबदल किया। नियोजन और विकास विभाग का काम देखने के लिए विकास आयुक्त की नियुक्ति की। नागपूर और औरंगाबाद में रेव्हेन्यु ट्रायब्युनल की बेंचेस शुरू की। नागपूर और राजकोट में हायकोर्ट के बेंचेस स्थापन करने का उन्होंने महत्त्वपूर्ण निर्णय लिया। राज्य का आकार और बोझ ध्यान में लेकर सचिवालय में विभागों की और खातेप्रमुखों के कार्यालयों की २५ प्रतिशत वृद्धि करने की एक योजना भी उन्होंने बनायी। कारोबार सुलभ करने की दृष्टि से सरकारी सभी विभाग और उनके कार्यालयों का एकत्रीकरण आवश्यक था। उसके लिए एक स्वतंत्र इमारत की आवश्यकता थी। मुख्यमंत्री पद के सूत्र हाथ में लेने के बाद केवल १२ दिनों में उन्होंने बम्बई में सचिवालय के भव्य छः मंजिले इमारत का शिलान्यास मोरारजीभाई के करकमलोंद्वारा किया और उसके तुरंत बाद काम का प्रारंभ किया।

सत्ता ग्रहण करने के बाद केवल १५ दिनों में यशवंतरावजी ने राज्य में दौरा करके नये राज्य के विषय में जनता के मन में विश्वास निर्माण करने का

प्रयत्न किया। विभागीय विकास के कामों को गति देने के लिए उन्होंने सलाहगार मंडल की स्थापना की। राज्य के सभी भागों में औद्योगिक कंपनियाँ थी। उनके उद्योगधंदे की जरूरते पूरी करने के लिए उन्होंने बम्बई राज्य फायनान्शियल (अब का महाराष्ट्र राज्य वित्तीय महामंडल) कार्पोरेशन की स्थापना की। उद्योग विभाग में सभी अधिकारियों की बैठक बुलाकर उन्हें राज्य में सभी सामग्री का ज्यादह से ज्यादा उपयोग कर लेने की आवश्यकता पर बल दिया।

नाट्यकला को उत्तेजन देने के लिए २.१६ लाख रुपयों की योजना बनायी। नाटकों के पुस्तकों को पुरस्कार, उत्साही कलावंतों का नाट्य महोत्सव, खुले नाट्यगृहों की निर्मिति, विपन्न अवस्था में कलावंतों को सहाय्य, संगीत और नाट्य शालाओं को अनुदान, तमाशों को पुरस्कार आदि योजनाएँ महाराष्ट्र में यशवंतरावजीने शुरू करके प्रशासकीय गुणों के साथ अपनी रसिक और कलाप्रेमी वृत्ति का परिचय जनता को कर दिया।

यशवंतरावजीने संपूर्ण राज्य का दौरा किया। उन्होंने सभी विभाग में असंतोष कम करने का और सभी के मन जोड़ने का प्रयत्न किया। अपने विनम्र और मिठास भाषणों से उन्होंने जनता के मन जीते। इनकी यह बड़ी विजय थी। भारत के हित में ही महाराष्ट्र का हित समाया हुआ है, यही बात सभी को समझायी। यह जनतंत्र राज्य चलाने के लिए, समृद्ध करने के लिए उन्होंने सभी लोगों को सहकार्य का आवाहन किया था। यशवंतरावजी की लोकप्रियता बढ़ रही थी। फिर भी संयुक्त महाराष्ट्र आंदोलन का जोर कम नहीं हुआ था। विरोधी पक्ष की ओर से उनकी आलोचना होती थी। इसके बाद छः महिनों में यशवंतरावजी को फिरसे चुनाव के सामने जाना पडा। १२ अप्रैल से फिर से यशवंतरावजी मुख्यमंत्री बने। विशुद्ध, कार्यक्षम, निःपक्षपाती कारोबार का विश्वास देकर उनका कार्यकाल फिर शुरू हुआ।

पंचवार्षिक योजनाएँ शुरू हुई थी। औद्योगीकरण के और जमीन सुधार के क्षेत्र में उत्पादन कार्य को प्रेरणा मिलनी चाहिए। उस पद्धतीसे नीति तैयार करना और उसके साथ सभी को न्याय मिला देना सरकारने अपना कर्तव्य मान लिया था। यशवंतरावजी ने औद्योगीकरण की एक सर्वंकष योजना बनायी थी। उत्पादन का लाभ मालिक, श्रमिक और जनता इन सभी को हो और उस में समानता और एकसूत्रता हो इस पर उन्होंने बल दिया।

उद्योगधंदों के विकास से देश की अर्थव्यवस्था ही नहीं तो देश के सामर्थ्य

में भी महाराष्ट्र ने बहुमूल्य योगदान दिया ऐसा उनका दृष्टिकोन था । उद्योगों की वृद्धि केवल शहर में हो जाने से शहर और देहात उन दोनों में खाई अधिक बढती जा रही थी । उसमें से अनेक समस्याएँ निर्माण हो जाती हैं । उसे ध्यान में रखते हुए ग्रामीण जीवनके नागरीकरण को बढावा दिया ।

जमीन सुधार से लाखों किसान बांधवों के जीवन पर महत्त्वपूर्ण परिणाम होते है । यह प्रश्न मानवी और आर्थिक स्वरूप का होने से वह सहानुभूति से और कल्पकता से सुलझाने पर उन्होंने जोर दिया । राज्य में प्रत्येक समाज को, प्रदेश को और गुट को उचित और न्याय्य बर्ताव मिलना चाहिए ऐसी नीति उन्होंने अपनायी । ये सब कार्य करनेवाले प्रशासन की कार्यपद्धति भी निश्चित की । उन्होंने शासन यंत्रणा को जनता के जरूरतों के संबंध में जागृत रहने की सलाह दी ।

लोगों को विश्वास में लेने के लिए उन्होंने जाहीर किया कि जिस समय मुख्यमंत्री एकाध जिला, तहसील को भेंट देने के लिए आ जायेंगे, उस समय वहाँ के लोग उनकी भेट लेंगे और अपनी शिकायते और समस्याएँ कह देंगे । इसलिए वे एक-डेढ घंटे का समय लोगों के लिए सुरक्षित रखते थे । जनता की शिकायते और समस्याएँ सुनने की दृष्टि से इस निर्णय का अनुकूल परिणाम हुआ ।

शिक्षा, खेती, अर्थव्यवस्था, उद्योग-कारोबार का विकेंद्रीकरण, सहकार, बाँध, नहरे, कला, वाङ्मय, भाषा, साहित्य और संस्कृति, कृषिउद्योग, दुग्धोत्पादन आदि सभी क्षेत्रों की समस्याओं का अभ्यास कर उन्होंने पुरोगामी विचारधारा रखकर उस संबंध में निर्णय लिये और उसका अंमल भी शुरू किया । काम को गति दी और सभी विभागों का लगाम मुख्यमंत्री के नाते अपने हाथ में रखा । इसलिए उनका ध्येय साध्य हुआ । वे एक के पीछे एक जनकल्याणकारी निर्णय लेकर उसका अंमल जोर से कर सके ।

□ मुफ्त शिक्षा योजना

शिक्षाविषयक कार्य को गति देने के लिए पुस्तकी शिक्षा के साथ व्यावसायिक शिक्षा तक विविधांगी कार्यक्रम उन्होंने बडी मात्रा में शुरू किये । मूलोद्योग शिक्षा को बढावा दिया । प्रौढ शिक्षा की व्याप्ति बढायी । मुफ्त शिक्षा की योजना राज्य में यशवंतरावजी ने पहले पहल शुरू की । इसलिए शिक्षा के दरवाजे सभी के लिए खुल गये । इसका लाभ पिछडी जाति में होनेवाले लोगों

को अधिक हुआ । प्रारंभ में जिन पालकों का वार्षिक उत्पन्न ९०० रुपयों की अपेक्षा ज्यादा न हो ऐसे पाल्यों को मुफ्त शिक्षा का नियम लागू किया और जल्दी ही यह उत्पन्न की मर्यादा १२०० रुपयों तक बढा दी । (आज यह मर्यादा ४८०० रुपयों तक है ।) इस सुविधा से ग्रामीण भाग में शिक्षा का प्रसार होने के लिए अच्छी गति मिली । इस के साथ ही पाँचवी कक्षा से अंग्रेजी विषय ऐच्छिक किया । ग्रामीण भाग में विद्यार्थियों को अंग्रेजी पढाने की ओर भी ध्यान दिया । मराठवाडा विभाग में शिक्षा का प्रसार होने के लिए उन्होंने शिक्षाविषयक संस्थाओं को मुक्त हाथोंसे अनुदान दिया । उन्होंने मराठवाडा के लिए स्वतंत्र विद्यापीठ की स्थापना की । २३ अगस्त १९५८ को पंडित जवाहरलाल नेहरूजी के शुभ हस्तोंसे उस विद्यापीठ का उद्घाटन हुआ । इस समय पंडित नेहरूजीने चव्हाणजी के कार्य का मुक्त कंठ से गौरव किया । दक्षिण महाराष्ट्र के लिए यशवंतरावजीने अपने कार्यकाल में कोल्हापूर में शिवाजी विद्यापीठ की स्थापना की और १८ नवंबर १९६२ को राष्ट्रपति डॉ. राधाकृष्णन के करकमलोंद्वारा शिवाजी विद्यापीठ का उद्घाटन हुआ । उसके विकास के लिए यशवंतरावजीने ५० लाख रुपयों का प्रबंध किया । आर्थिक दृष्टिसे गरीब विद्यार्थियों के लिए इ.बी.सी.की सुविधा देकर या फीस माफ करके उनकी शिक्षा की सुविधा की । आदिवासी लडकों के लिए निवासी आश्रमशाला की स्थापना की । उच्च शिक्षा के लिए विविध शिष्यवृत्ति घोषणा की और उनका अंमल उनके कार्यकाल में शुरू हुआ ।

यशवंतरावजी ने सातारा सैनिकी स्कूल की स्थापना करने से नैशनल डिफेन्स अकादमी के लिए शिक्षा की सुविधा इस स्कूल में उपलब्ध हुई । भारत में इसी प्रकार का यह पहला सैनिकी स्कूल था ।

आदिवासी लडकों की शिक्षा के लिए उन्होंने एक महत्त्वपूर्ण निर्णय लिया । शिक्षा की गंगा आदिवासी के दरवाजे तक पहुँचाने की दृष्टि से उन्होंने आश्रमशाला की योजना बनायी । शिक्षा के क्षेत्र में क्रांतिकारक अनेक निर्णय यशवंतरावजी के नेतृत्व ने लिये । यशवंतरावजी ने कराड और औरंगाबाद में दो नये इंजिनिअरिंग महाविद्यालय खोल दिये । नागपूर में सरकारी इंजिनिअरिंग कॉलेज की स्थापना की । माध्यमिक शाला की फीस वृद्धि के कारण शासकीय तिजोरी पर बोझ पड रहा था । इसलिए यशवंतरावजीने फीस वृद्धि करने की घोषणा रद्द की ।

□ औद्योगिक उपनिवेश की स्थापना

राज्य में औद्योगिक उपनिवेश स्थापन करने की एक सर्वंकष योजना उस समय बम्बई राज्य सरकारने बनायी । शासन के साथ नगरपालिका, सहकारी संस्था और निजी उद्योग इन सब ने इस काम में सहयोग करना चाहिए ऐसी यशवंतरावजी की धारणा थी । अशासकीय संस्था को औद्योगिक उपनिवेश स्थापित करने के लिए अनुमति देनेवाला पहला बम्बई राज्य है । उस समय बम्बई राज्य में १५ औद्योगिक उपनिवेश स्थापन करने का तय किया गया । गंदी बस्तियाँ और बेकारी दूर करने की दृष्टि से घनी लोग बस्ती के शहरों में औद्योगिक उपनिवेश स्थापन करने की यह योजना थी । पानी, नाले, रेल सायडिंग, रास्ते, बिजली आदि सुविधाएँ इन उपनिवेश में करनी थीं । कोल्हापूर में उद्यमनगर और पुणे के हडपसर में उपनिवेश की स्थापना करने की योजना प्रत्यक्ष में साकार हो गयी । थोडे ही दिनों में चिंचवड, पिंपरी, भोसरी विभाग में ऐसे उपनिवेश स्थापित किए गये । छोटे और घरेलू उद्योग के लिए बॉम्बे स्टेट फायनान्शियल कार्पोरेशन की ओर से कर्ज देने की व्यवस्था की गयी ।

□ सहकार को प्रेरणा

सहकारी क्षेत्र विस्तृत करने के लिए और अनेक ग्रामीण जीवन की परिस्थिति में सुधार करने के लिए उन्होंने प्रेरणा दी । खेती के लिए कर्ज की पूर्ति करना, खेती के लिए और घरेलू उपयोग के लिए लगनेवाले वस्तु की बिक्री, खेती विकास, खेत माल की बिक्री, दुग्ध उत्पादकों की संघटना ऐसे विविध काम यशवंतरावजी के शासन ने शुरू किये । गृह निर्माण के सहकारी संस्था को प्रेरणा दी । इसलिए सहकारी आंदोलन देहात से शहर तक आ पहुँचा । ग्रामीण भागों में समाज सुधार के लिए उन्हें कर्जपूर्ति की सुविधा उन्होंने सहकारी बँक, भूविकास बँक, प्राथमिक भूविकास बँक के द्वारा कर दी । अगस्त १९५७ में यशवंतरावजी के सरकार ने राज्य में १८ सहकारी शक्कर कारखानों को दर्ज कर के देश में अग्रेसरत्व प्रस्थापित किया । नये शक्कर कारखाने शुरू करने के लिए शासन ने पूँजी की व्यवस्था की । आज शक्कर कारखानों के संबंध में देश में महाराष्ट्र को अग्रेसरत्व का जो मान-सम्मान मिला है, उसका श्रेय यशवंतरावजी के उस समय की नीति को है । यशवंतरावजी ने सहकारविषयक एक विधेयक तैयार करके वह विधानसभा में संमत कर

लिया । इस विधेयक से सहकारी संस्था स्थापन करने में लचीलापन आ गया ।

□ हल चलाएगा वही जमीनदार (मालिक)

किसान ही महाराष्ट्र का प्राण और वही महाराष्ट्र का राज्यकर्ता है, ऐसी यशवंतरावजी की धारणा थी । बम्बई राज्य ने नया काश्तकार कानून स्वीकार कर जो खेती करता है उसकी जमीन होती है इस तत्त्व का स्वीकार किया । इसलिए महाराष्ट्र के खेती क्षेत्र में और जमीन के मालिक के क्षेत्र में प्रचंड क्रांति हुई । इसलिए सर्वसामान्य किसान सरकार की ओर एक अपनत्व की दृष्टि से देखने लगा । १ अप्रेल १९५९ से टुकडेबंदी और टुकडे जोड यह कानून प्रत्यक्ष अमल में लाया । जमीन का क्षेत्र सलग होने की दृष्टि से इस कानून का उचित परिणाम हुआ । कानून बनाकर सरकारने जहागिरदारी पद्धती नष्ट की । खेत जमीन के कमाल धारणापर मर्यादा डालने का (सिलिंग) कानून कर दिया । इसलिए महाराष्ट्र राज्य पुरोगामी है यह सिद्ध हुआ ।

□ सिंचन योजना

महाराष्ट्र की खेती बरसात पर निर्भर है । खेती में फसल पैदा करने के लिए पानी मिलने के लिए हमेशा की व्यवस्था करने की दृष्टि से सिंचन योजना, उसके द्वारा पानी व्यवस्था, पानी की उपलब्धता और बिजली की निर्मिति आदि विविध हेतु से उन्होंने काम का नियोजन किया । इसलिए उन्होंने राज्य में इरिगेशन डिव्हिजन और सब डिव्हिजन स्थापन करके उपलब्ध पानी पूर्ति की सुविधा का निरीक्षण करने के आदेश दिये । उन्होंने बम्बई राज्य इरिगेशन बोर्ड की स्थापना की । सिंचन योजना और जल संपत्ति के संबंध में महाराष्ट्र का फिरसे एक बार संपूर्ण निरीक्षण करने के लिए स. गो. बर्वेजी की अध्यक्षता में राज्य सिंचन मंडल स्थापन किया ।

महाराष्ट्र का भाग्य प्रकाशित करने के लिए कोयना जल योजना का प्रारंभ १ मार्च १९५८ को यशवंतरावजीके करकमलों द्वारा उद्घाटन हुआ । योजना में पहला जनित्र भी १६ मई १९६२ में यशवंतरावजीके करकमलों द्वारा शुरू हुआ ।

मराठवाडा का क्रांतिकारी परिवर्तन करने के लिए पूर्णा प्रकल्प का प्रारंभ यशवंतरावजी के करकमलों से हुआ । विदर्भ में पारस थर्मल पॉवर स्टेशन यह भव्य दिव्य प्रकल्प यशवंतरावजी के कार्यकाल में पूर्ण हुआ । यह प्रकल्प

वैदर्भीय जीवन का औद्योगीकरण करने की दृष्टि से एक महत्त्वपूर्ण घटना है ।

□ सत्ता का विकेंद्रीकरण

यशवंतरावजी के कार्यकाल में सत्ता के विकेंद्रीकरण का कानून स्वीकृत हुआ था । बलवंत मेहता समिती ने सूचित की हुई विकेंद्रीकरण की सूचनाओं का विस्तृत विचार करने के लिए वसंतरावजी नाईक की अध्यक्षता में एक समिति नियुक्त की । इस समिती ने छ:-सात महिनों में अभ्यास करके अपना अहवाल पेश किया । यशवंतरावजीने वह अहवाल ७ अप्रैल १९६१ को विधानसभा में रख दिया । यह अहवाल विधेयक के रूप में ८ दिसंबर १९६१ को संमत हुआ । सरकार ने भी यह अहवाल स्वीकृत करने की बात जाहिर की । १ मई १९६२ को प्रत्यक्ष रूपसे जिला परिषद और पंचायत समिति अस्तित्व में आयी । इस प्रकार की योजना अंमल में लानेवाला महाराष्ट्र राज्य पहला राज्य है ।

□ मनोरंजन कर में छूट

नाट्य कला को प्रोत्साहन देने के लिए नाट्य महोत्सव, नाट्य कला के शिबिरों को उन्होने प्रोत्साहन दिया । अप्रैल १९५७ से चित्रपटों को मनोरंजन कर में छूट देने की नयी पद्धत लागू की । प्रादेशिक भाषा में उत्कृष्ट पुस्तकों को पुरस्कार जाहिर किये । यशवंतरावजी ने शासन की ओर से कलावंतों को आर्थिक साहाय्य देने की प्रथा शुरू की । बालगंधर्व को उनकी विपन्नावस्था में रु. ३०० मासिक मानधन शुरू किया । वैसेही राजकवि यशवंत को 'महाराष्ट्र कवि' उपाधि से विभूषित कर उन्हें आमरण ४०० रुपये मासिक मानधन देने का निर्णय लिया ।

□ महाराष्ट्र राज्य साहित्य और संस्कृति मंडल की स्थापना

१ मई १९६० को बम्बईसह संयुक्त महाराष्ट्र राज्य की निर्मिति हुई । नागपूर शहर का महत्त्व कायम रखने की दृष्टि से यशवंतरावजीने विधिमंडल का जाडे के मौसम का अधिवेशन नागपूर में कार्यान्वित करने का निर्णय किया । उसका अमल आज तक शुरू है । इस अधिवेशन में २१ दिसंबर १९६० को महाराष्ट्र राज्य साहित्य और संस्कृति मंडल का उद्घाटन यशवंतरावजीने किया । इस मंडल की स्थापना अर्थात महाराष्ट्र राज्य निर्मिति

के बाद सांस्कृतिक क्षेत्र में हुई एक महत्त्वपूर्ण घटना है । साहित्य और संस्कृति की वृद्धि के लिए और संवर्धन के लिए तर्कतीर्थ लक्ष्मणशास्त्री जोशीजी की अध्यक्षता में विद्वज्जनों की एक यंत्रणा खडी की ।

१७ मई १९६२ को वाई में साहित्य और संस्कृति मंडल ने विश्वकोष कार्यालय स्थापित किया । यशवंतरावजी ने उस कार्यालय का उद्घाटन किया । २३ मई १९६१ को पूना में लोकसाहित्य और लोकसंस्कृति संमेलन का आयोजन किया ।

□ मराठी राज्यभाषा

महाराष्ट्र राज्य निर्मिति के बाद मराठी भाषा को राज्यभाषा करने का यशवंतरावजी ने तय किया । उसके लिए भाषा संचालनालय की निर्मिति की गयी । सरकारी कारोबार में मराठी भाषा का माध्यम के रूप में उपयोग करने के लिए तुरंत उपाय किये गये । शासकीय कार्यालय में कारोबार मराठी भाषा में चलाने का निर्णय लिया । सभी तहसील कार्यालय में कारोबार, पत्रव्यवहार मराठी भाषा में करना चाहिए ऐसा निर्णय लिया गया ।

□ वरली दूध योजना

बम्बई शहर को दूध की पूर्ति करने के लिए वरली दूध डेअरी योजना तैयार की । यह तीन कोटी रुपयों की योजना थी । १९६१ में केवल १८ महिनों में उसका शुभारंभ हुआ । आरे डेअरी में डेअरी टेक्नॉलॉजी संस्था में भारतीय दुग्धालय पदविका अभ्यासक्रम यशवंतरावजी के कार्यकाल में शुरू हुआ । इस प्रकार का यह भारत में पहला अभ्यासक्रम है । संयुक्त राष्ट्र संघटना के अन्न और कृषि संघटना के द्वारा डेन्मार्क सरकार और भारत सरकार के सहयोग से दुग्ध-व्यवसाय के संबंध में दूसरी शिक्षा कक्षा उन्होंने आरे डेअरी में शुरू की ।

□ कोकण रेल का श्रीगणेशा

कोकण विभाग में दिवा-दासगाव मार्ग पर रेल शुरू कर कोकण में रेल लाने का काम यशवंतरावजी का है । दिवा-पनवेल रेल मार्ग का काम उन्होंने भारत सरकार की मंजूरी लेकर अपने कार्यकाल में शुरू किया ।

□ बौद्धों को सहूलियत

पददलितों को न्याय देने का एक महत्त्वपूर्ण निर्णय यशवंतरावजी ने लिया। हरिजनों को जो सहूलियते मिलती थी, वही सहूलियते बौद्ध धर्म स्वीकार करनेवालों की बंद कर दी गयी थी। बौद्ध धर्म स्वीकारने पर उनका सामाजिक, आर्थिक और शैक्षणिक पिछड़ेपन कम होनेवाला नहीं था। हरिजनों की मिलनेवाली सहूलियते बौद्ध धर्म स्वीकार करनेवालों को मिलनी चाहिए यह माँग यशवंतरावजी ने स्वीकार की। उन्होंने उन्हें सहूलियते देने के आदेश निकाले। इसलिए रिपब्लिकन पक्ष ने उन्हें धन्यवाद दिये।

नागपूर में जिस स्थान पर डॉ. आंबेडकरजी ने बौद्ध धर्म की दीक्षा ली, उस दीक्षा भूमि पर डॉ. आंबेडकर का स्मारक बनाने का निर्णय लिया। यशवंतरावजी के मन में डॉ. आंबेडकरजी के प्रति आदर था। इसलिए उन्होंने १४ अप्रैल को डॉ. आंबेडकरजी के जयंति निमित्त सार्वजनिक छुट्टी जाहिर की। हरिजन और बौद्ध लोगों की समस्याएँ सुलझाने के लिए यशवंतरावजी ने किये हुए प्रयत्न बहु-मूल्य है। उनका यह कार्य अन्य राज्यों के लिए आदर्शवादी एवं अनुकरणीय है।

□ हरिजन (महार) वतन पद्धत नष्ट

महाराष्ट्र में हरिजन वतन पद्धत अस्तित्व में थी। इस पद्धति से समाज का अध:पात हुआ था। उन्हें गुलामी का जीवन जीना पडता था। यशवंतरावजीने 'बॉम्बे इन्फिरिअर व्हिलेज वॉन्टस ॲबॉलिशन ॲक्ट १९५८' का कानून इस हरिजन वतन पद्धति को प्रतिबंध लगाया। वतन जमीन की तिगुणी किमत लेकर प्रबंधक मालिकों को स्वामित्व का हक वापस कर उनके कब्जे में दी। यह एक बडा ऐतिहासिक कार्य उन्होंने किया।

□ भूमिहीनों को जमीन देना

हरिजन वतन पद्धत नष्ट हुई। लेकिन उनका और अन्य पिछडी हुई जाति के पेट का प्रश्न सुलझा नहीं था। यह भूमिहीन वर्ग भूख से तडप रहा था। 'उन्हे रोटी के लिए, पेट के लिए जमीन दो' ऐसी माँग संसद सदस्य दादासाहेब गायकवाडजी ने की। यशवंतरावजी को यह माँग न्याय और उचित लगी। इसलिए उन्होंने भूमिहीनों को जमीन देने का काम शुरू किया। यशवंतरावजी का यह निर्णय क्रांतिकारी स्वरूप का था।

□ 'गुडी पाडवा' को छुट्टी

महाराष्ट्र राज्य की निर्मिति होने के बाद यशवंतरावजी ने गुडी पाडवा की छुट्टी देने का निर्णय लिया । सभी लोगों ने उस निर्णय का स्वागत किया । मंत्रियों के बंगलों के नाम अंग्रेज साहबों के थे । उनके बदले 'सह्याद्री', 'मेघदूत', 'रामटेक', 'वर्षा' आदि नाम दिये । इन से महाराष्ट्र को अभिमान लगता है ।

□ मुख्यमंत्री निधि

आर्थिक अभाव से अनेक सेवाभावी संस्था और संघटनाएँ संकट में पड जाती थी । इसलिए प्रथमत: यशवंतरावजी ने मुख्यमंत्री निधि की स्थापना की । अनेक सेवाभावी संस्थाओं को इस निधि से मदद मिलती है । इतना नहीं, कोई गंभीर बीमार पडा, किसी के हृदय का ऑपरेशन करना हो, किसी की जलकर मृत्यू हो गयी हो, किसी का घर जला हो इन सब को इस निधि से मदत मिलती है ।

□ अग्निकांड में पीडित लोगों को कर्ज की मुआफी

म. गांधीजी के वध के बाद महाराष्ट्र में जो अग्निकांड हुआ उस में अनेक ब्राह्मणों के घर, दुकाने, कारखाने जल गये । उनके पुनर्वसन के लिए शासनने उन्हें कर्ज रूप से मदद की । इनकी गृहस्थी तहस-नहस हो जाने से कर्ज का भुगतान करना उनकी शक्ति के बाहर का काम था । महाराष्ट्र निर्मिति का मौका साधकर यशवंतरावजी ने उस दिन जले हुए पीडित लोगों के कर्ज मुआफ करने की घोषणा की । उनकी इस घोषणा का जोरदार स्वागत हुआ । उपकार की भावना से यह कर्ज मुआफ नहीं किया है, यह कहने के लिए वे नहीं भूले ।

□ महाराष्ट्र राज्य

महाराष्ट्र राज्य निर्मिति के बाद मराठी भाषिक राज्य का नाम 'बम्बई राज्य', 'बम्बई महाराष्ट्र राज्य', 'महाराष्ट्र' ऐसी विविध सूचनाएँ आयी थी । यशवंतरावजीने काँग्रेस व विरोधी पक्ष के सदस्यों को विश्वास में लेकर 'महाराष्ट्र राज्य' यह नाम निश्चित किया । विधान सभा में यह नाम एकमत से सहमत हुआ ।

☐ सीमा प्रश्न पर मध्यस्थ

महाराष्ट्र और म्हैसूर सीमा प्रश्नों के संबंध में चर्चा करते समय यशवंतरावजी ने अपने मत निर्भयता से कह दिये । इस प्रश्न पर उपाय सुलझाने के लिए मध्यस्थ नियुक्त करने की सूचना उन्होंने स्वीकार की ।

महाराष्ट्र का कारोबार स्वच्छ और समयपर करने के लिए किसी भी बात से समझौता नहीं किया । प्रशासन में उन्होंने उत्साह का और विश्वास का वातावरण निर्माण किया । उसे व्यवहारी और मानवता का दृष्टिकोन प्राप्त कर दिया । मुख्यमंत्री काल सें उनके कर्तृत्व की प्रतिमा ऊँचाई पर पहुँच गयी । प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरूजी ने जाहिर सभा में यशवंतरावजी का गौरव किया । जयप्रकाशजी नारायणने उन्हें सर्वोत्तम मुख्यमंत्री कहा । यशवंतरावजी महाराष्ट्र को पुरोगामी समृद्ध राज्य बनाने में व्यस्त थे । इस समय 'हिमालय' ने मदद के लिए 'सह्याद्री' को पुकारा और महाराष्ट्र का सह्याद्री हिमालय की मदद के लिए चला गया ।

विदर्भ में जुलाहों की सूत कताई की सहकारी मिल को नागपूर में शुरू करने के लिए यशवंतरावजीने ५० लाख रुपये खर्च की योजना को मान्यता दी ।

☐ स्वातंत्र्य आंदोलन में योगदान

स्वातंत्र्य आंदोलन में यशवंतरावजी स्वयं कूद पडे । क्रांतिसिंह नानाजी पाटील, यशवंतरावजी चव्हाण, वसंतदादाजी पाटील, किसनवीरजी ये उस समय सातारा जिले में अग्रगण्य लोग थे । परंतु इन सब में यशवंतरावजी की बौद्धिक ऊँची सबसे ज्यादा थी । इसलिए यशवंतरावजी का नेतृत्व सतत विकसित होता रहा । अपयश यह शब्द यशवंतरावजी को कभी भी मालूम नहीं था । और राजनीति में सुसंस्कृत दृष्टि से वादविवाद न करते हुए, गालियाँ न देते हुए सुसंस्कृत दृष्टि से राजनीति की जा सकती है यह बात उन्होंने महाराष्ट्र को दिखायी । और देश में महाराष्ट्र की अलग, उच्च और अच्छी प्रतिमा निर्माण की । स्वातंत्र्यपूर्व काल में लोकमान्यजी तिलक के कारण महाराष्ट्र देशभर में जैसा परिचित था वैसे स्वातंत्र्योत्तर काल में लगभग तीस वर्ष यशवंतरावजी के कारण महाराष्ट्र भारत देश में परिचित हुआ । दिल्ली में उत्तर भारतीय लोग यशवंतरावजी को 'सह्याद्री का शेर' कहते थे । यशवंतरावजी उचित मनुष्य को चुनते थे । वे अच्छे मनुष्य को अपने पास रखते थे । वे उन्हें

समर्थन देते थे । वे राजनीति में अधिक से अधिक सच्चाई से, ईमानदारी से काम करते थे । यशवंतरावजी ने निर्मल पद्धति से २५ वर्षोंतक राजकारोबार किया । संयुक्त महाराष्ट्र के आंदोलन में यशवंतरावजी ने महाराष्ट्र की अपेक्षा पं. नेहरूजी बडे हैं ऐसा विधान किया था । इसलिए उन्हें प्रचंड आलोचना सहन करनी पडी । उनके इस विधान के पीछे देशहित की भावना प्रधान थी । इसलिए लोकक्षोभ होने पर भी यशवंतरावजी ने अपना विधान पीछे नहीं लिया । देश के स्तरपर नेहरू की जैसे औद्योगिक विकास की नीति थी और विज्ञान को बढावा देने की भूमिका थी, नेहरूजी का जैसे साहित्य पर, संगीत पर, रसिकता पर प्रेम था वैसेही यशवंतरावजी का साहित्य, संगीत पर प्रेम था । वे साहित्यकारों और संगीतकारों में रममाण हो जाते थे ।

□ साहित्य और साहित्यकारों के प्रति आदर

यशवंतरावजी सुसंस्कृत मनुष्य थे । उन्हें साहित्य के बारे में अधिक आकर्षण था । ग.दि. माडगूलकर, रणजित देसाईजी, कवि यशवंतजी, पु.ल. देशपांडेजी, ना.धों. महानोरजी, व्यंकटेश माडगूलकरजी, श्रीनिवास कुलकर्णीजी आदि साहित्यकारों के सहवास के लिए वे लालायित हो जाते थे । समाज के मानस में जो होता है वह साहित्य में अभिव्यक्त होता है, या सामाजिक, राजनैतिक और साहित्यिक मूल्यों का एक दूसरे से अलगाव नहीं किया जाता, ऐसे उनके विचार साहित्यिक महफिल में साहित्यकार सुनते थे । सभी साहित्यिकों को - फिर वह नये रूप से आगे आया हुआ लक्ष्मण माने हो - वे उससे प्रेम से बर्ताव करते थे । स्व. भाऊसाहेबजी खांडेकर को उनके हृदय में मर्मस्थान था । भाऊसाहेब के 'पांढरे ढग' और 'दोन ध्रुव' इन दोनों उपन्यासों का उनपर बहुत प्रभाव पडा था । गरीबों के बारे में दया अथवा करुणा ने एक आदर्शवादी जीवन जीने की प्रेरणा इन दोनों उपन्यासों ने उन्हें दी । यशवंतरावजी के कराड में साहित्य संमेलन हुआ था । यशवंतरावजी भाऊसाहेब खांडेकरजी को धीरे-धीरे साहित्य संमेलन में ले आये थे । यह सब देखने के बाद मुझे ऐसा लगता है कि साहबजी की मूल प्रवृत्ती साहित्यिक की है । पर बहुत लोगों की समझ में यह बात नहीं आयी । उनका साहित्य और साहित्यिकों पर प्रेम यह एक राजनीति का भाग है ऐसा ये लोग मानते हैं । उससे साहबजी को बडे क्लेष हुए । 'शिवनेरीच्या नौबती', 'सह्याद्रिचे वारे', 'ऋणानुबंध' आदि उनके पुस्तकों में उनके साहित्यिक गुणों की प्रचीति आती

है । अन्त में उनका 'कृष्णाकाठ' प्रसिद्ध हुआ । और फिर सभी को साहित्यिक यशवंतरावजी का परिचय हुआ । लेकिन उस समय बहुत देर हुई थी । कराड के साहित्य संमेलन में उन्होंने कहा था– 'तुम साहित्यिक लोग जो सेवा कलम से करते हो वह हम राजनैतिक लोग वाणी (वाचा) से करते है ।'

सत्ता के राजनैतिक जंगल में रहकर उन्होंने सुसंस्कृतता छोडी नहीं । अनेक साहित्यिक उनके मित्र थे । उन्हें ग्रंथों का लोभ था ; शब्दों पर उनका प्रेम था । वे अपने भाषण में बहुत बार समुचित शब्दों का प्रयोग करते थे, यह सुनकर प्रथितयश साहित्यिक भी खुश हो जाते थे । उत्तम शब्दरचना को रसिकता से वे दाद देते थे ।

मराठी में मैने जो उत्तम वक्ता सुने हैं उन में यशवंतरावजी का बहुत उपर का क्रम लगता है । उनका बोलना बहुत फूर्तीला रहता था । इस गुण के कारण वे सभा जीत लेते थे । वे हजारो लोगों को मंत्रमुग्ध करते थे । समुचित भाषा, मृदु आवाज और समुचित शब्दरचना के कारण उनका भाषण परिणामपूर्ण होता था ।

सत्ता स्थान में रहते हुए साहित्य और संगीत का प्रेम उन्होंने कायम रखा था । पठन की धून कायम रखी थी । चव्हाणजी के निवासस्थान में सभी विचारों के साहित्यिक, संगीतकार और नाटककार इकठ्ठा हो जाते थे । दिल्ली देखने के लिए आनेवाले, हरिद्वार-ऋषिकेश यात्रा को जानेवाले महाराष्ट्रीय लोग चव्हाणजी के घर जाकर उनका अतिथिसत्कार लेते थे । उनके घर में कभी भीमसेन जोशीजी की संगीत की महफिल होती थी, तो कभी गझल-कव्वाली का कार्यक्रम होता था । राजनीति की व्यस्तता में ये सब करते थे, यह देखकर अनेक लोगों को आश्चर्य लगता था । उनके साथही वे विपक्षी लोगों का प्रेम से स्वागत करते थे । वे विपक्षी लोगोंद्वारा की गयी आलोचना का मन में गुस्सा नहीं रखते थे । इस बारे मे यशवंतरावजी की कुशलता विलक्षण थी । यह नेता, यह राजनीतिज्ञ, यह मंत्री, यह मनुष्य अलग था, न्यायी था । लेकिन काल कठोर होता है । उसके सामने किसी की कुछ नहीं चलती । कालाय तस्मै नमः । यशवंतरावजी अधिक दिन तक जिन्दा रहते तो.....

□ लोककला के प्रति रुचि

यशवंतरावजी का जीवन सर्वस्पर्शी था । उनके सद्‌गुणों के अनेक पहलू थे । वे अभिजात और शास्त्रीय संगीत के जैसे रसिक थे वैसे ही वे भावगीतों

के प्रेमी थे । नाट्य के प्रति उनकी बड़ी रुचि थी । कभी कभी वे महाराष्ट्र की कला अर्थात लोकनाट्य भी रसिकता से देखते थे । सर्वसामान्य जनता की प्रिय लावणी भी कभी कभी देखते थे । वे चित्रकला का भी आस्वाद लेते थे ।

□ सब की चिंता

दौरे पर होते समय साहब साथ आये हुए सब की स्वयं पूछताछ करते थे । क्या किसीने खाना खाया कि नहीं? क्या किसी को कुछ कम पडा है? इन सब बातों की वे पूछताछ करते थे । इसलिए सिपाही से लेकर अधिकारियोंतक लगता था कि साहब अपने कुटुंबप्रमुख है । श्री. अनंत शेटेजी साहब के साथ जलगाँव दौरेपर गये थे । साहब रेल से जलगाँव से बम्बई वापस जानेवाले थे । स्टेशनपर उन्होंने सबकी पूछताछ की थी । श्री. शेटेजी एक तरफ खडे थे । साहबने शेटेजी से पूछा – 'अब बम्बई कैसे जाओगे?' तब उनके निजी सचिव श्री. श्रीपाद डोंगरेजी साहब ने कहा – 'उन्हें मैं मेरी गाडी देता हूँ । उसमें से वे बम्बई आ जायेंगे ।'

कोयनानगर के समारोह में साहब का भाषण ध्वनिमुद्रित करने के लिए श्री. अनंत शेटेजी गये थे । साहब का भाषण समाप्त होने पर वे सब वाई गये । वे सब तर्कतीर्थ लक्ष्मणशास्त्री के घर में ठहरे । शेटेजी ने तर्कतीर्थजी को साहबजी का ध्वनिमुद्रित भाषण सुनाया । वह सुनकर तर्कतीर्थजीने उद्‌गार निकाले – 'वाह! एकदम अप्रतिम भाषण!'

'मंगल देशा पवित्र देशा, महाराष्ट्र देशा, प्रणाम घ्यावा माझा हा श्री महाराष्ट्र देशा' यह गीत साहबजी को बहुत अच्छा लगता था । शेटेजी ने वह गीत साहबजी को अनेक बार सुनाया ।

□ जनसामान्य लोगों के विषय में आकर्षण

श्री. राजाराम मानेजी कहते हैं कि मेरा गाँव कराडसे केवल दो मील पर होने से यशवंतरावजी हमेशा हमारे गाँव आते जाते थे । उन्होंने अपने 'कृष्णाकाठ' में 'कार्वे गाँव' का उल्लेख किया है । उस समय वे साइकिलपर से कार्वे गाँव आते थे । तब मैं पाँचवी- छठवी कक्षा में पढता था । उस समय १९४६ का चुनाव हुआ । उस समय आठ रुपये खेत की लगान भरनेवाला और सातवी पास हुए व्यक्ति को मतदान का अधिकार था । उस समय प्रौढ मतदान पद्धति प्रचलित नहीं थी । उस समय सर्वश्री यशवंतरावजी चव्हाण,

पु. पां. उर्फ बाबूरावजी गोखले, के. डी. पाटीलजी और व्यंकटरावजी पवार ये काँग्रेस के उम्मीदवार थे। मतपत्रिका पर उनके क्रमांक १, ३, ४ और ८ थे। तब हमने घोषणा की थी – 'एक, तीन, पाँच, आठ, हमारे मेंबर यही चार।' उस चुनाव में साहबजी अधिक मतों से विजयी हुए। और फिर वे गृहविभाग के पार्लमेंटरी सेक्रेटरी हुए। सर्वसाधारण दृष्टि से एकाध आदमी देहात में से शहर में चला जाता है तो वह साफा बाँधनेवाले आदमी को भूल जाता है। परंतु साहबजी की बात अलग थी। वे साफेवालेकों कभी नहीं भूले। १९६५-६६ की बात थी। साहबजी के करकमलोंद्वारा गोरेगाव के शास्त्रीनगर वसाहत का उद्घाटन था। उस समय मेरे पिताजी बम्बई में थे। साहबजी रक्षामंत्री थे। दादा हार लेकर मेरे पत्नी को लेकर सभास्थानपर गये। वे कडी सुरक्षा के कारण आगे नहीं जा सके। इतने में साहबजी का ध्यान दादा के साफे की ओर गया उन्होंने एक इन्स्पेक्टर को उन्हें आगे ले आने के लिए कहा। फिर दादाने उनके गले में हार डाल दिया। उन्होंने पूछा कि यहाँ कब आये?

एक चुनाव दौरे की याद है। सातारा मतदार संघ में म्हसवड की सभा देर रात में हुई। ठंडक बहुत थी। एक बूढी स्त्री स्टेज की ओर आने के लिए चेष्टा कर रही थी। परंतु कोई भी उसे आगे जाने नहीं देता था। इतने में साहबजी का उसकी ओर ध्यान गया। बूढ़ी स्त्री यशवंतरावजी के पास आयी। उसने फटे हुए कपडे में बांधकर लायी हुई बाजरे की रोटी, मक्खन और चटनी साहबजी के आगे रख दी और कहा कि – 'बाबा! आधी रात हो गयी थी। कभी खाना खाया होगा किसे मालूम? बूढ़ी की इतनी रोटी खा।' और अचरज की बात! साहबने स्टेजपर ही उस बूढ़ी की रोटी खायी।

आज इस याद से मन बेचैन हो जाता है। और लगता है कि सामान्य मनुष्य को बडे लोगोंका ऐसा स्नेह कहाँ मिलेगा?

□ स्फोटक वातावरण में जनतंत्र की रक्षा

राज्य पुनर्रचना के बाद नवंबर १९५६ में नामदार चव्हाणजी बम्बई राज्य के मुख्यमंत्री हुए। इस नये राज्य में उस समय का वातावरण संतप्त और प्रक्षोभक था। लोगों को अन्याय के, अपमान के शब्द चुभते थे। जनसामान्य ही क्या, जनवेत्ता भी विवेक की अपेक्षा भावनावश हो गये थे। सार्वत्रिक चुनाव में काँग्रेस को महाराष्ट्र में अनपेक्षित बहुत बडा अपयश आया था। महाराष्ट्रीय काँग्रेस पक्ष में भी अंतर्गत अग्नि सुलग रही थी। अन्य राज्यों में

अच्छा-बुरा, सत्यासत्य, समझ-गैरसमझ फैले थे । ऐसे चमत्कारिक वातावरण में ना. यशवंतरावजी ने नये बम्बई राज्य का नेतृत्व स्वीकार कर लिया था । तब यशवंतरावजी के सच्चे सुहृद और हितचिंतक भी उस यश के संबंध में साशंक थे ।

ऐसे स्फोटक वातावरण में धीरोदात्त वृत्ति से, शांति से, पर निश्चय से यशवंतरावजी ने मार्ग निकाला । काले झंडों का और जूतों का संचलन और अभद्र, अशिष्ट, असंस्कृत अपप्रचार होते हुए भी शांति से, आत्मविश्वास से परिस्थिति का मुकाबला किया और वह परिस्थिति उन्होंने अपने नियंत्रण में कर ली । विपक्षी नेताओं ने भी उनके संबंध में गौरवोद्‌गार निकाले । पिछले छब्बीस महिनों में उन्होंने जनतंत्र कारोबार की और प्रथा की नींव डाली । जनतंत्र यह एक जीवन-निष्ठा है । व्यक्ति और व्यक्त समुद्र के हृदय में उसकी प्रतिष्ठापना करके इस देश में उसकी विचारपूर्वक रक्षा करनी चाहिए, इसकी प्रतीति रखकर उनका कारोबार चला है ।

यशवंतरावजी संसदीय जनतंत्र के तत्त्वों का प्रत्यक्ष आचार-विचार करते थे । जनतंत्र में प्रत्येक व्यक्ति को, उसके मत को, फिर वह व्यक्ति गरीब हो, धनवान हो, छोटी-बड़ी हो, स्वपक्षीय हो या विपक्षीय हो उसे कीमत है । वे इस बात को अच्छी तरह जानते थे । वे उसके अनुसार कार्य कर रहे थे ।

विपक्षी लोग भी जनता के प्रतिनिधि है, यह बात वे जानते थे । इसलिए चव्हाणजी लेन-देन की तैयारी से विपक्ष के नेताओं के साथ विचार-विनिमय करते थे और उन्हें अपने विश्वास में लेते थे । इस प्रकार उनके जनतंत्रनिष्ठ बर्ताव से विपक्ष नेताओं के विरोध की तीव्रता कम हुई । आखिर विपक्ष के नेताओं को उनके नेतृत्व का सम्मान करना पडा । इतने उच्च पद पर रहते हुए भी स्वपक्ष के कार्यकर्ताओं के साथही यशवंतरावजी विपक्ष के सामान्य कार्यकर्ताओं को यथासंभव मदद करने के लिए हमेशा तैयार और दक्ष रहते थे ।

अहमदाबाद में हुए गोलीकांड की जाँच के लिए उन्होंने कमिशन नियुक्त किया । इससे उनकी जनतंत्र निष्ठा व्यक्त होती है ।

□ जनता जनार्दन की पूजा

किसी ने विठाईसे प्रश्न पूछा – 'क्या यशवंतरावजी देवपूजा करते है?' श्रीमती विठाईने उत्तर दिया – 'हम कराड में देवपूजा करते हैं । यशवंतरावजी पूजा नहीं करते । लेकिन देव उनके हृदय में है ।' देवघर में पत्थर-मिट्टी के

निर्जीव धातु के देवदेवताओं की पूजा ना. यशवंतरावजी नहीं करते । लेकिन जनकल्याण की योजनाओं की रूपरेखा तैयार कर उसे पूरा करने के लिए वे रात-दिन कष्ट करते हैं । यही उनकी जनता जनार्दन की पूजा है । विठाई के कहने में सत्यता तो है ही और गहरा अर्थ भरा हुआ है ।

□ ग्रंथप्रेमी यशवंतराव

ग्रंथप्रेम यह यशवंतरावजी की विशेषता थी । उत्कृष्ट ग्रंथों का संग्रह करना यह उनकी विशेषता थी । उनके मलबार हिल के निवासस्थान में उत्तमोत्तम चुने हुए ग्रंथों का एक ग्रंथालय था । उनके ग्रंथ ठीक तरहसे लगाने के लिए एक मनुष्य जाता था । वह यशवंतरावजी के इस विलक्षण छंद की प्रशंसा करता था ।

कभी कभी ऐसा हो जाता कि यशवंतरावजी अच्छे ग्रंथ पर एक छोटा कागज चिपकाते थे और उस पर स्वहस्ताक्षर में लिखते थे कि – 'यह पुस्तक मैंने पूर्ण पढ़ी है । अच्छी है । आप भी पढिए ।' यह शिफारिस अपने मंत्रीमंडल में एकाध मंत्री को की जाती थी । यशवंतरावजी अपने काम की व्यस्तता में ग्रंथों का पठन कब करते हैं, इस बात का सबको आश्चर्य लगता था ।

□ जीवन में निर्णायक चुनावी प्रतियोगिता

१९५७ में संयुक्त महाराष्ट्र का आंदोलन चल रहा था । कराड में उस चुनाव में साहबजी और केशवराव दादाजी इन दोनों उम्मीदवारों में निर्णायक प्रतियोगिता थी । उस मतदार संघ में धों. म. मोहितेजी एक सप्ताहभर दादा का प्रचार करने के लिये घूम रहे थे । हमारी छोटी बहन इसी मतदार संघ में कोरेगाव नामक देहात में ब्याही गयी थी । कोरेगाव और कार्वे ये दोनों गाँव काँग्रेस के थे । विपक्षी लोगों को वहाँ प्रवेश नहीं था । हमारी बहन ने एक युक्ति की । उसने छोटे लडके को एक घोषणा पढायी । जहाँ मनुष्य बैठे रहते है, वहाँ वह लड़का जाता और कहता कि – 'बैल बाँधो पेड़ को, मत दो गाडी को ।' बहन के पति गाँव के पाटील थे । वे खूब बेचैन हो जाते थे । पर करेंगे क्या? साहब का दौरा कोरेगाव आया । गाँव के प्रवेशद्वार पर गाँववाले एकत्र हुए । साहबजी की आरती उतारने के लिए गाँव की सुवासिनी तैयार थीं । हमारी बहन गाँव की पाटलीण । इसलिए आरती उतारने का सर्वप्रथम मान उसका । उसे डाटते हुए उसने बहन को गडबड न करने की सलाह दी । छोटा लडका दूर रहे ऐसी व्यवस्था की गयी ।

साहबजी आये । बहन ने उनके माथेपर कुंकुमतिलक लगाया । आरती उतारते समय उसने कहा – 'साहब, मैं धों. म. मोहिते की बहन ।' परंतु उसके कंधे पर हाथ रखकर साहबजीने उससे पूछा – 'फिर तू किसे मत दोगी?' उसने तुरंत उत्तर दिया – 'मत देते समय तय करूँगी ।'

अन्त में इस चुनाव में यशवंतरावजी विजयी हुए । उसके बाद यशवंतरावजी आगे ही बढते गये ।

□ देश-प्रेम, स्वातंत्र्यप्रियता और मित्र-प्रेम

सुबह के ११-३० बजे थे । कराड के तिलक हायस्कूल में पाँचवी कक्षा के शिक्षक विद्यार्थियों को पाठ पढ़ा रहे थे । गोगटेजी और यशवंतरावजी एक ही बेंचपर बैठे थे । इतने में हायस्कूल के अहाते में एक बड़ी भीड़ आयी । 'महात्मा गांधीजी की जय' ऐसी घोषणा सुनने में आयी । उसने मुझे इशारा किया और 'महात्मा गांधीजी की जय' ऐसी घोषणा देते हुए वह कक्षा के बाहर चला गया । वह बडे जोर से घोषणा देने लगा । क्षणभर में हायस्कूल के सभी लडके कक्षा छोड़कर बाहर आये । गोगटेजी कहते हैं कि मेरे पास बैठा हुआ लडका तुरंत नीम के पेड़ पर चढा और उसने पेडपर राष्ट्रीय तिरंगा झंडा फहराया । सबने बडा जयघोष किया और तिलक हाइस्कूल में झंडा फहराने के बाद वहाँ ही बड़ी सभा हुई । उसने सभा में उत्कृष्ट भाषण किया । सभी वातावरण राष्ट्रप्रेम से प्रभावित हुआ । उसके भाषण का तरुण मन पर परिणाम हुआ । सभी के मन में राष्ट्रप्रेम का स्फुल्लिंग जागृत किया । इन तरुणों ने मेरे मित्र को अपना नेता माना । वह मित्र अर्थात यशवंतरावजी चव्हाण जिसने आगे चलकर महाराष्ट्र का नेतृत्व किया और मुख्यमंत्री के रूप में महाराष्ट्र का रथ-सारथ्य किया ।

बॉम्बे हॉस्पिटल में श्री. बा. म. गोगटेजी स्लीप डिस्क की वेदना से व्याकुल थे । यशवंतरावजी परदेश दौरा करके लौट आये । उन्होने सुबह के अखबार में पढ़ा कि उनका मित्र गोगटे बीमार है । यशवंतरावजी तुरंत बॉम्बे हॉस्पिटल में जाकर उससे मिले । उस मित्र प्रेम का महत्त्व क्या कहे?

गोगटेजी कहते है कि – 'हर एक चुनाव के समय मैं और उषा हमारे मित्र से मिलने के लिए सातारा जाते थे । जाते समय वे प्रसाद के रूप में शिरा और दाल लेकर जाते थे । भेट होने के बाद तीनों आनंद से खाते थे । तब मेरा मित्र कहता था, मधु, तू और उषा यह परमेश्वर का प्रसाद ही लें आते । दिल्ली में

उनके बंगले में से बाहर आते समय मेरे मित्र यशवंतरावजीने कहा, 'अगले सप्ताह में तुम दोनों शुभ प्रसाद लेकर सातारा आओ ।' लेकिन दुर्भाग्यसे यह हुआ नहीं । यशवंतरावजी ने सातारा के समर्थ साप्ताहिक के संपादक श्री. अनंतरावजी कुलकर्णी को पत्र लिखा था । यह पत्र १९ मई १९७५ का है । यशवंतरावजी ने उस पत्र में मित्रता का अर्थ कहा है – 'पैतालीस वर्षों की तुम्हारी और मेरी मित्रता है । वह मित्रता तुमने अब तक सुरक्षित रखी है । तुमने आशा से कुछ नहीं किया । तुमने स्वच्छ और निर्मल भाव से मित्रता की है ।' यशवंतरावजीने 'कृष्णाकाठ' मे अनंतरावजी की मित्रत्व का उल्लेख किया । उस में भी उन्होंने मित्रत्व का गौरव किया है ।

श्री.स.का. पाटीलजी बॉम्बे हॉस्पिटल में अत्यवस्थ थे । हम कुछ लोग श्री. ए. आर. सुलेजी के साथ बारी बारी से वहाँ बैठते थे । रात आठ बजे के बाद मैं घर वापस आया था । पाँच-छः दिन से पाटीलजी अत्यवस्थ थे । भेट के लिए आनेवाले लोगों को वे पहचान नहीं सकते थे । एक रात में 'नवसंदेश' के संपादक श्री. रमेश भोगटेजी को यशवंतरावजी का फोन आया कि 'अहमदनगर में श्री. अण्णासाहेब शिंदेजी की लडकी का विवाह है । मैं कल सुबह हवाई जहाज से जाकर आता हूँ । परसो सुबह आठ बजने के पहले रिव्हिएरा में आओ । हम वहाँ से बॉम्बे हॉस्पिटल में जायेंगे ।'

उनके कहने के अनुसार भोगटेजी रिव्हिएरा में गये । दिवाणखाने में बैठकर वे अखबार पढने लगे इतने में यशवंतरावजी आये । उनके कंधेपर हाथ रखकर वे सीढी उतर गये । हम बॉम्बे हॉस्पिटल में गए । महेश्वर ठाकूरजी वहाँ ही थे । यशवंतरावजी को लेकर वे और मैं भीतर गये । पाटीलजी की वह दशा देखकर यशवंतरावजी गद्‌गद हो गये । पाँच-सात मिनट उन्होंने उसी अवस्था में इधर उधर घूमकर पाटीलजी को निहारा और नजर से उन्होंने मुझे बाहर निकलने के लिए कहा । दरवाजे के बाहर आते ही गद्‌गद हुए यशवंतरावजी अपनी सिसकी काबू में नहीं रख सके । 'महाराष्ट्र का सिंह आज ऐसा अगतिक होकर पडे यह हमारा दुर्दैव है, दुर्भाग्य है ।' इन्ही शब्दों में उन्होंने अपना मनोगत व्यक्त किया और दरवाजे के बाहर आये लोगों को नमस्कार करके मेरे कंधे पर हाथ रखकर निकल पडे ।

यशवंतरावजी पर लिखते समय यह प्रसंग मैंने इसलिए लिखा है कि – 'यशवंतरावजी और अप्पासाहेब पाटीलजी इन दोनों में बहुत शत्रुत्व था । वे एक दूसरे की ओर भी नहीं देखते, ऐसे जो लोग कहते थे उन्हें मालूम होगा

कि यशवंतरावजी कितने कोमल हृदय के थे, कितने भावुक थे।' अप्पासाहेब पाटीलजी उम्र से बडे थे और नेतृत्वगुणसंपन्न भी थे। ऐसे मराठी मनुष्य के बारे में यशवंतरावजी को बहुत आदर होता था।

यशवंतरावजी बडे हुए गुणपूजक वृत्ति के कारण। लोकमान्यजी तिलक के बाद लूले पडे हुए, अपाहिज पडे हुए महाराष्ट्र में काँग्रेस को सच्चा नेतृत्व दिया यशवंतरावजीने और आज बहुजन समाज जिस शान से महाराष्ट्रीय राजनीति में विचरता है वह भी यशवंतरावजी की दूरदृष्टि के कारण।

□ परिवार की जिम्मेदारी

पार्लमेंटरी सेक्रेटरी के पद पर रहकर यशवंतरावजी काम कर रहे थे। उनका शरीर बम्बई में और मन कराड में। बम्बई राज्य का कारोबार करते समय उनकी द्विधा मन:स्थिति हो गयी थी। परमप्रिय बडे बंधु गणपतरावजी को क्षय की बीमारी हो गयी थी। उनकी सेवा करते समय उनकी पत्नी को संसर्गजन्य बीमारी हो गयी थी। इन दोनों की सेवा करते समय वेणूताईजी को क्षय की बाधा हुई थी। १९४७ के दिसंबर महिने में गणपतरावजी का निधन हो गया था। दो वर्षों में गणपतरावजी की पत्नी का भी निधन हो गया था। गणपतरावजी के लडकों की अर्थात भतीजों की जिम्मेदारी यशवंतरावजी पर आ पडी। क्षय की बीमारीसे वेणूताईजी की तबीयत बिगड गयी थी। ऐसी आपत्ति के घेरे में यशवंतरावजी फँस गये थे। मिरज के डॉ. जॉन्सन इस मिशनरी डॉक्टर से वेणूताईजी की बीमारी दूर हो गयी।

□ यशवंतरावजी की देवी-देवता पर श्रद्धा

लोग साहबजी को देवता के समान मानते थे। साहबजी भी देव को मानते थे। साहबजी प्रवास में हो तो भी मकाम के आसपास प्रसिद्ध देवस्थान हो तो वहाँ गये बिना नहीं रहते थे। सातारा जिले में और महाराष्ट्र में कोई देवस्थान हो तो वे सौ. वेणूताईजी को साथ लेकर वहाँ अनेक बार गये हैं। परंतु काशी के विश्वनाथ मंदिर और हरिद्वार की 'हरी की पावडी' का दर्शन कभी चुकाया नहीं। गंगोत्री जाकर गंगा की और शंकर की पूजा करने में कभी नहीं चुके। साहब श्रद्धा से पूजा करने में कभी नहीं चुके। साहबजी की श्रद्धा हिंदू धर्म की देवी-देवताओंके साथ साथ अन्य धर्म पर भी थी। अजमेर और निजामुद्दीन (दिल्ली) दर्गेपर भी जाते थे। १९७७ के चुनाव के बाद यशवंतरावजीने

वेणूताईजी से हम आग्रा जायेंगे ऐसे कहा । वेणूताईजी को इसका अर्थबोध नहीं हो सका । तब उन्होंने कहा कि आग्रा के पास फत्तेपूर सिक्री है । वहाँ सलीम चिस्ती का दर्गा है । उसका दर्शन लेने की मेरी इच्छा है । तुरंत दर्गेपर डाली जानेवाली चद्दर, पूजा का साहित्य लाने के लिए मनुष्य भेज दिया । दूसरे दिन सुबह साहबजी, सौ. वेणूताईजी, अनंतराव पाटीलजी ऐसे तीनों फत्तेपूर सिक्री पहुँचे । पंधरा-बीस मिनट ठहरकर समाधि का दर्शन किया । सौ. वेणूताईजी को ९-१० घंटे का सफर करना उनकी तबीयत के लिए असंभव था । लेकिन श्रद्धा के सामने उन्हें उसका महत्त्व नहीं लगता था । साहबजी सुबह साईबाबा की मूर्ति के सामने और देव के सामने ५-१० मिनट नतमस्तक होकर खडे रहते थे और फिर कमरे के बाहर आते थे ।

एक राजनीतिज्ञ आदमी की श्रद्धा प्रेरणादायी है ।

□ प्रशासक

मुख्यमंत्री मोरारजीभाई की एकांगी भूमिका से लोगों के मन दु:खित हुए थे । उसके बाद यशवंतरावजी महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री बने थे । उन्होंने बंदुकी के जोर पर द्विभाषिक राज्य का कारोबार चलाना अनुचित समझा । समिति के आंदोलन का रेला, लोगों के मत का जोर और यशवंतरावजी के कारोबार की जोड इन सबके कारण महाराष्ट्र राज्य की स्थापना हुई, तब मराठी मन में नयी आशा की कोंपले फूट पडी । इसलिए कुसुमाग्रज जैसे बडे मराठी कवि ने घोषणा की...

"नव्या जीवनाचा नाद
मला ऐकू येत आहे ॥
लक्ष शून्यातून
काही श्रेय आकारत आहे ॥"

यशवंतरावजी ने शक्कर कारखानों की योजना और उसे पूरी करने के लिए सरकार की नीति बनायी और सरकार की ओर से उन्हें मदद भी की । शिक्षा प्रसार के लिए शाला और महाविद्यालय खोल दिये । मराठवाडा और शिवाजी विद्यापीठ की स्थापना की । उन्होंने महाराष्ट्र के सभी क्षेत्रों में उन्नति की नींव डाली । और इसी कारण देश में महाराष्ट्र अग्रेसर हुआ ।

□ स्वच्छ प्रतिमा का नेतृत्व

एक देदिप्यमान गुण यशवंतरावजी के पास था । वह गुण यहाँ कहना चाहिए। आज की राजनीति में यह बहुत दुर्लभ गुण है। यशवंतरावजी से राजनैतिक मतभेद करनेवाला कोई भी मनुष्य यशवंतरावजी अनाचारी थे ऐसा इलजाम स्वप्न में भी नहीं कर सकेगा। यशवंतरावजी ने पैसे लिये, यशवंतरावजी के आदमी खुद के काम के लिए सरकार चलाते है, यशवंतरावजी ने सिफारिश की होगी ऐसा इलजाम कोई भी नहीं कर सका । स्वच्छ प्रतिभासंपन्न नेतृत्व ऐसा लौकिक यशवंतरावजीने पिछले २५-३० वर्षं सुरक्षित रखा है और वह भी आखिर तक। यह बात देखने के लिए आसान लगती है, पर व्यवहार में बहुत बड़ी मुश्किल है । महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री के रूप में उन्होंने अच्छा, आदर्श और अनुकरणीय काम किया है। देश के रक्षामंत्री, अर्थमंत्री, विदेशमंत्री आदि विविध और बड़े पदों पर उन्होंने काम किया और वह काम करते समय वे किसी प्रकार के मोह में उलझे नहीं और उनके खिलाफ कुछभी अनुचित बातें किसी भी अखबार में छपकर नहीं आयी । राजनीति के गढे में रहते हुए भी उन्होंने अपने शरीर पर कीचड़ की जरा भी छींटे नहीं आने दी । उनके मतानुसार सफेद धोती और सफेद कमीज पहनकर राजनैतिक जीवन जीता जा सकता है । यह महाराष्ट्र की राजनीति में सर्वोत्कृष्ट प्रयोग कहा जा सकता है । राजनीति में रहकर इतनी निर्मलता, इतनी साधनशुचिता, इतना सामंजस्य, इतनी शब्दों की मृदुता और चारित्र्य की स्वच्छता आजतक किसी नेता ने दिखाई नहीं और शायद आगे कोई दिखायेगा नहीं । इसलिए यशवंतरावजी का नेतृत्व विलोभनीय और सबको प्रिय था ।

□ उच्च राष्ट्रीय चारित्र्य

और एक बहुत दुर्लभ गुण यशवंतरावजी में था । उन्होंने व्यक्तिगत राष्ट्रीय चारित्र्य को जीवन में बडा महत्त्व दिया था । आज की राजनीति में बहुत नेता स्वयं की सुविधा देखते हैं । स्वयं का आर्थिक फायदा कहाँ होता है, इसका वे विचार करते हैं और अपने पश्चात के दो पीढियों का प्रबंध करते हैं । यशवंतरावजी कितने उच्च दर्जा के नेता थे । पिछले चार-पाँच वर्षों में उन्होंने महाराष्ट्र और भारत को उन्नत बनाने में बडा योगदान दिया है । इससे उनके महान कार्य का दर्शन होता है। १९७५-१९८० में उन्होंने इंदिरा गांधीजी का विरोध करने की भूमिका अदा की । पर उस भूमिका में उन्होंने कभी गंदी बाते

नहीं की । पर जिस क्षण उन्हें लगा कि सारा देश इंदिराजी के पीछे हैं उस क्षण उन्होंने विचार किया कि अब काँग्रेस पक्ष को शक्ति देनी चाहिए । अत: उन्होंने व्यक्तिगत मान-अपमान एक तरफ रखकर इंदिराजी की सहायता की । उनके मित्रों ने उनकी इस नीति की आलोचना की । यशवंतरावजी के विचारों की ऊँचाई बहुत बड़ी थी । राष्ट्रीय प्रश्नों को महत्त्व देने की उनकी भूमिका निर्णयात्मक थी । यशवंतरावजी ने चार वर्ष के पूर्व यह बात स्पष्ट की थी । राष्ट्रीय हित के सामने व्यक्तिगत राग, लोभ तुच्छ होते है, यह बात यशवंतरावजी ने अपनी निर्णायक कृति से दिखा दी । पद मिले अथवा न मिले राष्ट्रीय कर्तव्य में कभी भी कसूर नहीं की । यशवंतरावजी की राजनैतिक जीवन की महत्ता ऐसे प्रसंगों से सिद्ध हुई है ।

राजीव गांधीजी प्रधानमंत्री होने के बाद देश के सामने जो आवाहन है ऐसे समय समझदारी से और होशियारी से सलाह देनेवाले मनुष्य राजनीति में धीरे धीरे कम हो रहे है । ऐसे समय यशवंतरावजी जैसा तारा उखड जाना यह महाराष्ट्र का और देश का दुर्दैव है ।

पीछले डेढ़ वर्ष से वे उदास थे । वे अकेले थे । लेकिन देश के अनेक प्रश्नों को स्वत: को उलझकर मन को उत्साह देने का वे प्रयत्न कर रहे थे । उस में से वे बाहर नहीं आ सके और अंत में एक सुसंस्कृत नेतृत्व को हम सब वंचित हो गये । ऐसा लगता है कि महाराष्ट्र आज निराधार हुआ है । एक कर्तृत्वसंपन्न जीवन का अंत हुआ है । एकाध हराभरा पेड गिर पडे और सारा प्रदेश रुखा-सूखा लगे वैसे अब महाराष्ट्र के राजनैतिक जीवन का चित्र बन रहा है । यशवंतरावजी की 'महत्ता' यह वादातीत महत्ता थी । अब उनके पश्चात् महाराष्ट्र को सुसंस्कृत, समंजस और मजबूत वैचारिक दिशा देनेवाला नेतृत्व कब निर्माण होगा? नेहरूजी के चले जाने के बाद देश जैसा निराधार हुआ था वैसे ही यशवंतरावजी के निधन के बाद महाराष्ट्र भी निराधार हुआ ।

□ यशवंतरावजी का निधन

१९७७ में संसदीय चुनाव में इंदिराजी के नेतृत्व में काँग्रेस पक्ष की पराजय हुई । उसके बाद १९८० तक यशवंतरावजी और भूतपूर्व प्रधानमंत्री इन दोनों में दुराव की भावना पैदा हुई । इससे यशवंतरावजी को बहुत मनस्ताप हुआ । १९८१ में उन्होंने इंदिरा काँग्रेस में प्रवेश किया ।

इसके बाद उन पर अनेक कौटुंबिक (पारिवारिक) आपत्तियाँ आयी ।

पुत्रवत परिपालन किया हुआ उनका भतीजा डॉ. विक्रम ऊर्फ राजा की मोटर अपघात में ८ मार्च १९८३ को मृत्यु हुई । डॉ. विक्रमजी की मृत्यु के बाद १ जून १९८३ में यशवंतरावजी की पत्नी सौजन्यमूर्ति वेणूताईजी चव्हाण का निधन हुआ । २ जून १९८३ में सुबह ११.२० बजे बम्बई के गिरगाव-चंदनगाव की स्मशानभूमि में उनका दहन किया गया । स्वर्गीय वेणूताईजी को कुल मिलाकर ६३ वर्ष ३ महिने और एक दिन की आयु मिली । उनकी मृत्यु से यशवंतरावजी को बडा दुख हो गया । उन्होंने धीरे धीरे अपने शोक को कम किया । वे आठवे वित्त आयोग के अध्यक्ष थे । उन्होंने वह अहवाल शासन के सामने प्रस्तुत किया । वे संसद सदस्य थे । उन पर सौंपे हुए काम अच्छी तरहसे किये । इन चार-पाँच वर्षों के काल में वे शांत थे । वे कहते थे कि – 'अब मुझे कुछ प्राप्त करने की इच्छा नहीं है । जनता जनार्दन के चरणों पर मैंने की हुई सेवा पेश हुई है । मेरा शरीर भी थकता जा रहा है, यह कुछ ध्यान में ही नहीं आया ।'

सौ. वेणूताई के विचार

- तीन बातें करनी चाहिए –
  अच्छा विचार, अच्छी कृति, सच्चा और मीठा भाषण ।
- तीन बातें अधीन (ताबे में) रखनी चाहिए –
  अपना क्रोध (गुस्सा), अपनी ज़बान और अपनी इच्छा ।
- तीन बातों पर भक्ति होनी चाहिए –
  धैर्य, शांति और परोपकार ।
- तीन बातों का स्वीकार करना चाहिए ।
  समझदारी, भलाई और सहनशीलता ।
- तीन बातों के लिए झगडना चाहिए –
  अपनी इज्जत, अपना देश और अपना मित्र ।
- स्वार्थ अंधा होता है, वह धर्म और संस्कृति को जानता नहीं है ।

वे दिल्ली गये । उन्हें किडनी की बीमारी थी । वे अस्पताल में भरती हो गये । उपचार भी किये गये । पर कुछ उपयोग नहीं हुआ । वहाँ उनका निधन हुआ । निधन की तारीख थी २५ नवंबर १९८४ । शाम के ७ बजकर ४५ मिनट पर उनकी मौत हो गयी । २७ नवंबर १९८४ को दोपहर के ३.३० बजे कृष्णा-कोयना के संगम पर अग्नि दी गयी । सारे लोग शोकाकुल बन गये थे । यशवंतरावजी ७१ वर्ष ८ महिने १३ दिन जिये ।

लोगों को महाराष्ट्र की इस अस्मिता में अपनी छाया दिख पडती थी, शान लगती थी । इसलिए कभी अंधकार तो कभी प्रकाश देखते हुए जीवन की राह चलनेवाले साहबजीने अचानक अपना मानवी पहनावा उतारकर अनंत में विलीन होने का मार्ग अपनाया । और दस दिशाएँ भी मानवी रूप धारण कर जोर जोर से रोने लगी, ऐसा कहने लगी कि – 'नहीं, नहीं, ऐसा नहीं होना चाहिए था ।'

अपना नेता कैसा होना चाहिए इसका मूर्तिमान रूप साहबजी के रूप में इस देश ने देखा है और मुल्क ने इसकी अपूर्वाई का अनुभव भी किया है ।

साहबजी अचानक भगवान के घर गये और सारा मराठी मुल्क गद्‌गद हो उठा, 'ऐसे कैसे हुआ?' उसके साद-प्रतिसाद चारों ओर उभर आए और मनुष्य अबोल हुआ ।

यशवंतरावजी का मृत्युपत्र

Y. B. Chavan 1 Race Course Road,
New Delhi,11

मेरी पत्नी स्व. सौ. वेणूबाई की स्मृति के लिए मैं एक सार्वजनिक न्यास (Public Trust) स्थापित करूँगा । उसने मुझे निजी और सार्वजनिक जीवन में बहुमूल्य सहयोग दिया है । उसके लिए उसकी स्मृति जागृत रखना यही मेरे जीवन में बचा हुआ एकही आनंद है । उस दृष्टि से मेरी गतविधियाँ शुरू हो गयी है । मेरे कराड गाँव में जमीन खरीदकर उसपर एक वास्तू बाँधी जाय और इस वास्तू में मेरे निजी ग्रंथालय में होनेवाले अमूल्य ग्रंथ रखे जाय । साथ ही मेरे जीवन में अनेक व्यक्ति और संस्थाओं ने अनेक वस्तुएँ मुझे प्रेमस्वरूप भेट दी है । उनकी ही रक्षा हो जाय और वस्तु संग्रहालय के रूप में भी उनकी ही रक्षा हो जाय यही मेरी इच्छा है । और यह ग्रंथालय और वस्तुसंग्रहालय यह मेरी पत्नी की स्मृति है । उसकी रक्षा और वृद्धि की योजना की जाय यही संकल्प है ।

इस स्मृति मंदिर के लिए जो रक़म (राशि) लगेगी उनमें से यथासंभव वह हिस्सा मैं दूँगा । देन के रूप में मेरी स्वर्गीय पत्नी के जो गहने हैं, उनका रुपांतर कर के जो राशि आयेगी, वह पूरी की पूरी रक़म इस स्मारक को दी जाय । इसके सिवाय उरलीकांचन में होनेवाली उपजाऊ जमीन बेचकर जो रक़म आयेगी, वह पूरी की पूरी रक़म इस न्यास को दी जाय । मेरे हयात में मैं यह कार्य पूरा करने का प्रयत्न कर रहा हूँ । यदि वह नहीं हुआ तो मेरे विश्वस्तोंद्वारा उसे पूरा किया जाय ।

- यशवंतराव बलवंतराव चव्हाण

६ शासकीय पद और कार्य

□ पार्लमेंटरी सेक्रेटरी, रसद और पूर्ति मंत्री

१९४६ में यशवंतरावजीने गृहमंत्री के पार्लमेंटरी सेक्रेटरी के रूप में शासन में पदार्पण किया । उन्होंने कुछ दिन तक पार्लमेंटरी सेक्रेटरी पद पर अच्छा काम किया । इसके बाद १९५२ में मुख्यमंत्री मोरारजीभाई देसाईजी ने यशवंतरावजी को अपने मंत्रिमंडल में अन्न और पूर्ति मंत्री के रूप मे समाविष्ट किया । उस समय जनता पूर्ति खाते का तिरस्कार करती थी । यह खाता यशवंतरावजी को एक आवाहन था । यशवंतरावजी ने यह खाता सहजता से सँभाला । उस समय रेशनिंग शुरू था । अनाज की परिस्थिति कठिन थी । रेशनिंग से शहर में लोगों की किसी तरह सुविधा होती थी पर ग्रामीण जनता को तकलीफ होती थी । अनाज का उत्पादन और आयात होकर भी वह जनता तक अच्छी तरह पहुँच नहीं पाता था । काला बाजार और जमाखोरी बढ़ गयी थी । खाते के सूत्र लेते ही उन्होंने जनता को विश्वास में लेने की नीति अपनायी । केंद्रीय रसद और पूर्ति मंत्री श्री. रफी अहमद किड़वाई से उन्होंने अनाज के अमल के संबंध में लगातार चर्चा की । उनपर यशवंतरावजी का प्रभाव पडा । यशवंतरावजीने नियंत्रण पद्धति में कष्टदायी शर्तें दूर कर ग्रामीण जनता को दिलासा दिया । केंद्र शासन की नयी नीति जाहिर करते हुए व्यापारीयों को उचित समझ दी । नयी नीति सफल बनाने की लिए पुष्टिप्रद वातावरण निर्माण किया । चावल छोड़कर अन्य अनाज पर होनेवाले नियंत्रण धीरे धीरे कम कर दिये । कपडा, केरोसिन, शक्कर इन वस्तुओं पर होनेवाले नियंत्रण ढीले कर दिये । इसका यह परिणाम हुआ कि बाजार में अनाज आने लगा । अगले मोसम तक रह गए नियंत्रण भी दूर किये जायेंगे । वे इसी प्रकार का दिलासा देते रहे । उसका उचित परिणाम हुआ । देश में बहुत अनाज

उत्पादन हुआ । धीरे धीरे नियंत्रण दूर हुआ और आखिर सरकार को रसद और पूर्ति खाता बंद करना पडा । यह यशवंतरावजी की कार्यकुशलता का आदर्श है ।

शासन ने रसद और पूर्ति खाता तो बंद कर दिया और आगे.....

□ वनमंत्री

अब यशवंतरावजी वनमंत्री बने थे । वन की रक्षा और पशु-पक्षियों की रक्षा की ओर देखने की उनकी दृष्टि मानवीय थी । जंगल का संवर्धन और उसकी रक्षा इन दोनों का मानवीय जीवन से संबंध जुडा था । जंगल संपत्ति, जंगल में रहनेवाले वन्य पशु-पक्षियों की रक्षा करने की दृष्टि से उन्होंने कानून बनाया । ऐसा कानून बनानेवाला बम्बई राज्य देश में पहला राज्य है । इस कानून की कार्यान्विती करने के लिए उन्होंने प्रबंध किया । प्राणियों की शिकार पर रोक लगा दी । वन्य प्राणियों के लिए उन्होंने कानून बनाकर अभयारण्य की व्यवस्था की ।

□ रक्षा मंत्री

चीन ने २० अक्तूबर १९६२ को भारत पर आक्रमण किया । इसलिए प्रधानमंत्री पं. नेहरूजी पूरी तरहसे व्यथित हुए । ऐसी परिस्थिति में संसद में कृष्णमेनन को रक्षा मंत्री पद से दूर करने की माँग की जाने लगी । इस कठिन समय में प्रधान मंत्री पं. नेहरूजीने १४ नवंबर १९६२ को रक्षा मंत्री पद पर श्री. यशवंतराव चव्हाण की नियुक्ति की । क्योंकि चीन का आक्रमण अर्थात नैतिक पराजय । यह पराजय पं. नेहरू की नीति की पराजय थी । रक्षा मंत्री बनने पर श्री. यशवंतराव चव्हाण दिल्ली गये । उसके दूसरे दिन चीनने अपनी तरफसे युद्ध विराम कर दिया और १४५०० चौ. मील भारत का प्रदेश हडप लिया । इस घटना का वर्णन ऐसा किया गया – 'सह्याद्रि हिमालय की रक्षा के लिए चला गया ।' १ मई १९६० को स्वतंत्र महाराष्ट्र निर्माण हुआ । इस समय महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री श्री. यशवंतराव चव्हाण ने पं. नेहरूजी के समक्ष भाषण किया कि – 'मराठी भाषिकों के पास जो देने जैसा है, जो उदात्त है, भारत के लिए उसका त्याग करना पडे तो हम वह त्याग करेंगे । क्योंकि भारत रहेगा तो महाराष्ट्र रहेगा, भारत महान हुआ तो महाराष्ट्र भी महान होगा ।' यशवंतरावजी द्वारा व्यक्त की गयी राष्ट्रीय भावना से पं. नेहरूजी बहुत प्रभावित

हुए । इसलिए तो ऐसे कठिन समय में यशवंतरावजी पर रक्षा मंत्री पद की जिम्मेदारी सौंपी गयी । रक्षा यह केवल सेना से संबंधित बात न होकर उसे महत्त्वपूर्ण राजनैतिक, आर्थिक और मानसशास्त्रीय पहलू होते हैं, उसे ध्यान में रखते हुए उन्होंने रक्षा विभाग का कार्यभार देखा ।

पं. नेहरूजी ने अलिप्तता नीति का स्वीकार किया और उन्होंने रक्षा नीति की ओर आवश्यक ध्यान केंद्रित नहीं किया । इसलिए तो भारत को चीन से पराजय स्वीकार करना पडा । इसलिए उन्होंने रक्षा व्यवस्था बलवान बनाने के लिए नेफा और लडाख सीमा को भेट देकर युद्ध में सूक्ष्मतर सूक्ष्म बातें समझा ली । १९६२ में चीन से भारत की पराजय हुई । इसलिए सैनिक निराश हो गये थे । तब उन्होंने सीमा भाग में जाकर सैनिकों का मनोधैर्य बढाया ।

यशवंतरावजीने प्राण की बाजी लगाकर महाराष्ट्र की प्रगति की । जब चिनी राज्यकर्ताओं ने भारत को भेट देकर 'हिंदी-चिनी भाई-भाई' की घोषणाएँ दी और उसके बाद विश्वासघात से उन्होंने भारत पर अचानक हमला किया, उस समय भारत की परिस्थिति बहुत नाजूक बनी हुई थी । परंतु उस समय भारत के प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने महाराष्ट्र के तत्कालीन मुख्यमंत्री यशवंतरावजी को दिल्ली बुलाया । उन्होंने यशवंतरावजी पर देश का महत्त्वपूर्ण संरक्षण विभाग सौंप दिया । यशवंतरावजी जब बम्बई से नयी दिल्ली जाने के लिए निकल पडे उस समय यशवंतराव चव्हाण के बम्बई के 'सह्याद्री' निवासस्थान से सांताक्रूझ हवाई अड्डे तक हजारों लोग रास्ते के दुतर्फा खडे होकर उन्हें बिदा देने के लिए आये थे । उस समय सब लोग प्रेम से 'यशवंतराव विजयी भव' ऐसी शुभेच्छा व्यक्त करते हुए घोषणा दे रहे थे । लोग 'यशवंत भव, जयवंत भव' ऐसी शुभाशीर्वादात्मक घोषणा दे रहे थे । उसके बाद यशवंतरावजी दिल्ली पहुँच गये । रक्षा मंत्री के रूप में उन्होंने रक्षा का कारोबार अपने हाथ में लिया । आश्चर्य की बात तो यह है कि उन्होंने रक्षा मंत्री के सूत्र हाथ में लेते ही दूसरे दिन चिनी ने अपनी ओर से युद्ध विराम कर दिया । यह तो यशवंतराव चव्हाण की अपूर्व विजय थी ।

भूतपूर्व उपप्रधानमंत्री यशवंतराव चव्हाण का देहावसान २५ नवंबर १९८४ को हुआ । उनकी मृत्यु से भारतीय रक्षा दल को मिला हुआ एक कार्यक्षम रक्षा मंत्री सबको पीछे छोडकर चला गया । जनरल एस.पी.पी. थोरात कहते हैं कि – 'पिछले चालीस वर्ष मैं उन्हें पहचानता हूँ । इसलिए मैं कह सकता हूँ कि भारतीय सार्वजनिक जीवन में उनका व्यक्तिमत्त्व अद्वितीय था ।

चीनने भारत पर हमला कर भारत की बदनामी की । उस समय प्रधानमंत्री पं. नेहरूजीने कृष्णमेननजी की जगह पर यशवंतराव चव्हाण की नियुक्ति की । रक्षा मंत्री बनने पर यशवंतरावजी का राष्ट्रीय नेता के रूप में उदय हुआ ।'

अक्तूबर १९६२ में भारत और चीन इन दोनों के बीच सीमा निश्चित करनेवाली 'मॅकमोहन रेषा' चिनी सेना ने लांघकर नेफा में अपर्याप्त साधनसामग्री होनेवाले अपने कुछ थाने पर हमले किये और उन थानों को उद्ध्वस्त कर दिया । उसके बाद चिनी सेना सीधे ब्रह्मपुत्रा नदी की घाटी में उतर आयी । इस आक्रमण से भारत सरकार को आश्चर्य का धक्का लगा । वास्तविक ऐसा हमला होने की सूचना तीन वर्ष पूर्व सरकार को दी थी । चीन नेफा में कुछ मुल्क अपना होने की बात कर रहा था और चीन वह मुल्क कभी भी मुक्त करने का प्रयत्न करेगा ऐसी सूचना सेना ने रक्षा मंत्रालय को अक्तूबर १९५९ में दी थी । पूर्व विभाग के जनरल ऑफिसर कमांडिंग-इन-चीफ एस.पी.पी. थोरात थे । उन्होंने स्वयं एक विस्तृत टिप्पणी सेना मुख्यालय की ओर भेज दी थी । प्रस्तुत टिप्पणी में संभाव्य चिनी योजना के संबंध में जानकारी देकर उस हमले का कैसा मुकाबला करना चाहिए इस संबंध में उनकी सिफारिसें दर्ज की थी । थोरात की टिप्पणी से सेवा मुख्यालय सहमत था और वह टिप्पणी कार्यान्विति के लिए रक्षा मंत्रालय की ओर भेज दी गयी । परंतु अभागे रक्षा मंत्री कृष्णमेननजी ने उस टिप्पणीपर प्रतिकूल अभिप्राय लिखकर उस टिप्पणी को दफ्तर में दाखिल कर दिया ।

श्री. थोरातजी की एक महत्त्वपूर्ण सूचना थी – 'नेफा, सेना के पूर्व विभाग की ओर सौंप देना चाहिए । उसकी जिम्मेदारी आसाम रायफल की ओर न हो । आसाम रायफल यह एक पुलिस दल है और उनके पास लडाऊ सामग्री नहीं है और उन्हें प्रशिक्षा (प्रशिक्षण) नहीं है ।' श्री. थोरात की सिफारिस भी खारीज कर दी गयी । क्योंकि रक्षा मंत्री का मत था – 'चीन भारत पर कभी भी आक्रमण नहीं करेगा ।' यह निवेदन करते समय उन्हें यह मालूम होना चाहिए था कि पिछले कुछ महिनों में चिनी सेनाने अनेक बार सीमाभंग किया था । रक्षा मंत्री मेनन और प्रधानमंत्री पंडित नेहरूजी ये दोनों 'हिंदी चिनी भाई भाई' इस घोषणासे इतने प्रभावित हो गये थे कि थोरात की सिफारिस के अनुसार कारवाई करने की बात उनके मन में भी नहीं आयी । लेकिन सीमाभंग के प्रकार बढ़ते गये । इसलिए सभी अखबारवालों ने और संसद ने गंभीर दखल लेने की शुरुवात की । श्री. कृष्णमेननजी ने 'राष्ट्रीय सुरक्षितता' की दृष्टि से संसद

में उत्तर देने से इन्कार कर दिया अथवा संदिग्ध उत्तर दिये । इसलिए संसदसदस्य संतप्त हुए और उन्होंने प्रधानमंत्री पर आलोचना का हमला किया। अन्त में रक्षा की दृष्टि से उन्होंने नेफा सेना के पूर्व विभाग की ओर सौंप दिया । परंतु नेफा की रक्षा के लिए सेना की टुकडियाँ धीमी गतिसे जा रही थी तब तक १० अक्तूबर १९६२ को चीन ने हमला किया । अपनी रक्षा-व्यवस्था इतनी अपर्याप्त थी कि चिनी सेनाने नेफा से आधा मुल्क अपने कब्जे में लिया । इसलिए संपूर्ण देश ने श्री. कृष्णमेननजी के इस्तीफे की माँग की । प्रधानमंत्री ने श्री. मेननजी का समर्थन करने का बहुत प्रयत्न किया । परंतु सारा देश क्षुब्ध हो उठा था । यह देखकर प्रधानमंत्री को लोगों के मत के सामने अपनी गर्दन झुकानी पडी । परंतु मेननजी के बाद कौन, यह प्रश्न था । बदनाम हुआ रक्षा विभाग स्वीकार कर अपना राजनीतिक भविष्य धोखे में डालने के लिए कोई भी ज्येष्ठ व्यक्ति उत्सुक नहीं था । ऐसे समय प्रधानमंत्रीजी ने दृढता से सुज्ञ निर्णय लिया । उन्होंने महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री श्री. यशवंतराव चव्हाण को रक्षा मंत्री पद की जिम्मेदारी स्वीकार करने की बिनती की । इस सुज्ञ निर्णय के संबंध में पंडितजीका अभिनंदन करना चाहिए । उसके साथ ही अपने राजनीतिक भवितव्यका विचार न करते हुए प्रधानमंत्री की मदद के लिए चले जानेवाले यशवंतराव चव्हाण का भी अभिनंदन करना चाहिए ।

नवंबर १९६२ में वे दिल्ली गये और धैर्य नष्ट हुए सेना की और नापसंद रक्षा मंत्रालय की जिम्मेदारी स्वीकार ली । सेना में मनोधैर्य पुन: निर्माण करना यह अपना आद्य कर्तव्य है और सेना और रक्षा मंत्रालय के बीच होनेवाले संघर्षों के कारणों को निपटाना यह अपना मुख्य कर्तव्य है, यह बात यशवंतरावजी के ध्यान में तुरंत आयी । अपने पूर्व मंत्री का उद्दाम स्वभाव और अहंमन्य वृत्ति यह असंतोष का मूल है, यह उन्होंने पहचान लिया । इस बारे में यशवंतरावजी का स्वभाव बिलुकल विरुद्ध था । उन्होंने अपने सौजन्यपूर्ण व्यक्तिमत्त्व से और सुसंस्कृत वृत्ति से दिल्ली के राजनीतिक जीवन पर अपनी छाप डाल दी । रक्षा मंत्रालय में अभ्यासू वृत्ति और विद्वत्ता इन गुणों के कारण यशवंतरावजी के बारे में आदर था । सेना के सभी स्तर पर उन्हें मान था । क्योंकि साधारण जवान की अपेक्षा उन्हें लडाई की अधिक जानकारी है, ऐसा दावा उन्होंने कभी नहीं किया । उन्होंने अपने कौशल से और संयम से सेना और रक्षा मंत्रालय को नजदीक लाया ।

पहला हमला करने के बाद चीन ने अपनी ओरसे युद्धविराम की घोषणा

की और तिबेट में अपनी सेना स्थल पर वे वापस गये । फिरसे हमला होने की आशंका होने के कारण यशवंतरावजी ने अनदेखी नहीं की । इसलिए चीनके विरुद्ध रक्षाव्यवस्था की पुनर्रचना करने का कार्यक्रम उन्होंने अपने हाथ में लिया । उसमें ऊंची जगह पर लड़ने के लिए उपयुक्त हथियारों की सुविधा करना आदि बातों का समावेश था । चिनी सेना के साथ मुकाबला करनेवाले अपनी सेना के पास इनमें से एक भी सुविधा उपलब्ध नहीं थी । यातायात के साधन उपलब्ध न होनेवाले देश में लडाई करना व्यर्थ है, इस बात का उन्हें यकीन हुआ । इसके अतिरिक्त रसद मिलने की अच्छी व्यवस्था न हो तो चढाई की कोई भी योजना सफल नहीं होगी, इस बात की उन्हें प्रतीति थी । ऐसी व्यवस्था न होने से सेना को युद्धभूमि पर भेज देना यानी कि मृत्यु की और पराजय की खाई में (खंदक, गढे में) धकेलने जैसा है । यशवंतरावजी दौरे पर जाते समय सेना को रसद पहुँचाने की कैसी व्यवस्था है इसका स्वयं निरीक्षण करते थे ।

रक्षा मंत्री के रूप में नियुक्त होने पर प्रारंभिक काल में यशवंतरावजी के सामने मुख्य प्रश्न ईशान्य और उत्तर सीमा का था । ऐसा होते हुए भी उन्हें जम्मू-काश्मीर और नागालँड में सेना की गतिविधियों की जिम्मेदारी का एहसास था । शांति क्षेत्र में रखे हुए सेना के कल्याण की और सुस्थिति की वे उतनी ही चिंता करते थे । 'वंचित हुए कुटुंब' के लिए अर्थात लडाई में उलझे हुए अधिकारियों के, जवानोंके कुटुंब के लिए रहने की जगह उपलब्ध कर देने की उन्होंने शुरुआत की । तब तक पूर्व रक्षा मंत्री इस संबंध में कुछ कर नहीं सके । क्योंकि उन्हें वित्तीय सलाहकारों ने इस काम के लिए निधि उपलब्ध नहीं करवायी । पूर्व रक्षा मंत्री ने वित्तीय सलाहकारों के निर्णय का समर्थन किया । लेकिन यशवंतरावजी ने वित्तीय सलाहकारोंका निर्णय दूर कर दिया । उन्होंने वित्तमंत्री के साथ चर्चा की और उन्होंने यह बात प्रधानमंत्री के पास पहुँचा दी । वे हमेशा कहते थे कि सेना के अधिकारी और सिपाहियों के लिए आप कोशिश नहीं करेंगे तो दूसरा कौन करेगा । इस पर जनरल एस.पी.पी. थोरात कहते हैं – 'हम हमेशा के लिए कृतज्ञ रहेंगे ।'

यशवंतरावजी ने मंत्री पद स्वीकार लेने के बाद नेफा-लड़ाख की भूमि को प्रत्यक्ष भेंट देकर परिस्थिति का निरीक्षण किया । मोर्चे पर लडनेवाले जवान और अधिकारियों को दिलासा दिया, उन में आत्मविश्वास निर्माण किया । रक्षा-विषयक जो समस्याएँ थी, उनकी जानकारी उन्होंने ली ।

यशवंतरावजी ने रक्षा विभाग की जिम्मेदारी स्वीकार ली । तब अपने पास स्वनातीत लडाकू हवाई जहाज, भारतीय बनावटी के लिंडर फ्रिगेट, वैजयंता बख्तरबद गाडियाँ, मिग हवाई जहाज और अन्य आधुनिक शस्त्रास्त्र नहीं थे । उन्होंने रक्षा विभाग की एक पंचवार्षिक योजना तैयार की और वह संसद में मंजूर कर ली गयी । इस योजना में सेना की आठ पहाडी डिव्हिजन, ४५ स्क्वाड्रनका हवाई दल, आरमार के और युद्ध साहित्य उत्पादन केंद्र का नूतनीकरण और सीमा भाग में मार्ग और अन्य मूलभूत सुविधा उपलब्ध करना आदि का अंतर्भाव था ।

दृढतापूर्वक प्रयत्न और समर्पण की भावना के द्वारा यशवंतरावजी ने रक्षा व्यवस्था खड़ी करके रक्षा मंत्रालय में और सेना मुख्यालय में अधिकारी और कर्मचारी तथा देश की सीमा का रक्षण करनेवाले सैनिकों में आत्मविश्वास निर्माण किया । अपने साथ काम करनेवाले अधिकारियों को उन्होंने पूर्ण समर्थन दिया और उनका विश्वास संपादन किया । उसका परिणाम १९६५ में पाकिस्तान के साथ हुई लडाई में दिख पडा ।

युद्धसामग्री प्राप्त करने की दृष्टि से उन्होंने अमरिका, रशिया का दौरा किया ।

पं. नेहरू के निधन के बाद लालबहादूर शास्त्री प्रधानमंत्री बने । उनके मंत्रिमंडल में यशवंतरावजी फिरसे रक्षा मंत्री हो गये । उन्होंने फिर रशिया का दौरा किया और वह यशस्वी हुआ । १९६५ में पाकिस्तानने शरारत करने की शुरूआत की । यशवंतरावजी ने सेना को तैयार रहने का आदेश दिया । पाकिस्तान के आक्रमण को साफ जवाब दिया । भारतीय सेना ने पाक की ऐसी नाकाबंदी की कि अन्त में उन्हें युद्धविराम घोषित करना पडा । युद्ध की समाप्ति होने पर भी दोनो देशों में शांति स्थापित नहीं हुई थी । उस संबंध में बातचीत करने के लिए यशवंतरावजी शास्त्रीजी के साथ ताश्कंद गये थे । बातचीत होने पर शांति समझौते पर हस्ताक्षर हुए । उसके बाद शास्त्रीजी विश्रांति के लिए अपने कमरे में गये, वहाँ हृदय विकार का झटका आनेसे उनका प्राणोत्क्रमण हुआ । यशवंतरावजी उनका पार्थिव देह लेकर भारत में आये । भारत के समर्थ रक्षा-मंत्री के रूप में भारत-पाक युद्ध के फैसले से उनकी प्रतिमा प्रकाशमान बनी । सेना में जवानों के और अधिकारियों के मन में उनके बारे में चरम सीमा का आदर और आत्मीयता बढ़ गयी ।

लाल बहादूर शास्त्री के निधन के बाद यशवंतरावजी को प्रधानमंत्री बनने का मौका आया था । उन्होंने इंदिरा गांधी को अपना समर्थन दिया । फिर वे

इंदिरा गांधीजी के मंत्रिमंडल मे रक्षा मंत्री हो गये ।

१९६३ के अप्रैल महीने में तुलजाभवानीदेवी के दर्शन के लिए यशवंतरावजी गये थे । तुलजापूर की सभा में भाषण करते हुए संरक्षण का अर्थ स्पष्ट करते हुए संरक्षण की व्याख्या स्पष्ट की – 'भारत का रक्षण करना है इसका अर्थ भारत ने जिन नवीन तत्त्वों की हिफाजत की है, जिन तत्त्वों के बल पर अपना स्वातंत्र्य खड़ा किया है, उन तत्त्वों का और स्वातंत्र्य का हमें रक्षण करना है । प्रसंग आया तो हमें अपने प्राण देकर अपनी जिम्मेदारी निभानी चाहिए ।' इस भाषण से स्पष्ट होता है कि रक्षा मंत्री यशवंतरावजी ने भारत के लोगों में राष्ट्रवाद, संरक्षण और सामाजिकता के विषय में प्रखरता की हिफाजत करने का प्रयत्न किया है ।

रक्षा मंत्री यशवंतराव चव्हाण बातों पर ध्यान देते हैं । कि हिन्दुस्थान एक राष्ट्र बना हुआ है और कितने भी आर्थिक संकट आये तो हम उनसे मुकाबला कर सकते हैं, यह बात भारतीय तरुणों को अन्य राष्ट्रोंके सामने लानी चाहिए । उनकी देशभक्ति की सच्ची कसौटी उनके बर्ताव से लगेगी । केवल नेता पर अथवा पक्ष पर निर्भर न रहकर हर एक सुज्ञ नागरिक को राष्ट्र निर्माण के लिए समर्पित होना चाहिए ।

सुज्ञ नागरिक को सरकार पर निर्भर रहना राष्ट्रीय हित की बात नहीं है । राष्ट्र के सामने विशेषत: अंतर्गत संरक्षण यह कठिन प्रश्न बना हुआ है । यह बात हमे स्वीकार करनी पडेगी । अब राष्ट्रीय संरक्षण यह एक सुज्ञ नागरिकों का भाग है । उसके लिए तत्पर रहना काल की जरूरत है ।

इ.स. १९६२ में चीन की ओर से भारत का हुआ मानहानिक पराभव से प्रधानमंत्री नेहरूजी पूर्णत: वैचारिक दृष्टि से चकरा गये थे । इस समय श्री. यशवंतराव चव्हाण ने रक्षा मंत्री पद के सूत्र अपने हाथ में लिये । यशवंतरावजी एक उत्कृष्ट संरक्षक और विचारक थे । उन्होंने संरक्षण और सामाजिकता के संबंध में जो भाषण किये थे, वे बहुध्रुवीय थे । जागतिक राजनीति के काल में भारतीय नागरिकों के लिए मार्गदर्शक थे ।

रक्षा मंत्री यशवंतरावजी ने देश की सुरक्षा के लिए जो अद्वितीय कार्य किया है, वह आधुनिक भारत के इतिहास में सुवर्णअक्षरों से लिखा जायेगा । मेरी दृष्टि से यह महाराष्ट्र का सह्याद्रि श्री. यशवंतराव चव्हाण इतिहास का सुनहरा पन्ना है । यशवंतरावजी के कर्तृत्व के कारण भारतीय जनता हमेशा उनका स्मरण करती रहेगी ।

☐ गृहमंत्री

गुलझारीलाल नंदा गृहमंत्री थे । गृहमंत्री के रूप में उनका कार्यकाल संपूर्ण असफल हुआ था । मार्क्सवादी कम्युनिस्टों के खिलाफ आयोजित दमनचक्र उपायों से वे बहुत बदनाम हुए थे । उनके कुछ निर्णय और कृतियाँ बहुत वादग्रस्त थीं । वे सब गैरजिम्मेदार ठहरी । जैसे साधुओं के निदर्शनों के प्रकरण में आँसधुआँ, गोलीकांड और जुल्म की नीति आदि कृतियों के कारण उन्हें गृहमंत्री पद से निकालना आवश्यक था । तब उनकी जगहपर कौन? यह प्रश्न जब निर्माण हुआ तब यशवंतरावजी का नाम सामने आया और श्रीमती गांधी ने यशवंतरावजी का गृहमंत्री पद के लिए चुनाव किया ।

यशवंतरावजी गृहमंत्री हुए । फिर नयी जिम्मेदारी और नये आव्हान उनके सामने थे । गृहमंत्री पद यह संसद में बडे सन्मान का पद उन्हें मिला । इस काल में देश की परिस्थिति स्फोटक हुई थी । यशवंतरावजी ने शांति और सुव्यवस्था रखकर उसे पूर्व पद पर लाने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया ।

कुल मिलाकर यशवंतरावजी ने गृहमंत्री पद की जिम्मेदारी अच्छी तरह संभाली । यह समय उनके मंत्रिपद का सुनहरा काल था । विपक्ष के भड़िमार को शांति से, उत्तेजित न होते हुए उत्तर देना, दिक्कत के प्रश्न शांति से और सामोपचारसे सुलझाना यह उनकी पद्धत थी ।

१९६७ के चुनाव के बाद वे इंदिराजी के मंत्रिमंडल में फिर से गृहमंत्री हुए । १९६७ के चुनाव में देश में ९ राज्यों में काँग्रेसेतर विधायक दल की सरकार आयी थी । ईशान्य भारत के राज्यों में अस्वस्थता और फुटीरतावादी प्रवृत्तियाँ बढ़ रही थी । यशवंतरावजी ने उन भागों का दौरा किया । वहाँ के जनजीवन और संस्कृति का अभ्यास किया । उसके अनुसार उस प्रदेश में लोगों की माँगे ध्यान में लेकर उनकी कुछ राज्यों में विभाजन करने की शिफारीस की । संसद ने उसे मंजुरी देनेपर उस प्रदेश में अच्छी तरह शांति प्रस्थापित हुई ।

गृह विभाग की व्याप्ति बड़ी थी । राष्ट्रीय जीवन के चारों ओर से संबंध था । कानून और सुव्यवस्था अबाधित रखनेसे लेकर आंतरराज्य संबंधों तक प्रत्येक क्षेत्र में असंख्य उलझे हुए प्रश्न निर्माण हुए थे । इस समय यशवंतरावजी के हाथ में गृह विभाग के सूत्र आये थे । कुल मिलाकर वह वर्ष भारतीय राजनीति में बहुत तीव्र संघर्ष का था । हिंदुओं के और शीखों के जीर्णोद्धारका प्रश्न उभरकर सामने आया था । भाषिक, प्रादेशिक अस्मिता धारदार बनी हुई

थी । आत्मदहन की धमकियाँ देकर संत फत्तेसिंग और आठ शीख नेता गृहमंत्रालय को आव्हान दे रहे थे । उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश और बिहार के विद्यार्थियों का असंतोष दबाने के लिए पुलिस विभाग अमानुष स्तर तक पहुँच गया था । चव्हाणजी ने कार्यभार लेने पर तीनही दिनों में विद्यार्थियों का जुलूस चलकर आया ।

चव्हाणजीने अपनी शैली से इन प्रश्नों की ओर ध्यान दिया । प्रासंगिक विद्रोह का दमन यह किसी भी प्रश्न के निर्णायक सुलझाने का मार्ग नहीं हो सकता ऐसी चव्हाणजी की पक्की नीति थी । उन्होंने विविध समितियाँ नियुक्त कर के हर एक प्रश्न की मूलग्राही चिकित्सा, विषयों का सर्वांगीण दृष्टि से अभ्यास कर निर्णय लिए और उनकी कारवाई की । यशवंतरावजी जब गृहमंत्री थे तब उन्होंने अपनी सत्ता का उपयोग राष्ट्र के पुरोगामी, आर्थिक और सामाजिक उद्देश साध्य करने के लिए किया और देश के सामने आनेवाले आवाहनों का बडे सामर्थ्य से मुकाबला किया ।

□ अर्थमंत्री

इंदिरा गांधीजी ने २६ जून १९७० में यशवंतरावजी पर अर्थ विभाग सौंप दिया । उन्होंने जब वित्तमंत्री का कार्यभार स्वीकार लिया तब वह काल देश की आर्थिक दृष्टिसे बहुत कठिन था ।

अर्थव्यवस्था बिखरी हुई थी । अनेक बातों का अभाव था । अर्थसाधन अपर्याप्त थे । जीवनावश्यक वस्तुओं की कमी, कीमतों में वृद्धि आदि प्रश्नों के कारण दिक्कते पैदा हो गयी थी । सुशिक्षित बेरोजगारी, ग्रामीण बेकारी, जमीनसुधार ऐसे असंख्य प्रश्न थे । इसके सिवाय पूर्व पाकिस्तान से भारत में आने वाले निर्वासितों के गिरोह रोकने के लिए आंतरराष्ट्रीय स्तर पर इंदिरा गांधीजी द्वारा किये गये प्रयत्न असफल हो गये थे । फिर भारत-पाकिस्तान संघर्ष अटल था । बांगला देश की निर्मिति, मध्यपूर्व में सुलगा हुआ अरब-इस्त्रायली संघर्ष, तेल की बढी हुई कीमतें आदि सब प्रतिकूल घटनाओं से भारत के आर्थिक व्यवस्था पर प्रचंड बोझ पडा हुआ था । केंद्रीय वित्तमंत्री यशवंतरावजी को इन सब बातों का सामना करना पड रहा था ।

उसके साथ ही देशांतर्गत मूल्य वृद्धि पर नियंत्रण रखना आवश्यक था । राजनैतिक दृष्टि से यह बहुत कठिन काम था । यशवंतरावजी कोई अर्थतज्ज्ञ नहीं थे । परंतु अपने ऊपर सौंपी हुई कोई भी जिम्मेदारी प्रयत्न कर के

खबरदारी से पार करने की उनकी वृत्ति से और अनेक तनाव खिंचाव का समन्वय करने की कुशलता से वित्तमंत्री के रूप में उनका कार्यकाल संस्मरणीय हो गया ।

उस काल में उन्होंने अपनी कल्पना में होनेवाली अर्थविषयक नीति का हमेशा समर्थन किया । राष्ट्र का विकास बनाने में उनका बहुत बडा उपयोग हुआ । उन्होंने अर्थ विभाग में आमूलाग्र बदल किये । तत्परता से अच्छी तरह कारोबार किया । बैंकों का राष्ट्रीयीकरण, संस्थानिकों के तनखे बंद करना आदि विषयों का सर्वांगीण अभ्यास करके उन्होंने निर्णय लिया, ये निर्णय कार्यान्वित किये । अर्थमंत्री के रूप में उनके द्वारा लिये हुए निर्णय देश की अर्थव्यवस्था पर दीर्घकाल परिणाम करनेवाले शाबित हुए ।

□ विदेश मंत्री

११ अक्तूबर १९७४ में इंदिराजी ने यशवंतरावजी पर विदेश मंत्री की जिम्मेदारी सौंपी । इसलिए वे अनेक देशों से भेंट देने के लिए गये थे । इसलिए अनेक विदेश राष्ट्रप्रमुखोंसे, कूटनीतिज्ञोंसे भेंट देकर भारत के विदेश संबंधविषयक चर्चा करनी पडी । उन्होंने अलिप्तता की नीति का समर्थन किया। भारत-अमरिका, भारत-रशिया, भारत-पाकिस्तान, भारत-चीन इन सब में राजनैतिक संबंध सुधार के लिये उन्होंने सतत प्रयत्न किये । उन्होंने विदेश विभाग कुशलता से संभाला । उन्होंने भारत को प्रतिष्ठा प्राप्त कर दी । विभिन्न राष्ट्रों के विकास के कार्यक्रम जो अंमल में लाये है, उन्होंने उसका प्रत्यक्ष अवलोकन किया । आंतरराष्ट्रीय राजनीति का गहरा अभ्यास, विविधतासे भरे विस्तृत अनुभव और विविध राष्ट्रप्रमुखों से उन्होंने जोडे हुए संबंधों के कारण आंतरराष्ट्रीय क्षेत्र में .यशवंतरावजी का प्रभाव महसूस हो रहा था । १९७१ में विदेश मंत्री होनेपर पाकिस्तान से युद्ध हुआ । भारत का संरक्षण का हक सिद्ध करने के लिए यशवंतरावजी ने दौरा किया । उसके बाद वे रशिया के दौरे पर गये और संरक्षण समझौता किया । नेहरू-इंदिराप्रणीत विदेश नीति आगे रख दी ।

□ विरोधी पक्ष नेता

१९७७ के चुनाव में इंदिरा काँग्रेस की पराजय हुई और यशवंतरावजी विरोधी पक्ष नेता बन गये । परंतु यह नयी भूमिका उन्हें अप्रिय लगी । विरोधी

पक्ष नेता के रूप में उनका कार्यकाल बहुत अच्छा नहीं रहा । अनेक प्रसंगों में उन्हें इंदिरा गांधीजी का रोष स्वीकारना पडा । इस काल में राजनीति के दाँवपेंच कम पडने लगे ।

यशवंतराव चव्हाण सच्चे अर्थ में महाराष्ट्र के नेता थे । वे महाराष्ट्र प्रशासन में और पक्ष के भी प्रमुख थे । जब वे महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री थे तब उनका कार्यकाल यशस्वी हुआ । उनके प्रत्येक निर्णय का स्वागत हुआ, परंतु केंद्रीय राजनीति में उनके प्रत्येक निर्णय का स्वागत नहीं हुआ । अनेक प्रसंगों में उन्हें दूसरों के विचार स्वीकार करने पडे । जब वे विभिन्न विभागों के मंत्री थे तब उन्हें स्वतंत्र निर्णय लेना संभव नहीं हो सकता था । इन सब बातों के कारण उनके विचार में और कार्य में बाधा पडी थी ।

यशवंतरावजी अन्ततक महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री रहते तो सद्य स्थिति में महाराष्ट्र का चित्र अलग दिखाई देता । शायद महाराष्ट्र की अभूतपूर्व प्रगति हो जाती । परंतु यह नियति के मन में नहीं था । मराठी राज्य की स्थापना होने के बाद यशवंतरावजी केवल दो वर्ष ही महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री रह सके । उन्होंने केवल विकासों की दिशाएँ निश्चित की थी । उन्होंने योजनाएं बनायी । परंतु उनके मन में महाराष्ट्र के लिए जो योजनाएँ थी, वह प्रत्यक्ष कृति में नहीं आयी । अन्ततक उन्हें महाराष्ट्र के प्रति अंतर्मन में आस्था और प्रेम था ।

कुल मिलाकर यशवंतराव चव्हाण ने संसदीय सचिव से स्वतंत्र विभाग तक अनेक पद विभूषित किये । इन में महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री, भारत के रक्षा मंत्री, गृहमंत्री, विदेशमंत्री, अर्थमंत्री, विरोधी पक्षनेता आदि महत्त्वपूर्ण उच्च पद सँभाले । इन पदों पर रहकर राष्ट्रीय स्तर पर जो महत्त्वपूर्ण कार्य किया उसके कारण भारत की पहचान संसार में एक महत्त्वपूर्ण राष्ट्र के रूप में निर्माण हुई । यह हमारे देश के लिए महत्त्वपूर्ण घटना है ।

सारांश – कुछ मनुष्य जन्मत: बडे होते है, कुछ मनुष्य पर बडप्पन लादा जाता है । कुछ अपवादात्मक मनुष्य अपने अंग के गुणों से और कर्तृत्व से बडे होते हैं, ऐसा जगप्रसिद्ध नाटककार शेक्सपियर का एक वचन है । स्वकर्तृत्व से और कार्य से गुणवंत, यशवंत और कीर्तिवंत होनेवाले अपवादात्मक मनुष्यो में यशवंतरावजी यह एक अग्रगण्य थे ।

अपने कर्तृत्व और नेतृत्व से यशवंतरावजी सामान्य में से असामान्य थे । यशवंतरावजी नाम की व्यक्ति बड़ी थी । विचार से, आचार से, बुद्धिमत्ता से, कर्तृत्व से और मनुष्यता से । १९४० से १९८० के दरमियान जो पिढी थी

उसका अनुभव उस पिढी को आया है । जिन्होंने यशवंतरावजी को ४० वर्षों से देखा, उन्होंने उद्‌गार निकाले– 'ऐसा मनुष्य होना भविष्य में असंभव ।'

एक छोटेसे देहात में गरीब, अशिक्षित परिवार में उनका जन्म हुआ । आर्थिक विवंचना और गरिबी में उनका बचपन बिता । शिक्षा लेते समय अनेक बाधाएँ आयी । शिक्षा लेते समय उन्होंने स्वातंत्र्य आंदोलन में भी भाग लिया । ऐसा कर्तृत्ववान विद्यार्थी मनुष्य कराड के मुहल्ले से राजधानी दिल्ली तक जा पहुँचा । उन्होंने महाराष्ट्र में ही नहीं, तो देश में और संसार में कीर्ति, ख्याति प्राप्त की । यह कितना प्रशंसनीय कार्य कर्तृत्व है ।

राजनीति में, समाजकारणों में, शिक्षा में, साहित्यकाल में रस लेकर अपना सहयोग देकर यशवंतरावजी ने महाराष्ट्र के विविध क्षेत्रों को रंग, रूप दिया और महाराष्ट्र बडा करने में और आगे ले जाने में अपना महत्त्वपूर्ण हिस्सा उठा लिया । सार्वजनिक जीवन में काम करनेवाली एक नयी पिढी तैयार की और यशवंतरावजी उस नयी पिढी के शिलेदार बन गये ।

शासकीय पदोंपर काम करते हुए उन्होंने अपने कार्य से छाप डाली और प्रगतिशील राष्ट्ररचना का कार्य किया ।

माँ मराठी के महाराष्ट्र के इस 'यशवंत' भूमिपुत्र ने आजन्म देश-सेवा के व्रत का पालन किया था । २५ नवंबर १९८४ में उनका निधन हुआ । उनके निधन से कभी भी भर न आनेवाला उनका स्थान रिक्त हुआ था । यशवंतरावजी एक बडे विचारवंत और नीतिमान, सत्‌शील, तत्त्वशील, पुरोगामी, कर्तृत्व-संपन्न कूटनीतिज्ञ और महाराष्ट्र राज्य के शिल्पकार थे । राजनीति में से समाजकारण करनेवाले कर्तृत्ववान नेता को महाराष्ट्र विन्मुख हो गया ।

रक्षा मंत्री यशवंतरावजी अपने सेनाधिकारियों में, सेना में,सनदी और नागरी अधिकारियों में प्रिय हो गये । रक्षा मंत्री बनने पर उन्होंने संरक्षण शास्त्र में होनेवाली सूक्ष्म बातों का अच्छी तरह अभ्यास किया । १९७१ के युद्ध के समय रक्षा मंत्री न होते हुए भी प्रधानमंत्री इंदिरा गांधीजी ने पाकिस्तानी सैनिकों द्वारा शरणागति स्वीकार कर एक तरफा युद्धविराम घोषित करने के पूर्व अकेले यशवंतरावजी को बुलाकर प्रथम विश्वास में लेकर अनौपचारिक विचार-विमर्श कर उनके नेतृत्व के विषय में अपनी आस्था और आदर प्रकट किया था ।

□ उप प्रधानमंत्री

जुलै १९७९ में उन्हें फिर से मौका आया था, परंतु काँग्रेस संसदीय पक्ष

ने चौधरी चरणसिंगजी को समर्थन देने का निर्णय लिया। यशवंतरावजी चरणसिंगजी मंत्रिमंडल में उप प्रधानमंत्री हो गये । परंतु उनकी सरकार अल्पकाल ही सत्ता पर रही। फिर भी उप प्रधानमंत्री की दृष्टि से यशवंतरावजी का कार्यकाल प्रशंसनीय रहा।

□ वित्त आयोग के अध्यक्ष

१९८० में हुए चुनाव के बाद श्रीमती इंदिरा गांधीजी फिर से प्रधानमंत्री बन गयी। जनमत का कौल ध्यान में लेकर यशवंतरावजी को आय काँग्रेस में प्रवेश दिया। उसके बाद इंदिराजीने उनकी नियोजन आयोग के अध्यक्ष पद पर नियुक्ति की। यह काम भी उन्होंने अच्छी तरह किया।

७ विविध विषयोंपर यशवंतरावजी के विचार

□ राष्ट्रवाद

प्रामाणिक राष्ट्रवादी विचार ये स्वातंत्र्योत्तर काल में प्रारंभिक २० वर्षों में नेतृत्व का वैशिष्ट्य था । यशवंतरावजी के विचारों को अनुभवों की साथ थी । उसमें सीधापन और सरलता थी । इसलिए सामान्य मनुष्य को उनके विचार पसंद पडते थे ।

१९५७ में नाशिक में महाराष्ट्र सामाजिक परिषद के तीसरे अधिवेशन का उद्घाटन करते हुए यशवंतरावजी ने अपने भाषण में कहा कि– 'भारत एक राष्ट्र बना हुआ है ऐसे अपने नेता चिल्लाहकर कहते रहते हैं । राज्य घटना ने भारतीय नागरिकत्व की व्याख्या मंजूर की है । पर उस नागरिकत्व का अनुभव आना चाहिए । हमे राजनैतिक स्वातंत्र्य मिला हुआ है । उसके पीछे सामाजिक मूल्य और सामाजिक प्रेरणा न हो तो वह स्वातंत्र्य व्यर्थ है । पुरानी श्रद्धाओं को चिपककर न रहकर नयी श्रद्धाओं की खोज करनी चाहिए । राजनीति पहले या समाजकारण पहले यह भाग अप्रस्तुत है । क्योंकि राजनीति समाजकारण का एक भाग है ।'

सांप्रत के विज्ञान युगमें विज्ञान के विध्वंसक स्वरूप से दुनिया को बचाने के लिए सामाजिक परिषद जैसी संस्थाओं को नये मूल्य और नयी प्रेरणाएँ देनी चाहिए ।

भारत ने कठीन प्रयत्न करके स्वातंत्र्य प्राप्त किया है । लेकिन अब हमे केवल राजनैतिक स्वातंत्र्य नहीं चाहिए । उसके लिए नये मूल्य, नयी प्रेरणा और नये विचार समाजनेता ही दे सकते हैं । अब आत्मसंशोधन की अधिक जरुरत है । निडर भारतीय नागरिकत्व का पालनपोषण होना चाहिए । निडर भारतीय नागरिकत्व केवल राजनैतिक नेता निर्माण नहीं कर सकते । उसके

लिए समाजकारणों की अधिक जरुरत है ।

इस विचार से एक सच्चा भारतीय अपने सामने खडा रहता है । आज हमे यह निश्चित रूप से स्वीकार करना पडेगा कि हम लोगों ने भारत का एक जनतंत्र राज्य निर्माण किया है । पर भारत का एक जनतंत्र राष्ट्र निर्माण नहीं हुआ है । राज्य यह भौतिक संकल्पना है । जनसंख्या, भूप्रदेश, शासनसंस्था और सार्वभौमत्व ये चार घटक होनेपर राज्य निर्माण होता है । राष्ट्र यह मानसिक अवस्था है । प्रत्येक नागरिक के मन में यह दृढ होना आवश्यक है । 'यह देश मेरा है' ऐसे प्रत्येक भारतीय नागरिक को प्रामाणिकता से लगेगा तो एक राष्ट्र निर्माण होगा । परंतु आज ही आप भारत यह एक राष्ट्र है ऐसा कहने का साहस कोई नहीं कर सकता । धर्म, जात, पंथ, भाषा के आधारपर छोटे-छोटे घेरे देश में निर्माण हुए हैं और व्यक्ति की निष्ठा इस घेरे के आसपास केंद्रित हुई है । देश के विषय में विचार करने के लिए समय है किस के पास? पहले परिवार, फिर जात, उसके बाद धर्म, प्रदेश, भाषा, फिर समय शेष रहा तो देश!

इस सामाजिक परिषद में यशवंतरावजी आगे कहते हैं कि– 'जनतंत्र सफल करने के लिए केवल चुनाव की राजनीति उपयोग में नहीं आयेगी । यह बात पक्षीय नेताओं को पहचाननी चाहिए । समाजकारण यह राजनैतिक पूँजी नही होनी चाहिए । राजनीतिमें से जातियता को एकसाथ निकाल देना चाहिए । पुराने सडके विचार फेककर नये विधायक विचार, नयी मानवता का पालन-पोषण करना चाहिए । देश की प्रगति की दृष्टि से कदम कदम पर आगे जाना हो तो सामाजिक सुधार की और ध्यान देना चाहिए ।'

यशवंतरावजी के विचार केवल राष्ट्रतक सीमित नहीं हैं । आज तो दुनिया जिस वैश्विक वृत्ति से नजदीक आ रही है, राष्ट्र की स्वतंत्र अर्थव्यवस्था का महत्त्व कम हो जाने से संपूर्ण दुनिया की एक अर्थव्यवस्था बन रही है, जिसे हम जागतिकीकरण कहते हैं, उसका विचार यशवंतरावजी के नेतृत्वने ५० वर्ष पूर्व प्रकट किया था ।

वे कहते हैं– 'पंचशील यह तत्त्व संयुक्त राष्ट्र संघटना के समूह हित के तत्त्वों से सुसंगत है । पंचशील तत्त्व का प्रचार हुआ कि सारी दुनिया एक हो जायेगी, एक परिवार आराम से सुख से रह सकेगा । तथापि यह कल्पना आसानी से स्वीकृत नहीं की जायेगी । क्योंकि उसका स्वरूप ही ऐसा होता है कि उसके लिए मानसिक क्रांति की अधिक आवश्यकता होती है और प्रसंग

आने पर कष्ट भी बर्दाश्त करने पडेंगे ।' वे आगे कहते हैं, 'विभिन्न राष्ट्रों में समझदारी लाने की दृष्टि से आप को इस कार्य के लिए समर्पित होना चाहिए । यथावकाश युद्ध का पूर्णत: विनाश होगा यानी कि युद्ध नहीं होंगे । संपूर्ण शांति बनी रहेगी । भारत दुनिया को शांति और सहिष्णुता का संदेश पहुँचाने की सहाय्यता करेगा ।' भारत की आध्यात्मिक शक्ति के विषय में कितना आत्मविश्वास! और दूरगामी विचार करने की क्षमता । इतनी ऊँचाई पर जाकर विचार और कृति करने की उनकी क्षमता प्रशंसनीय है । इसी संदर्भ में संयुक्त महाराष्ट्र का प्रश्न भी यशवंतरावजी राष्ट्रीय दृष्टि से हल करना चाहते थे । उनकी यह कृति प्रशंसनीय एवं उचित है । इसके पीछे उनका दृष्टिकोन यही था कि किसी भी तरह से राष्ट्र को हानि न पहुँचे । कितना उदात्त दृष्टिकोन है उनका ।

□ शिक्षा

आज के विद्यार्थियों की शिक्षा का विकास होना चाहिए । वही आज का सच्चा प्रश्न है । उन में होनेवाला अज्ञान दूर करना चाहिए । ये महत्त्वपूर्ण बदल लाने के लिए पहली दो पंचवार्षिक योजनाएँ हुई । परंतु किसान को सचमुच फायदा नहीं हुआ है । यह सच है कि खेती में सुधार नहीं हुआ उसके लिए किसानों को और उनके लडकों को उच्च शिक्षा मिलनी चाहिए । उसे गँवार रखकर उनका विकास कैसे होगा? नया विचार, नया मनुष्य निर्माण किये बगैर कुछ साध्य नहीं होगा । मैं यह नया सपना देख रहा हूँ । यह तो महाराष्ट्र राज्य का सपना है ।

यशवंतरावजी ने शिक्षा क्षेत्र को बडा महत्त्व दिया है । महाराष्ट्र राज्य स्थापन होने के बाद उन्होंने गरीब परिवार में से आये हुए विद्यार्थियों को शिक्षाविषयक फीस की मुआफी की सहुलियते दी । इसके साथ ही ग्रामीण विभाग में शिक्षा संस्था, ग्रामीण विद्यालय और महाविद्यालय स्थापित करने के लिए विशेष सहुलिते जाहीर की । उस समय जिस गति से ग्रामीण क्षेत्र में कॉलेज निर्माण हुए हैं, उससे शिक्षाविषयक दर्जा घट जायेगा और ग्रामीण क्षेत्र में विद्यार्थियों को दुय्यम दर्जा की शिक्षा मिलेगी ऐसी आलोचना की गयी । कुछ विद्वान लोगोंने उथली शिक्षा कहकर आलोचना करके कुछ आक्षेप लिये । यशवंतरावजी को वह आलोचना मंजूर नहीं थी, उन्होंने स्वीकार भी नहीं किया । पर उन्होंने कहा – 'मैं जिस विभाग में रहता हूँ, वहाँ कृष्णा नदी का

पात्र उथल है । परंतु कृष्णा नदी जैसे पूर्व की और बहती है, वैसे उसका पात्र गहरा बन जाता है । आज जो शिक्षा आप को शायद उथल लगती हो, उस शिक्षा का दर्जा कुछ वर्षो के बाद घटेगा इसके बारे में मेरे मन में शक नहीं है । आज आपने ग्रामीण क्षेत्र में फैला हुआ शिक्षा का जाल देखा तो वहाँ कहने में बहुत तथ्य है । आज कल अनेक वर्ष एस.एस.सी. और हायर सेकंडरी में जो लडके प्रथम श्रेणी में आते है, उस में प्रधानत: ग्रामीण विभाग में लडकों का प्रमाण अधिक है । इसके पहले दादर और पुणे के लडके पहले दस-बीस क्रमांक में आते थे, परंतु वह चित्र आज बदल गया है । आज लातूर विभाग में जो विद्यार्थी प्रथम श्रेणी में आते हैं, उनके विषय में संपूर्ण महाराष्ट्र आश्चर्यचकित हुआ है ।'

महाराष्ट्र राज्य जनतंत्र समाजवाद की प्रयोगशाला बने इसलिए उन्होंने बहुत प्रयत्न किये । उसकी नीव डालने का और उस पर इमारत खडे करने का कार्य शिक्षा को करना पडता है यह पहचानने की दृष्टी यशवंतरावजी को थी । इतिहास का एक जिज्ञासू, अभ्यासू और सृजनशील विचारसंपन्न, एक द्रष्टा नेता, प्रशासक होने का भाग्य प्राप्त होने के कारण शिक्षा की अनिवार्यता उन्होंने ध्यान में ली ।

२५ अगस्त १९६० में विधानसभा में 'जनतंत्र नियोजन' इस विषयपर महत्त्वपूर्ण विचार प्रकट करते हुए उन्होंने शिक्षा के संबंध में अपने विचार स्पष्ट किये–

(१) माध्यमिक शिक्षा में व्यावसायिक शिक्षा पर अधिक जोर दिया गया ।

(२) होशियार और बुद्धिवान विद्यार्थियों को किसी प्रकार की बाधाएँ न आये । इसलिए उन्हें शिष्यवृत्तिद्वारा मदद की जायेगी । ऐसी भूमिका उन्होंने ली ।

(३) इस नीति के प्रभावी अमल के लिए ई.बी.सी. की सहुलियत जाहीर की । महाराष्ट्र राज्य ने स्वतंत्रता से उठायी गयी यह पुरोगामी नीति है ।

(४) पिछडे हुए विद्यार्थियों को शिष्यवृत्तियाँ देने की नीति अपनायी ।

(५) लोकभाषा यह ज्ञानभाषा होनी चाहिए यह विषय बहुत मूलगामी स्वरूप का होता है ।

(६) शिक्षा संस्कृति का प्रवेशद्वार है ।

(७) शिक्षाविषयक क्षेत्र में सतत प्रयोगशीलता आती रहे । ऐसी उनकी अपेक्षा थी ।

(८) महाराष्ट्र शासन ने निजी संस्थाओं को तंत्र निकेतन और इंजिनिअर्स कॉलेज खोलने की इजाजत दी। यह महाराष्ट्र शासन का निर्णय क्रांतिकारी है। यशवंतरावजी ने इसका स्वागत किया।

(९) विज्ञान तंत्रज्ञान की सहाय्यता से महाराष्ट्र सुजलाम सुफलाम करेंगे ऐसा उनका विश्वास था।

(१०) उद्योग धंदे के विकास के लिए प्रशिक्षा देनी चाहिए। श्रमिक प्रशिक्षित होनेपर औद्योगिक विकास के लिए उसका फायदा होगा। प्रशिक्षित श्रमिक नये तंत्र का, यंत्र का इस्तेमाल करने के लिए प्रवृत्त होगा। इससे नये उन्नति का मार्ग श्रमिक को प्राप्त होगा। इससे गरिबी कम होगी और पेशे के मौके में वृद्धि होगी।

मनुष्य के जीवन में उदात्त मूल्यों का बीजारोपन शिक्षा के द्वारा होता है। विचारसामर्थ्य के साथ ही संवेदनशीलता देने का कार्य ही शिक्षा करती है। क्योंकि शिक्षा में बडी संस्कारक्षमता छुपी है। मनुष्य का मन शिक्षा के संस्कार से अधिक संपन्न किये बिना समाज सच्चे अर्थों से समझ नहीं पाता। व्यक्ति के वैचारिक और भावनिक समृद्धि के लिए शिक्षा जितनी अनिवार्य है, उतनाही वह समाज के सामाजिक और सांस्कृतिक विकास के लिए आवश्यक है। शिक्षा प्रसार के लिए राजकीय, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक महत्त्व होना चाहिए। विषमता के दलदल में रौंदे हुए और जाति-जाति में पीसे हुए समाज की तो शिक्षा के बिना प्रगति का विचार करना संभव नही है। ज्ञानभाषा और लोकभाषा एक हुए बिना समाज का जीवन समर्थ और विकसित नही होता।

शिक्षा से मनुष्य की बौद्धिक बैठक मजबूत होती है। विचारों मे प्रगल्भता आती है और निर्णय लेने के लिए मन को समतुल्यता आती है।

'किसी कारण सुख से चला है कि नहीं यह देखने के लिए जैसे एकाध स्त्री रसोई घर में झाँककर देखकर तय करती है वैसे किसी महाविद्यालय की प्रगति वहाँ का ग्रंथालय देखकर की जाती है।'

हिमालय के ऊपर की गंगा जब भगीरथी बनकर भूतल पर आती है, तबही वह लोकोपयोगी बनती है। उसी के अनुसार ज्ञान की गंगा समाज के निचले स्तर तक पहुँचनी चाहिए। ऐसा हुआ तो वह सब के लिए कल्याणकारी होगा।

उपर्युक्त विवेचन से उनके शिक्षाविषयक विचार और सामान्य जनों के प्रति होनेवाली आत्मीयता प्रकट होती है। शिक्षा से ही सामाजिक परिवर्तन और

नव समाज निर्मिति हो सकती है यह उनके मन की नीति थी । शिक्षा का प्रचंड प्रवाह महाराष्ट्र के प्रत्येक देहात में पहुँच जाना चाहिए । और उन देहातों में नयी पिढी सुशिक्षित होनी चाहिए । शिक्षा के आधार से क्रांति हो सकती है यह उनका विचार था ।

डॉ. बाबासाहब आंबेडकर मराठवाडा विद्यापीठ के उपाधिदान समारोह में यशवंतरावजी ने कहा– 'विद्यापीठ में शिक्षा लेनेवाले विद्यार्थियों को स्थानिक प्रश्न समझकर उन्हें सुलझाने चाहिए । संकुचित प्रादेशिक भाव मन में से निकाल देने चाहिए । मराठवाडा जैसे महाराष्ट्र का घटक है वैसे महाराष्ट्र भी यह इस देश का घटक है । इस में राष्ट्रीय एकता को महत्त्व देना चाहिए ।'

विद्या की उपासना सब को करनी चाहिए । विद्या के सिवाय सभी उद्योग अंधे है यह उनकी सर्वव्यापी कल्पना थी । शिक्षा यह व्यक्ति के विकास का एक साधन है और यह सातत्यपूर्ण प्रक्रिया है । शिक्षा के आधार पर मनुष्य-बल की कार्यक्षमता बढाकर मानवीय मूल्य और ध्येय का पालन पोषण हो सकता है । इसके लिए उन्होंने प्राथमिक, माध्यमिक और उच्च शिक्षा को महत्त्व दिया । उच्च शिक्षा का लाभ सब को होना चाहिए । अशिक्षित युवक की अपेक्षा शिक्षित युवक ये अच्छे हैं । विद्यापीठ ने विद्यार्थियों को मातृभाषा में शिक्षा मिलनी चाहिए । शिक्षा में बुरी प्रथाओं का उच्चाटन यह शिक्षा से हो सकता है । महाराष्ट्र में तरुणों को उच्च शिक्षा के साथ तांत्रिक शिक्षा लेनी चाहिए । क्योंकि इस शिक्षा से राष्ट्र सामर्थ्यवान होगा । अमरिका में महाराष्ट्रीय तरुण तंत्रज्ञोंका समावेश अधिक है यही यशवंतराव चव्हाण के शिक्षाविषयक विचारों की फलश्रुति है । यशवंतराव चव्हाणने महाराष्ट्र में स्त्री शिक्षा और कृषि शिक्षा को महत्त्व दिया । उसके लिए विद्यापीठ की स्थापना की । बहुजन समाज में लडके-लडकियों को सहज सुलभ रीति से शिक्षा लेने के लिए अनेक रियाते, विशेषत: इ.बी.सी. सहुलियत दी गयी । इसलिए तो बहुजन समाज के अनेक तरुण डॉक्टर, इंजिनीयर, शिक्षक, वकील, वरिष्ठ अधिकारी आदि पदोंपर विराजमान हुए आप देखते हैं ।

महाराष्ट्र में अनेक शिक्षा संस्थाओं को सभी अर्थोंसे मदद की है । कर्मवीर भाऊराव पाटीलजी के द्वारा शुरू की हुई रयत शिक्षण संस्थाओं को आर्थिक मदद की । आगे यशवंतरावजी इस संस्था के अध्यक्ष हुए । आयु के अंतिम क्षण तक वे इस पदपर कार्यरत थे । इस पदपर रहते हुए तुम्हें सर्वाधिक आनंद कब लगेगा । इस प्रश्न का उत्तर देते हुए उन्होंने कहा कि– 'मैं महाराष्ट्र का

मुख्यमंत्री हुआ, उसकी अपेक्षा मुझे अधिक आनंद मैं रयत शिक्षण संस्था का अध्यक्ष हुआ तब हुआ । मैं जीवन में राजनीति नहीं करता तो मैं उत्तम साहित्यिक अथवा शिक्षक हो जाता ।' इस भावना से यशवंतराव चव्हाण के मन में शिक्षाविषयक जो आत्मीयता थी वह स्पष्ट हो जाती है ।

महाराष्ट्र निर्मिति के साथ मराठी भाषा को राजभाषा का दर्जा मिल गया । उच्च शिक्षा के दरवाजे सभी लोगों को खुले हुए ऐसी परिस्थिति में जब उच्च शिक्षा के संदर्भ में भाषा का प्रश्न निर्माण हुआ तब यशवंतराव चव्हाणने कहा कि उच्च शिक्षा मातृभाषा में देना चाहिए । शिक्षा हमे निचले स्तर तक पहुँचाना होगी तो वह विदेशी भाषा में कैसे पहुँच जायेगी? ऐसा मूलभूत प्रश्न उन्होंने उपस्थित किया । देहातों का देश होनेवाला भारत अंधश्रद्ध, निरक्षरता, गरिबी इन में उलझ गया है । ऐसी परिस्थिति में विदेशी भाषा का आधार लेकर उसे ज्ञानामृत पिलाने का तय हुआ तो उनकी दृष्टि से अनाकलनीय बन जायेगा । एक तो उनके सामने अनेक प्रश्न है । ऐसी परिस्थिति में नये प्रश्न बर्दाश्त करने की शक्ति उन में कहाँ से आ जायेगी । ऐसी सार्थ भीति वे व्यक्त करते हैं । लोगों को उनकी मातृभाषा में ज्ञान लेने दो यह कहकर लोकभाषा और ज्ञानभाषा एक ही होनी चाहिए । ऐसा वे आग्रह करते हैं ।

यशवंतरावजी ने शिक्षा को संस्कृति का प्रवेशद्वार माना है । उससे समाज का सर्वांगीण विकास तो होना चाहिए । लेकिन उसके साथ शिक्षा से राष्ट्र का समग्र सांस्कृतिक परिवर्तन का माध्यम बनाना आवश्यक है ऐसे यशवंतरावजी को लग रहा था । शिक्षा लेना यह एक भौतिक घटना न होकर शिक्षा व्यक्ति को सुसंस्कृत और संवेदनशील बनाने का एक साधन है । यशवंतरावजी इस बात का समर्थन करते थे । मनुष्य सच्चे अर्थों में 'मनुष्य' बनने की प्रक्रिया शिक्षा के संस्कार से होती है । इस विचार पर यशवंतरावजी की अपार श्रद्धा और विश्वास था ।

महाराष्ट्र के शिल्पकार के रूप में यशवंतरावजी का सामर्थ्य सर्वमान्य है । यशवंतरावजी के नेतृत्व मिलने के कारण महाराष्ट्र का भाग्य निखर गया । आज के महाराष्ट्र को सच्चे अर्थो ने 'महा-राष्ट्र' बनाने का सन्मान यशवंतरावजी को है ।

देश की प्रगति वहाँ की शिक्षा पर निर्भर है यह उन्होंने जान लिया था और शिक्षा ही समाजपरिवर्तन का एक प्रभावी साधन है यह पहचान कर यशवंतराव चव्हाण ने महाराष्ट्र के शैक्षणिक वातावरण को गतिमान किया । शिक्षा का

प्रचार और प्रसार करने के लिए उन्होंने अनेक सहुलियते देकर शिक्षा का प्रचंड प्रवाह महाराष्ट्र के प्रत्येक शहर में और प्रत्येक देहात में पहुँच दिया।

यशवंतरावजी ने प्रत्येक व्यक्ति को मातृभाषा में शिक्षा देने की आवश्यकता पर जोर दिया। सामान्य मनुष्य को विदेशी भाषा में आकलन होना संभव नहीं है। ज्ञानभाषा और लोकभाषा हुए बगैर समाज का जीवन समर्थ नहीं हो सकेगा। ग्रामीण शिक्षा अर्थात आसपास के विभागों का विकास करने का साधन जब शिक्षा बनेगा तब उसे उपयुक्त शिक्षा कहा जायेगा। शैक्षणिक संबंध में शहर और देहात में दोनों में अंतर कम पड रहा है ऐसा डर उन्हें लगता था, अत: यह अंतर कम करने की जरूरत पर वे अधिक भर देते हैं। कोई भी शिक्षा प्रश्न सुलझानेवाली होनी चाहिए, वह प्रश्न निर्माण करनेवाली हो तो उसका पुनर्मूल्यांकन किया जाना चाहिए।

शिक्षा यह जीवनदायी गंगा है। ये गंगा किसान, मजदूर, दलित, पददलितों के दहलीज तक पहुँच जाये इस दृष्टि से यशवंतरावजी के नेतृत्व में शासन ने रूपरेखा तैयार की। समाज में आर्थिक दुर्बल घटकों को मुआफी शिक्षा, उसके साथ ही बस्ती और काफिले तक शाला-महाविद्यालयों का विस्तार किया गया। उन्होंने एक बार कहा था– Mass Education is silent revoluation गुणवत्ता के नाम पर बहुजनों को शिक्षा इन्कार कर दी गयी थी। इसलिए उन में निराशा फैली थी। यशवंतरावजी को इतिहास का ज्ञान था। महाराष्ट्र में संत, वीर, पराक्रमी, विद्वान, देशभक्त और राजनीतिज्ञ लोगों की परंपरा है। यशवंतरावजी ने उस परंपरा में अंतर पडने नहीं दिया। परिवर्तनशील महाराष्ट्र को यशवंतरावजी के रूप से भव्य सपना पडा था। प्रत्येक शहर में और देहात में शिक्षा कैसे पहुँच जायेगी इसके लिए शासकीय नीति अमल में लायी।

मानसिक और बौद्धिक सामर्थ्य के लिए शिक्षा समाजकेंद्रित की। इसलिए तो आज ग्रामीण और आदिवासी भाग में विद्यार्थी अभियांत्रिकी, वैद्यकीय, तंत्रविषयक क्षेत्र में नाम कमा रहे हैं। शिक्षा अंतिम मनुष्य तक पहुँच जाये इसके लिए उन्होंने लोकाभिमुख निर्णय लिये। गरिबों के विषय में बहुत प्रेम होने के कारण यशवंतरावजी ने शिक्षणविषयक उपक्रम देहातों में कार्यान्वित किये। इसलिए उन्होंने सच्चे अर्थों में 'युगांतर' निर्माण किया। स्वातंत्र्य नाम की संकल्पना को मूर्त स्वरूप प्राप्त कर देने के लिए दो बातों की जरूरत है। एक रोटी और दूसरी ज्ञान। वह विकास की चाबी है। यशवंतरावजी ने यह

चाबी बहुजनों पर सौंप दी । इसी कारण हम यशवंतरावजी को मूलभूत दृष्टि के रूप में पहचानते है ।

डॉ. कुमार सप्तर्षी यशवंतरावजी के विषय में कहते है– 'जनता की सामुदायिक विवेकबुद्धिपर दृढ विश्वास होनेवाला प्रज्ञावंत राजनीतिज्ञ, विचारों का सम्मान करनेवाला और मराठी मनुष्य को अपने मनोविश्व का केंद्रबिंदू माननेवाला नेता था । विचारों की राजनीति करनेवाले यशवंतरावजी को सह्याद्रि का महामेरू ऐसी उपाधि पंडित नेहरूजी ने दी थी ।'

महाराष्ट्र के समाजकारणों में अनेक तत्त्वों के माध्यम से जो क्रांति हो गयी है उन में से शिक्षा यह एक महत्त्वपूर्ण तत्त्व है । महात्मा फुलेजी और सावित्री फुलेजी इन दोनों ने प्रौढ शिक्षा, स्त्रीशिक्षा और समाजशिक्षा इनके माध्यम से क्रांतिकारक कार्य का प्रारंभ किया ।

यशवंतरावजीने महात्मा फुलेजी का कार्य आगे चलाया । उद्योग, खेती और शिक्षा ये यशवंतरावजी के शासकीय नीति की त्रिसूत्री थी ।

यशवंतरावजी शिक्षा की तरफ जरूरत के साथ आर्थिक विकास का एक मूलभूत साधन की दृष्टी से देखते थे । शिक्षा का महत्त्व विशद करते हुए यशवंतरावजी कहते है – 'शिक्षा का प्रकाश समाज के अन्तिम स्तर तक हम ले जा सके तो महाराष्ट्र की शक्ति इतनी बढेगी की उसे किसी की कृपा पर निर्भर रहने का कोई कारण नही रहेगा । वह अपना और अपने राष्ट्र की रक्षा करेगा ।' शिक्षा के संबंध में उनका यही मूलगामी दृष्टिकोन था ।

यशवंतरावजी कहते हैं– 'ज्ञान यह एक शक्ति है । विद्या यह एक प्रकार की ऊर्जा है तो शिक्षा यह जलसिंचन है । महाराष्ट्र की इतनी बड़ी शैक्षणिक परंपरा होते हुए भी आज की तरुण पिढी स्थान स्थान पर जातीयवाद करती है इसका मुझे खेद है ।'

इसी प्रकार की जातिभेद की दीवारें तोडकर यशवंतरावजी को मानवतावाद प्रस्थापित करना था । इसलिए उन्होंने अपने कार्यकाल में सामाजिक, आर्थिक और समता स्थापित करने के कानून बनाये ।

अनेक पिढियाँ शिक्षा से वंचित रह गयी थीं । इसलिए यशवंतरावजी उन्हें शिक्षा देने के लिए कटिबद्ध हो गये । जहाँ गाँव वहाँ प्राथमिक शाला स्थापन कर के शिक्षाप्रचार का कार्य बढाया । मुफ्त और सक्त शिक्षा, प्राथमिक शाला का खेतीविषयक बेसिक जीवन शिक्षा शाला में रूपांतर, प्राथमिक शालाओंकी स्वतंत्र इमारते ऐसे दूरदर्शी निर्णय उन्होंने लिये ।

माध्यमिक शिक्षा अर्थपूर्ण और सर्वस्पर्शी होनी चाहिए। समाज के आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक क्षेत्र में अनेकविध प्रश्नों का उस में विचार होना चाहिए। ऐसी माध्यमिक शिक्षा की व्यापकता बढाने के लिए उन्होंने अनेक निर्णय लेकर जनहित करने का प्रयास किया। ग्रामीण भाग में अधिकाधिक विद्यार्थियों को माध्यमिक शिक्षा का अवसर मिलना चाहिए इसलिए उन्होंने निजी संस्थाओं को हाइस्कूल खोलने की इजाजत दी। इसके साथही उन्होंने इन संस्थाओं को अनुदान देने की योजना अमल में लायी। माध्यमिक शिक्षा का दर्जा बढाने के लिए ७ मार्च १९६० को पूना में एस.एस.सी. बोर्ड की स्थापना की।

समता पर आधारित समाज निर्माण करने के लिए आर्थिक विकास यह एक महत्त्व का साधन है। इसी प्रकार की समाजरचना का सपना साकार होने के लिए शिक्षा की आवश्यकता है। समाज में अज्ञान, दारिद्र्य, रूढी, परंपरा, सनातनी प्रवृत्तियाँ नष्ट करनी हो तो हर एक मनुष्य को शिक्षा की 'तीसरी आँख' आवश्यक है।

यशवंतरावजी ने गरीब विद्यार्थियों को इ.बी.सी. की सहुलियत देने पर आलोचकों ने कहा कि इस निर्णय से हजारों बेकार निर्माण होंगे। यशवंतरावजी ने इसका प्रतिवाद करते हुए कहा– 'मुझे अशिक्षित बेकारों की फौज की अपेक्षा सुशिक्षित बेकारों की फौज चलेगी। क्योंकि वे देश के प्रश्न ध्यान में लेकर उन्हें सुलझाने का प्रयत्न तो कर सकेंगे।'

वे कहते है कि– 'मनुष्य के पास जो जो अच्छा है उसका गौरव होना चाहिए। विद्या के मंदिर में किसी प्रकार का भेद न होना चाहिए। ज्ञानामृत की प्यास हर एक को होनी चाहिए। समाजवादी समाजरचना में यह तत्त्व प्रमुखता से माना जाना चाहिए।'

शिक्षा की पद्धति में और शिक्षित युवकों की मनोवृत्ति में बदल करना चाहिए। केवल नौकरी प्राप्त करने के लिए अथवा उदरनिर्वाह का उद्योग प्राप्त करने के साधन के रूप में शिक्षा की ओर देखना उचित नही हैं। शिक्षा से युवकोंमें नौकरी पेशेकी निर्माण होनेवाली प्रवृत्ति घातक है। शिक्षा और नौकरी का संबंध जोड़ना उचित नही है।

उच्च शिक्षा के संदर्भ में यशवंतरावजी कहते है की– उच्च शिक्षा पर केवल मुठ्ठीभर लोगोंका अंमल प्रस्थापित हुआ तो समाज की अधोगति हो सकती है। इसलिए ज्यादह से ज्यादा लोगों तक उच्च शिक्षा का लाभ पहुँचाना

चाहिए। ऐसा हुआ तो जात, धर्म, पंथ आदि संकुचित वृत्ति में से समाज बाहर आकर सामाजिक जीवन अधिक निर्दोष, साफ, स्वस्थ हो सकेगा।

विद्यापीठीय शिक्षा में, अभ्यासक्रम में कौनसी बातों का समावेश होना चाहिए? संशोधन कार्य किस प्रकार होना चाहिए? इस संबंध में यशवंतरावजी ने कहा– 'तुम जिस कालखंड में रहते हो, जिस प्रदेश में रहते हो उसी कालखंड में और प्रदेश में जो ज्वलंत समस्याएँ हैं, उस विभाग की महत्त्वपूर्ण जरूरते हैं, वहाँ घटनेवाली घटनाएँ, वस्तुस्थिति है इन सबका गहरा अभ्यास, संशोधन कार्य होना आवश्यक है। जिस प्रदेश में विद्यापीठ है, विद्यापीठ को उस प्रदेश का अविभाज्य भाग बनना चाहिए।'

ज्ञानभाषा यह मातृभाषा, लोकभाषा हो इसलिए शिक्षा का माध्यम मातृभाषा हो यह महात्मा गांधीजी की भूमिका यशवंतरावजी को मंजूर थी। उनके मत के अनुसार यदि शिक्षा निचले स्तर तक पहुँचाना हो तो विदेशी भाषा में शिक्षा देना नहीं चलेगा। शिक्षा मातृभाषा में देनी चाहिए। ज्ञानभाषा और लोकभाषा एक हुए बगैर समाज, उन्नत विकसित नहीं होगा। भाषा का सच्चा सामर्थ्य विचार करने में हैं। विदेशी भाषा में विचारों की अपेक्षा पाठांतर पर जोर रहता है। हमारे विचारों को चालना नही मिल सकेगी तो इसी प्रकार की शिक्षा निकम्मी होती है। भारत में प्राचीन काल से ज्ञानभाषा और मातृभाषा इन दोनों में अलगाव था। इसलिए सामान्य मनुष्य तक ज्ञान अथवा विचार पहुँच नही सके।

संक्षेप में शिक्षा से सभी समाज समर्थ हो सकता है। क्योंकि शिक्षा का प्रवास असत्य की ओर से सत्य की ओर, अंधकार की ओर से प्रकाश की ओर, मृत्यू से अमृत की ओर होता है। इसलिए शिक्षा से तुम्हे समर्थ बनाना है और समाजजीवन तुम्हे समर्थ बनवाना है। शिक्षा से समाजजीवन समर्थ बन सकता है।

यशवंतरावजी ने शिक्षा के माध्यम से अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा है– 'मैं तीन भाषा का पुरस्कर्ता हूँ जिसे थ्री लँग्वेज फॉर्म्युला कहते है। जिस में मातृभाषा के साथ हिन्दी राष्ट्रभाषा, हिन्दी के साथ कुछ काल तक अंग्रेजी भाषा होना आवश्यक है।' यशवंतरावजी के मत अनुसार हमारे देश में उच्च शिक्षा का माध्यम भी मातृभाषा ही होनी चाहिए। क्योंकि विदेशी भाषा में उच्च शिक्षा दी गयी तो समाज के अंतिम स्तर तक वह पहुँचेगी कैसी?

सच तो यह है कि भाषा विचार के बाद आती है! भाषा का सच्चा सामर्थ्य

विचार व्यक्त करने में है । इसलिए भाषा विचार व्यक्त करने से संपन्न होती है । भाषा के विकास से सांस्कृतिक संपन्नता बढती है और इन सब बातों का संक्रमण-संवर्धन उच्च शिक्षा से होना चाहिए ।

मातृभाषा से शिक्षा दी जाने से मराठी भाषा ज्ञानवाहिनी होगी । उसके लिये उन्होंने वैसे निर्णय लिये । इसलिए उन्होंने महाराष्ट्र राज्य साहित्य और संस्कृती मंडल की स्थापना की । मराठी विश्वकोश निर्मिति का कार्य भी उन्होंने किया ।

१९६० में महाबलेश्वर में आयोजित काँग्रेस कार्यकर्ताओं के शिबीर के समारोप प्रसंग में यशवंतरावजी ने कहा– 'मैं आपसे कहता हूँ कि शिक्षा की तरफ केवल सामाजिक जरूरत की दृष्टि से मैं नहीं देखता । मेरे मत से शिक्षा आर्थिक विकास का एक मूलभूत साधन है । हम में शक्ति निर्माण करने के लिए हमारे पास मनुष्यबल के सिवाय दूसरा कोई साधन नही है । हमे इस साधना का विकास करने के लिए उसे शिक्षा की जोड देना है । देहात में बिजली पहुँचे बिना जैसे खेती का विकास नही होता वैसे हमारा अनुपजाऊ पडा हुआ मनुष्यबल का ये जो बडा साधन संपत्ति भाग है उस में शिक्षा की बिजली लिये बिना नवसामर्थ्य नहीं होगा । यही मेरा शिक्षा की तरफ देखने का दृष्टिकोन है ।'

□ कृषी

शिक्षा यह समाजपरिवर्तन का एक प्रभावी साधन है इस पर उनका दृढ विश्वास था । खेती का शास्त्रीय दृष्टिकोन लोगों में बढ़ाना चाहिए । पढा हुआ मनुष्य किसान होना चाहिए । तुम्हारी खेती तुम्हारा विचार न रहकर देश का विषय बनी हुई है । तुम्हारी खेती नहीं फलेगी तो तुम्हारा नसीब अथवा भाग्य नहीं फलेगा । यशवंतरावजी के ये शब्द कितने दूरदर्शी और गहरे हैं जो खेती का विचार करते हैं ।

किसान खेती की ओर व्यवसाय के रूप में देखता नहीं, वह उसे जीवन-निर्वाह के साधन के रूपमें देखता है । व्यवसाय अथवा धंदा करनेवाला मनुष्य धंदे में मिलनेवाला मुनाफे का आर्थिक फायदे के लिए इस्तेमाल करता है । इसलिए खेती व्यापारी तत्त्वों पर करनी चाहिए । ऐसा हुआ तो किसानों का उत्कर्ष हो सकेगा ।

खेती के आधुनिकीकरण संबंध में हम बहुत पीछे पडे हैं । इसलिए खेती

का विकास नहीं हुआ है । खेती के विकास में कर्ज का प्रश्न, खाद, बीज, पानी पूर्ति का प्रश्न महत्त्वपूर्ण है । उसका छुटकारा उचित पद्धति से नहीं होता। इसलिए सैकडों वर्षों से खेती का विकास ठहर गया है ।

किसान अज्ञानी होने से कोई भी प्रबोधनकारी विचार तुरन्त स्वीकार नही करते । यही मनोवृत्ति खेती के तांत्रिक विकास के लिए बाधा बनती है । भारतीय किसानों ने खेती और शिक्षा इन दोनों का संबंध तोड दिया है । किसान और खेती से संबंधित मनुष्य विद्वान हुए बगैर खेती में होनेवाली हानि टल नहीं सकेगी। इसलिए किसान को अकलमंद करने के लिए उसे आधुनिक पद्धति से खेती का ज्ञान देकर उसका अज्ञान दूर करना चाहिए । इसलिए खेतीशास्त्र के अभ्यास के लिए अधिक महत्त्व देना चाहिए । खेती का नया तंत्रज्ञान, शास्त्रीय ज्ञान की प्रत्यक्ष खेती में प्रयोग की जरूरत और परिवर्तन से आनेवाली खेती में आर्थिक समृद्धि यही मूल विषय लेकर परंपरागत खेती की कल्पना दूर हटाने का आव्हान किया । नये प्रयोग का ज्ञान किसान के लडकों तक पहुँच जाना चाहिए । इसलिए कृषी विद्यापीठ की स्थापना पर जोर दिया। यशवंतरावजी ने अगुआई कर के परभणी और अकोला में कृषी विद्यापीठ की स्थापना की । किसान और खेती से संबंधित लोग विद्वान, समझदार नहीं होंगे तबतक भारतीय खेती उपजाऊ नहीं होगी । यह विचार सामने रखकर कृषी शिक्षा पर जोर देने का काम जोश से किया ।

यशवंतरावजी चव्हाण बडे जननेता थे । सच्चा जननेता यह एक अर्थ से जनशिक्षक होता है । उन्होंने जीवनभर जनशिक्षा का कार्य किया । सत्ताधीश होने से पहले, सत्ता पर आने के बाद, सत्ता से दूर जाने के बाद इन तीनों अवस्था में उन्होंने जन-शिक्षा का कार्य सतत किया ।

यशवंतराव को कृषी औद्योगिक समाजरचना अभिप्रेत थी । उसके लिए ग्रामीण विभाग में खेती के माल पर प्रक्रिया करनेवाले उद्योग शुरू करने चाहिए । इससे किसानों को बाजारपेठ मिलेगी । उसके साथही उद्योग के लिए लगनेवाला कच्चा माल प्राप्त होगा । वह कच्चा माल बाहर से नहीं लाया जायेगा । वह लाने के लिए परिवहन के खर्च में बचत होगी । लोगों के परिश्रम बचेंगे । इतनाही नही तो ग्रामीण विभाग में उद्योग शुरू होने से वहाँ के लोगों को मजदुरी मिलेगी और उन्हें शहर की ओर जाने की जरूरत नहीं पडेगी ।

ग्रामीण विभाग में औद्योगिक वसाहत स्थापन करनी चाहिए । यह विचार मूर्त स्वरूप में लाने के लिए एम.आय.डी.सी. की स्थापना कर जिला और

तालुका स्तर पर औद्योगिक वसाहते निर्माण की गयी हैं । इससे विकेंद्रीकरण को मदद हो रही है ।

एकाध व्यक्ति के पास ज्यादहसे ज्यादह कितनी जमीन चाहिए इसका सामाजिक समता और न्याय भूमिका की दृष्टि से विचार किया गया । खेती करनेवाला मनुष्य खेती का स्वामी होना चाहिए । अर्थात जो खेती करेगा उसकी जमीन और उस में परिश्रम करेगा उसकी खेती यह तत्त्व स्वीकार किया गया ।

भूमिहीन किसान और श्रीमान किसान इन दोनों में होनेवाली विषमता कम करने के लिए एक व्यक्ति के नाम पर पर्याप्त मात्रा मे खेती होनी चाहिए और शेष रह गयी जमीन खेती में काम करनेवाले मजदूरों को बाँटकर देनी चाहिए । जब ऐसा होगा तब भूमिहिनों का प्रश्न सुलझ जायेगा । यही विचार यशवंतरावजी ने व्यक्त किया था ।

भारत में बहुत बडी मात्रा में जमीन अविकसित रहने से वह अनुत्पादक और अनुपजाऊ रह गयी है । इससे किसानों की और देश की हानि होती है या क्षति होती है । यह हानि टालने के लिए उसकी बोआई होनी चाहिए । सारांश खेती की समस्याएँ स्पष्ट करके उसके संबंध में उन्होंने उपाय सुझाये । तांत्रिक अंगों का विकास करने की जरूरत और महत्त्व है । इसके पीछे उनकी प्रामाणिक लगन दिखाई देती है ।

महाराष्ट्र यह कृषी-प्रधान राज्य है । म. फुलेजी के लेखन से और खुदके अनुभव से उन्हें किसानों की दैन्यावस्था की कल्पना थी । यशवंतरावजी द्विभाषिक राज्य के मुख्यमंत्री थे । तब उन्होंने खेतीविषयक सुधारना का पहला कदम उठाया । खेती के संबंध में स्वातंत्र्य के बाद इ.स. १९५७ का वर्ष महाराष्ट्र में किसानों की दृष्टि से 'युगप्रवर्तक' वर्ष का उदय था । यशवंतरावजी ने खेती के क्षेत्र में पुरोगामी कदम रखकर प्रत्यक्ष निर्णय किया था । ऐसा निर्णय करनेवाला महाराष्ट्र भारत में पहला राज्य ठहरा था ।

१९५६ में नया काश्तकारी अधिनियम (कानून) तैयार किया गया । क्योंकि खेती के क्षेत्रमें धनवान और बलवान किसानो का वर्ग तैयार हुआ था । इससे 'स्वामीत्व एक का और कष्ट दूसरों का था । जो खेत नें बोआई जोताई करेगा इसकी जमीन ।' यह तत्त्व सामने रखकर कानून तैयार किया था । इसके साथ ही खेत जमीन की कमाल धारणा पर मर्यादा डालने का 'सिलिंग' कानून बनाया । सच्चे अर्थों में महाराष्ट्र देश मे पुरोगामी है यही बात यशवंतरावजी

ने देश को सर्वप्रथम दिखा दी । १९६१ के जनवरी में महाराष्ट्र में खेत जमीन के संबंधमें विधेयक सामने आया और इस विधेयक से दूरगामी जमीन सुधारने की नींव डाली गयी । खेती में फसल पैदा करने के लिए खेती के लिए पानी पूर्ति की कायम व्यवस्था करने का कठीन प्रश्न सामने था । महाराष्ट्र में नदियों का और भूरचना का अभ्यास कर के नहरे और बिजली निर्मिति इस दो दृष्टियों से संशोधन करना चाहिए था । उसके लिये यशवंतरावजी ने शास्त्रशुद्ध पद्धति से योजना बनाने का निश्चय किया था । नहरे, पानी की पूर्ति, पानी की उपलब्धता और बिजली निर्मिति ऐसे अनेक हेतू से उन्होंने इन कामों का नियोजन शुरू किया । विदर्भ और मराठवाडा में नहर योजना के लिए सरकारने एक इरिगेशन डिव्हिजन और पाच सब डिव्हिजन स्थापन किये । खेती के लिए पानी पूर्ति और व्यवस्था के संबंध में सरकार को सलाह देने के लिए बम्बई राज्य इरिगेशन बोर्ड की स्थापना इसी काल में हुई ।

कुछ नये बाँधों के, जल विद्युतयोजनाओं के और थर्मल पॉवर स्टेशन के काम यशवंतरावजी ने अपने कार्यकाल में किये । कोयना जल विद्युत योजना का २०७ फीट ऊँचाई का काँक्रीट का बाँध बाँधने का प्रमुख प्रकल्प है । उसका प्रारंभ १ मार्च १९५८ को यशवंतरावजी के करकमलोंद्वारा हुआ । वैसे ही मराठवाडा का परिवर्तन करनेवाले पूर्णा प्रकल्प का खर्च १७ कोटी ५० लाख रुपये था । उस प्रकल्प का प्रारंभ भी यशवंतरावजी ने किया । सिद्धेश्वर और एकलहरे इन दोनों स्थानों पर बाँध था और कार्यालय वसमत में था । नीरा नदी की घाटी का संपूर्ण विकास करना था । इस उद्देश से नीरा नदी पर पीर के स्थान पर वीर बाँध बाँधने की योजना भी उनके कार्यकाल में हुई । उन्होंने इस योजना का दूसरी पंचवार्षिक योजना में समावेश किया और पाँच वर्षों के काल के लिये ४२५ लाख रुपयों का प्रबंध किया और इस योजना से संपूर्ण नीरा नदी की घाटी का क्रांतिकारी परिवर्तन कर दिया । वैसेही विदर्भ में पारस स्थान पर होनेवाला थर्मल पॉवर स्टेशन यह भव्य प्रकल्प यशवंतरावजी ने अपने कार्यकाल में पूर्ण किया ।

□ सहकार

महाराष्ट्र में अल्पभूधारक किसानों की संख्या अधिक हैं । उस में भी सूखी खेती का क्षेत्र अधिक । ऐसी अवस्था में किसानों की दैन्यावस्था समाप्त कैसी करनी चाहिए इसका विचार करते हुए यशवंतरावजी ने किसानों की खेती को

जोड व्यवसाय अथवा उद्योग की जोड दिये बगैर पर्यायी व्यवस्था निर्माण नहीं हो सकेगी, यह बात अपने साथियों के गले उतार दी । कपास की पैदास करनेवाले किसानों को सूत मिल की जोड, दलहन की पैदास करनेवाले किसानोंको सूत-मिलकी जोड, गन्ने की पैदास करनेवाले किसानों को शक्कर कारखानों की जोड मिलनेपर किसानों की फसल को निश्चित रूप से बाजारपेठ उपलब्ध होगी, उन्हें पैसे मिल जायेंगे, उसकी खेती के साथ उद्योग धंदों की समृद्धी भी होगी ऐसा उनका विश्वास था । परंतु यह उद्योगधंदा सहकारी तत्त्वों पर चलाना चाहिए । सहकार की भावना बढनी चाहिए ऐसा उनका आग्रह था । इसके लिए उन्होंने समय समय पर अर्थतज्ज्ञ, सहकार के पुरस्कर्ता लोगों से विचारविनिमय किया । सहकार से ही किसान कारखानों का और मिल का मालिक होता है । इससे इस किसान के साथ उस विभाग की आर्थिक स्थिति सुधार के लिए मदद होती है । खेती से संलग्न सहकारी कारखानदारी से एक नयी औद्योगिक समाजरचना अस्तित्व में आ सकती है ऐसा उनका विश्वास था ।

किसान की गर्दन को कसा जानेवाला सहुकारी पाश या फंदा दूर होना चाहिए । इसलिए उसे जरूरत के समय अर्थसाह्य मिलना चाहिए । इस हेतू से महाराष्ट्र में सहकारी आंदोलन मजबूत करने के लिए कृषी औद्योगिक अर्थव्यवस्था का आधार इस आंदोलन से मिलना चाहिए यह उनकी नीति थी ।

यशवंतरावजी ने सोच समझकर सहकारी आंदोलन को नयी उर्जित-अवस्था दी । राजनीति में सक्रिय होनेवाले नेता और कार्यकर्ताओं को सहकारी आंदोलन यह एक महत्त्व का माध्यम प्राप्त हुआ । परिणामत: सहकारी शक्कर कारखानों की संख्या महाराष्ट्र में बढती गयी । इसके साथ ही ग्रामीण विभाग में अन्य अनेक सहकारी संस्थाएँ स्थापन की गयी । खाद, बीज, विपणन संस्था आदि अनेक संस्थाएँ स्थापित हो गयी । इन सहकारी संस्थाओं के सामने विविध समस्याएँ थी । जैसे अपर्याप्त अर्थसाह्य, नौकरशाही की मनमानी, अत्यल्प लाभ और अन्य समस्याएँ यशवंतरावजी ने सुलझाने का प्रयत्न किया । आगे जो सहकारी शक्कर कारखानों का जाल संपूर्ण महाराष्ट्र राज्य में फैला था इन सहकारी संस्थाओं की नींव यशवंतरावजी ने अपनी दूरदृष्टि से डाली थी, यह बात कोई भी स्वीकार करेगा । शक्कर कारखानों के परिसर में सहकारी सूत मिल, सहकारी कुक्कुट पालन संस्था, दूध उत्पादक संस्था, खेती के माल पर प्रक्रिया करनेवाली अन्य सहकारी संस्था, खरेदा-बिक्री संघ

ऐसे अनेक उद्योग खडे रहे । उस में से ही आगे सहकारी पतपेढियों का और बँको का प्रस्थ बढता गया । इस सहकारी आंदोलन से ग्रामीण भागों का परिवर्तन हुआ । उससे से ही आगे सर्वांगीण विकास को गति मिली । उसके साथ ही शैक्षणिक सुविधा, स्वास्थ्य सुविधा, यातायात परिवहन अनेक बातों मे प्रगति हो गयी । सहकारी संस्थाओं को यशवंतरावजी ने ठोस स्वरूप का योगदान दिया । राज्य की ओर से सहकारी संस्थाओं को पूँजी और अनुदान के स्वरूप में बहुत अर्थसाह्य उन्होंने किया । उन संस्थाओं के आर्थिक व्यवहार सरकारी नियंत्रण में लाये गये । किसानों को पतपूर्ति करनेवाली संस्थाएँ सभी स्तर पर निर्माण की गयी ।

सहकारी आंदोलनका जाल ग्रामीण भाग में कृषी क्षेत्र को जोडने का यशवंतरावजी का उद्देश मूलगामी स्वरूप का था । इस सहकारी आंदोलन से ग्रामीण और शहरी भाग में लोग घुलमिल जायेंगे । सहकारी संस्थाओं से जो उत्पादन बढ़ा है वह ज्यादहसे ज्यादह क्षेत्र मे वितरित किया जायेगा । इससे उचित अर्थो में समाजवादी समाजरचना अस्तित्वमें आ सकेगी इसपर उनका प्रचंड विश्वास था । सहकारी आंदोलन पक्षीय राजनीति से अलिप्त रहना चाहिए और वह उचित अर्थोमें जनतंत्र बलवान करने का आंदोलन होना चाहिए । यशवंतरावजी कहते हैं– 'सहकारी आंदोलन यह कुछ एकाध पक्ष का आंदोलन नहीं है । तात्त्विक दृष्टि से ये सहकारी आंदोलन मूलत: जनतंत्र का आंदोलन है यह हमें नहीं भूलना चाहिए । इस आंदोलन के पीछे यह जो दृष्टिकोन है वह हमे अच्छी तरह से समझ लेना चाहिए । और जनतंत्र का यह स्वरूप कहीं भी खराब नही होना चाहिए इस संबंध में हमे सावधानी बरतनी चाहिए । लेकिन वह खराब हुआ तो वह क्यों खराब हुआ इसकी हमे सतत खोज करनी चाहिए । सामान्य और शोषित समाज के काम आना यह तो इस आंदोलन का प्राण है । लेकिन सच्चे अर्थों में हमे यह आंदोलन चलाना होगा तो उसकी ओर हमे जनतंत्र दृष्टिकोन से देखना चाहिए ।'

महाराष्ट्र में ग्रामीण किसान और बहुजन समाज के विकास के लिए पंचायत राज और सहकार का रचनात्मक कार्यक्रम कार्यान्वित किया । उनका यह कार्य एक दृष्टि से महात्मा फुलेजी के सत्यशोधक आंदोलन के नजदिकी था, तो दूसरी ओर वे महात्मा गांधीजी के स्वायत्त देहात की संकल्पना का स्वीकार कर रहे थे ।

सहकार के क्षेत्र में महाराष्ट्र में होनेवाली पोषक परंपरा का यशवंतरावजी

ने पूरी तरहसे उपयोग कर लिया । इस में शक्कर कारखानदारी में उन्होंने सहकार का प्रयोग किया । इससे भारत में सबसे ज्यादा सहकारी शक्कर कारखाने निर्माण हुए । इसके सिवाय सहकारी पद्धति से माल की बिक्री, कर्जपूर्ति, गृहनिर्माण, भूविकास बँक आदि उपक्रम उन्होंने शुरू किये । बहुजन समाज की सर्व अर्थ से सुधारना होनी चाहिए । इसलिए उन्होंने बहुविध कार्य किये ।

यशवंतरावजी ने सहकार, पंचायत व्यवस्था और काँग्रेस के तत्त्वज्ञानपर विश्वास रखनेवाली एक पिढी तैयार की । यशवंतराव चव्हाण के प्रारंभिक काल में सहकारी क्षेत्र में पद्मश्री विखेजी पाटील, धनंजयरावजी गाडगील, रत्नाप्पाजी कुंभार तात्यासाहबजी कोरे, वसंतदादाजी पाटील, अण्णासाहबजी शिंदे, यशवंतरावजी मोहिते, शंकररावजी मोहिते, शंकररावजी काले, शंकररावजी कोल्हे, काकासाहबजी वाघ आदि सहकारमहर्षी तैयार हुए । इन सब लोगों ने महाराष्ट्र के कोने कोने में सहकार आंदोलन चलाया । इसके साथ ही काँग्रेस के लोकाभिमुख राजनीति को विश्वासपूर्वक आधार प्राप्त कर दिया । यशवंतराव चव्हाण के काल में काँग्रेस के सदस्य अधिक प्रगल्भ कृतिशील और रचनात्मक बन गये । ग्रामीण भाग में 'विना सहकार नहीं उद्धार' का उद्घोष हुआ । हर एक गाँव में सहकारी सोसायटी ने श्रमिक किसान को आर्थिक आधार दिया । ग्रामपंचायत ने भी इस सहकार को सहकार्य किया और काँग्रेस की राजनीति आगे ले जाने में साह्यता की । ग्रामसफाई, ग्रामीण भाग में जिला परिषद शालाओंने समाजजीवन में परिवर्तन किया । इसका श्रेय यशवंतरावजी को देना पडता है । क्योंकि वे 'सिस्टर बिल्डर' थे । एक हीं समय में बहुविध आयामों को स्पर्श करने की शक्ति उन में थी । महाराष्ट्र के संतुलित विकास का श्रेय भी उन्हें ही देना पडता है । इस संदर्भ में यशवंतराव चव्हाण कहते हैं– 'समाजवादी दिशा की ओर हमने दो कदम आगे रखे हैं । अब भी सौ- डेढ सौ कदम हमे रखने पडेंगे । सब को समान अवसर मिलना चाहिए । आर्थिक विषमता से होनेवाला शोषण बंद होना चाहिए । कल के महाराष्ट्र राज्य का कारोबार उत्तम, साफ और स्वच्छ होना चाहिए । दुसरी बात यह कि पंचवार्षिक योजना का बालक हिंडोला में कदम दिखाकर नव महाराष्ट्र की प्रगति का यकीन दिलानेवाला चाहिए । तिसरी बात यह कि राजनैतिक, सामाजिक और साहित्यिक इन सभी क्षेत्रों में एकात्म भावना का सभी को प्रयत्न करना चाहिए । तब ही महाराष्ट्र राज्य जनता का राज्य होगा । वह राज्य लोककल्याण

के लिए काम करेगा और भारत के नक्शे में होनेवाले तारों में एक नया तेजस्वी तारा चमक उठेगा।' यशवंतराव चव्हाण का यह लोकसत्ताक राष्ट्रवाद विकासवादी और संपूर्ण भारतीय प्रगति का विचार करनेवाला था।

□ समाजवाद

यशवंतरावजी का वैचारिक आधारस्तंभ समाजवाद है। काँग्रेस में समाजवादी समाजरचना का संकल्प पक्ष को जाहिर किया जाना चाहिए इसके लिए उन्होंने सतत प्रयत्न किया। महाराष्ट्र में सामाजिक समता और न्याय कैसे मिल सकेगा इस पर उनका जोर था। वह करते समय उनका ध्यान ग्रामीण जनता और उस जनता में गरीब और निचले स्तर के लोगों तक अलग अलग योजना और उसके फायदे कैसे मिल सकेंगे इसकी ओर था। उस दृष्टि से उन्होंने अपने मन में महाराष्ट्र के बाँधनी का चारसूत्री कार्यक्रम तय कर रखा था।

खेती में अकालग्रस्त भाग का प्रश्न और उनका विकास इनकी ओर उनका ध्यान था। क्योंकि वे उस भाग से आये थे। उस भाग में लोगों के क्लेश और कष्ट इसका उन्हें अच्छा आकलन हुआ था। उसके साथ खेती उद्योग जब तक प्रगत नहीं होता तब तक ग्रामीण विभाग का सच्चा विकास नहीं होता और उस दृष्टि से कृषी का औद्योगीकरण और कृषीसंबंधी की दृष्टि से औद्योगीकरण जल्दी से जल्दी होना चाहिए इस पर उन्होंने जोर दिया था. आज महाराष्ट्र में और विशेषत: दक्षिण महाराष्ट्र में, खेतीसंबंधी अथवा खेतीपर आधारित जो उद्योगधंदे प्रस्थापित हुए हैं और जिसके कारण तेजी से ग्रामीण विभाग की प्रगति हुई हैं इसका संपूर्ण श्रेय यशवंतरावजी को है।

इसके साथ ही महाराष्ट्र के अलग अलग विभागों में उद्योगधंदे स्थापन करने के लिए जो संस्थाएँ यशवंतरावजी के डेढ वर्ष के कार्यकाल में स्थापन हुई इन सबको हम जानते हैं। उस में सिकॉम, एम.आय.डी.सी., एन.एम.एफ.सी. हैं। इन संस्था का जाल आज सभी ओर फैला हुआ दिखाई देता है।

यशवंतरावजी की समाजवाद की कल्पना जनतंत्र पर आधारित है। मार्क्सप्रणीत रशिया में समाजवाद जनतंत्र को मारक है। भारत में समाजवाद लाने के लिए यहाँ की परिस्थिति ध्यान में लेनी चाहिए। समाजवादी मार्ग से यह प्रगति साध्य कर सकेंगे। भारत में उसके लिए सार्वजनिक क्षेत्र की निर्मिति और विस्तार करने की नीति फायदेमंद होगी।

सार्वजनिक क्षेत्र के द्वारा देश में लोगों का कल्याण साध्य करना यह भारत

में समाजवाद का असली सूत्र है । भारतीय लोगो में जो आर्थिक दरार पडी है उसे कम करना समाजवाद का उद्देश है । उसकें अनुसार समाज में सभी लोंगो को एकसमान बर्ताव और समान प्रकार का मौका निर्माण करना केवल समाजद्वारा संभव है ऐसा मत उन्होंने व्यक्त किया ।

समाजवाद में किसी का शोषण न हो यह यशवंतरावजी को अभिप्रेत था । जिस में हर एक की भौतिक और आर्थिक समस्याएँ सुलझी है ऐसी समाजरचना यानी कि समाजवाद है । सब को समान मौका देकर उत्पादन में होनेवाला फर्क या अंतर कम करना यही समाजवाद का उद्देश है ।

आर्थिक विषमता से होनेवाला शोषण बंद करना, हर एक को संधी उपलब्ध कर देना यानी कि समाजवाद है,ऐसी व्याख्या उन्होंने की थी ।

समाजवादी समाजरचना निर्माण करना यह तो अपनी राज्यघटना का उद्देश है । भारत का वह निश्चय है, ध्येय है । फिर भी अंतिम मंजिल तक पहुँचने के लिए यशवंतरावजी ने तीन कसौटियाँ स्पष्ट की है–

(१) सबको समान अवसर ।

(२) उत्पादन के पीछे की प्रेरणा यह व्यक्तिगत या वैयक्तिक मुनाफे की अपेक्षा समाज के सुख की, समाज के हित की होनी चाहिए ।

(३) उत्पादन के साथ वितरण का मुद्दा भी महत्त्व का है । विभाजन होते समय लोगों की जरूरते और उनके विकास की संभावना ध्यान में लेनी चाहिए ।

ये कसौटियाँ होनेवाला सच्चा समाजवाद भारत में प्रत्यक्ष ला नहीं सकते इसका एहसास उन्हें था । उसके लिए सार्वजनिक क्षेत्रों पर बल देना आवश्यक है ऐसा मत उन्होंने व्यक्त किया था । सार्वजनिक क्षेत्र का विस्तार अथवा सार्वजनिक उद्योग यही समाजवाद की ओर जाने का एक मार्ग है । सार्वजनिक क्षेत्र में उद्योगधंदे समाजवाद की दृष्टि से रखा हुआ एक कदम है, जिस पर जनतंत्र समाजवादी रचना की जा सकेगी ।

जनतंत्र, नियोजन, समाजवाद ये जनकल्याण के एक ही समस्या के तीन अलग-अलग अंग है ।

सबको समान मौका मिलना चाहिए । उत्पादन में कम फर्क करनेवाला आर्थिक विषमता से होनेवाला शोषण ठहरानेवाला, प्रत्येक व्यक्ति का व्यक्तिमत्त्व विकसित करने का समान अवसर प्राप्त कर देनेवाला समाजवाद यशवंतरावजी को अभिप्रेत था ।

□ साहित्यविषयक भूमिका

यशवंतरावजी ने विविध प्रकारों का मन से अभ्यास किया है । इसके साथ ही उन्होंने जीवनविषयक प्रणाली का भी अभ्यास किया है । कार्ल मार्क्स, फ्राईड, म. गांधी, एम. एन. रॉय आदि प्रवृत्तियों का सूक्ष्म अभ्यास करने से यशवंतरावजी की साहित्यविषयक भूमिका सजग बन गयी थी । आनेवाले नये काल के अनुसार उन्होंने मानवता का पुरस्कार किया । मानवता को कलंक लगने वाली घटनाओं का और वृत्ति-प्रवृत्तियों का साहित्य में से धिक्कार होना चाहिए ऐसे स्वरूप की उन्होंने भूमिका ली थी ।

देश-काल-स्थिति का विचार करते हुए मानवता यही युग का मंत्र होगा ऐसा उन्हें लग रहा था । उन्होंने अपने साहित्य में मानवीय विकास पर अधिक बल दिया है । जीवन में अंतिम सत्य को अर्थात मानवता के मूल्य को जीवन के विकास को अधिक महत्त्व दिया है ।

यशवंतरावजी साहित्य का अर्थ संकुचित वृत्ति से लेते नहीं । साहित्य के संबंध में उनकी दृष्टि विशाल है । जो साहित्य सर्वसामान्य जनता का हित करता है वह साहित्य । इस प्रकार वे साहित्य की सादी पर अर्थवाही व्याख्या करते हैं । केवल शब्दलालित्य अर्थात साहित्य यह साहित्य की व्याख्या लेकर उसके अनुसार चलने का काल समाप्त हुआ है, ऐसी सलाह साहित्यिकों को दी है । काल और देश की परिस्थिति की मर्यादा में न रहते हुए साहित्य में सारा जीवन व्याप्त रहना चाहिए । साहित्य ने जीवन के अलग अलग क्षेत्रों से अधिक निकट के संबंध प्रस्थापित किये बिना जनजीवन समझ में नहीं आयेगा । जनजीवन में से साहित्य निर्माण होता है । तब ही उस साहित्य में से समाजमन का प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष प्रतिबिंब साहित्य में पडता है । ऐसे साहित्य का परिणाम फिर से समाजमन पर पडता है ऐसा विचार यशवंतरावजी करते हैं । इतनाही नहीं तो समाजजीवन में घटनेवाले अनेक प्रकार की घटनाओं के संबंध में उत्सुकता और आकर्षण साहित्यिकों को होना चाहिए । समाज-वास्तव का और आसपास के समाज का निरीक्षण करना यह साहित्य की जरूरत है । इसके लिए जीवन से संबंधित ऐसे विविध विषयों का अभ्यास और ज्ञान होना चाहिए । इस प्रकार के अध्ययन से ऐसा मजबूत और जिस में जीवन की शक्ति अधिक हो– उत्तम साहित्य निर्माण होता है । साहित्य में मानव का जीना, उसका अस्तित्व टीके रहना, उसकी सुरक्षितता और सुखसमृद्धि ये सभी बातें साहित्य में अभिव्यक्त होनी चाहिए ऐसी उनकी अपेक्षा थी ।

यशवंतरावजी की साहित्य की ओर देखने की दृष्टि व्यापक थी। साहित्यिक विचारवंतों ने प्रकट किया हुआ साहित्य किसी भी रंग का या किसी भी प्रकार का हो तो चलेगा पर आसपास की परिस्थिति का सूक्ष्म अभ्यास करके समाज में सभी स्तर में निर्माण हुई अस्वस्थता का एहसास होनेवाला समाजचिंतन उस में होना चाहिए। ऐसा साहित्य निर्माण होना चाहिए ऐसा उन्हें लग रहा था। ऐसा साहित्य समाज में परिवर्तन ला सकेगा और समाज को मार्गदर्शन करेगा, समाज की शक्ति बढायेगा, समाजमन व्यापक करेगा और नयी शक्ति और नया सामर्थ्य निर्माण करेगा ऐसा विश्वास उन्हें था। जिस साहित्य में अन्यायविरुद्ध की चीढ, देश की आर्थिक, सामाजिक विषमता का, दारिद्र्य के प्रश्नों का विवरण है, सामान्य मनुष्य का प्रेम है और जिस साहित्य में सामाजिक समता लानेवाले, समाज में सभी घटकों को अवसर देनेवाले लेख हैं वही साहित्य सच्चा साहित्य हो सकता है ऐसे यशवंतरावजी को लगता है।

मराठी साहित्य यह राष्ट्रीय जीवन से अलिप्त नहीं रह सकता यह बात यशवंतरावजी को स्वीकार थी। राष्ट्रीय आंदोलन और सामाजिक आंदोलन इनके प्रतिबिंब मराठी वाङ्मय में अवश्य आने चाहिए इस विषय में मतभेद नहीं थे। साहित्यिकों का तत्त्वज्ञान और विचार उनकी सामाजिक परिस्थिति पर तय होता है। 'मनुष्य' का सच्चे अर्थों में भौतिक, सामाजिक परिस्थिति में विकास होता है। 'मनुष्य' ही साहित्य का केंद्रबिंदू है और इस विषय की अनुभूति में साहित्य निर्माण होना चाहिए ऐसा वे कहते हैं।

लेखक सामाजिक जिम्मेदारी रखकर लेखन करें। सपने में उडान भरनेवाले वास्तविक प्रश्नों की ओर आँखों पर पट्टी बाँधकर रह जाते हैं और सपना देखनेवाले समाज निर्माण करते हैं। एक प्रकार की सामाजिक गुमराही करते हैं। यह यशवंतरावजी को नहीं चाहिए था। सामान्य में सामान्य मनुष्य के प्रश्न, उनका दु:ख, वेदना साहित्यिक अपने शब्दों में अभिव्यक्त करें। संभव हुआ तो वह दु:ख दूर होगा यह देखें। साहित्यिक अभी तक भारत के कोने में का जीवन, विशेषत: जिनकी ओर साहित्यिक पहुँचा नहीं ऐसे आदिवासी, दलित, स्त्रीजीवन का वास्तव चित्रण करके अपने अमर साहित्य के द्वारा भारत में समाजजीवन और संस्कृति का दर्शन कराये। साहित्य धारदार शस्त्र है। वह शस्त्र की अपेक्षा अधिक परिणाम करता है। इसलिए तो यशवंतरावजी ऐसे साहित्य की निर्मिति की अपेक्षा करते हैं।

यशवंतरावजी को लगता है कि जनजीवन समृद्ध करने के लिए लेखक

अपनी कलम का उपयोग करें । इसके सिवा शास्त्रीय जानकारी और वैज्ञानिक संशोधन मराठी भाषा में हो ऐसा आग्रही विचार प्रकट किया है । 'ज्ञान और विज्ञान के क्षेत्र में मूलभूत संशोधन हाथ में लेने का प्रयत्न जिस भाषा में होता है वही भाषा ज्ञान की भाषा हो सकती है ।' यशवंतरावजी का यह विचार आज हमें स्वीकार करना पडेगा । ऐसे हुआ तो वह भाषा ज्ञानभाषा होगी । 'अमृतातेही पैजा जिंके' ज्ञानेश्वर का यह भविष्यकथन सच करना होगा तो शास्त्रीय जानकारी मराठी में उपलब्ध होनी चाहिए । तब ही अन्य भाषा में ज्ञानभंडार खींचकर लाने की शक्ति मराठी भाषा में निर्माण होगी ऐसा विचार उन्होंने व्यक्त किया था ।

साहित्य संस्कृति 'पॉवर हाऊस' बने । पॉवर हाऊस सर्जनशील है । वहाँ दूसरों का उचक्कापन नहीं होता । यह मंडल महाराष्ट्र का जीवन व्यापक, विस्तृत और क्रियाशील माध्यम बने ऐसी इच्छा यशवंतरावजी व्यक्त करते हैं । सारांश, यशवंतरावजी साहित्य की भाषा, संस्कृति, साहित्य, साहित्यिकों की ओर उदार दृष्टि से देखते हैं ।

यशवंतराव प्रतिभाशाली लेखक थे । 'शिवनेरीच्या नौबती', 'सह्याद्रीचे वारे', 'युगान्तर', 'ऋणानुबंध', 'भूमिका', 'कृष्णाकाठ' यह उनकी प्रकाशित ग्रंथसंपदा है । उन्होंने अलग अलग लेखकों के पुस्तकों को प्रस्तावनाएँ लिखी है । उत्कट अनुभूति का आविष्कार उनके साहित्य में दिखाई देता है ।

साहित्य समाजजीवन का दर्पण है । यह साहित्य उस काल के सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक प्रवृत्ति का प्रतिबिंब होता है ।

साहित्य थर्मामीटर में पारे के समान संवेदनशील होना चाहिए । उनके मत से साहित्य की अंतिम प्रेरणा मानवी मूल्यों का एहसास कर देनेवाली चाहिए । यह तो उत्तम लेखक की कसौटी है । सच्चा साहित्यिक समाज से दूर नहीं रह सकता ।

यशवंतरावजी के पास सब साहित्यिक गुण थे । इन गुणों के आधार पर वे साहित्य के क्षेत्र में प्रचंड कार्य कर सकते थे । परंतु उनका संपूर्ण जीवन राजनिती में बीत गया । इसलिए उनके अंदर छिपे हुए लेखक को न्याय नही मिला ।

प्रा. ना.सी. फडके लिखते हैं कि– 'भावना में लबालब भरी हुई, प्रभावी भाषा से सजी हुई लेखन करनेवाली लेखनी सीदी-साधी नहीं है । श्रेष्ठ दर्जे के सच्चे साहित्यिक की है ।' यशवंतरावजी की लेखनी का आस्वाद लेते समय

ऐसा लगता है । यशवंतरावजी के रूप से महाराष्ट्र और भारत को एक प्रथम दर्जे का नेता मिला, पर उन पर पडे हुए नेतृत्व के बोझ से उन में जो श्रेष्ठ साहित्यिक था वह नेतृत्व के बोझ के नीच दब गया था । इसलिए उनका कर्तृत्व प्रकट नहीं हो सका । इसका बड़ा खेद होता है ।

साहित्य के संबंध में यशवंतरावजी का दृष्टिकोन संपूर्णत: जीवनवादी था । वे खांडेकर के 'जीवन के लिए कला' इस भूमिका के समर्थक थे । साहित्य जनजीवन में से निर्माण होता है और जनजीवन का प्रतिबिंब प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष साहित्य पर और साहित्य का परिणाम जनजीवन पर पडता है । जीवन के विविध अंगों को स्पर्श करनेवाला साहित्य होना चाहिए इस दृष्टिकोन का उन्होंने समर्थन किया ।

यशवंतरावजी ग्रथप्रेमी, व्यासंगी वाचक थे । उनका खुद का समृद्ध ग्रंथालय था । भेट के रूप में आयी हुई पुस्तकें पढ़ते थे । पढ़ी पुई पुस्तकों का अभिप्राय लेखक के पास भेज देते थे । वाचक यह अपनी साहित्य क्षेत्र में प्राथमिक भूमिका यशवंतरावजी ने बडी निष्ठा से पार कर दी थी ।

यशवंतरावजी ने जीवनभर वाचन किया । बचपन से ही उनको पठन की रुची थी । इसलिए पढे हुए ग्रंथों की आस्वादक समीक्षा करने का सामर्थ्य यशवंतरावजी को प्राप्त हुआ था । प्रत्येक साहित्यप्रेमी आज के जनतंत्र युग में एक नम्र समीक्षक होता है । उन्होंने साहित्य के संबंध में किया हुआ यह विधान उनकी विलक्षण बुद्धि का प्रत्यय देता है ।

श्री. बाल कोल्हटकरने यशवंतरावजी को 'रसिकों का राजा' कहा हैं ।

ज्ञानदेव के समाधीस्थल के बाहर पीपल नामका पेड़ है, जिसे 'सोने का पीपल' कहते है । इस पीपल के नीचे 'ज्ञानेश्वरी' को आकार आया और मराठी साहित्य- सरिता बहने लगी । यशवंतरावजी के दरवाजे में रसिकता का पीपल है । इस पीपल के नीचे साहित्य का दरबार भरा है । यशवंतरावजी इस दरबार के नीचे हिरा बन गए है । नेता रसिक होना चाहिए । यशवंतरावजी प्रज्ञावंत राजनीतिज्ञ थे । वे उदार हृदयी रसिक थे ।

□ जीवनविषयक दृष्टिकोन

यशवंतरावजी का जीवनविषयक दृष्टिकोन आशावादी और समर्पित वृत्ति का था । वे कहते हैं कि 'चरम सीमा तक समर्पित जीवन होगा तो वह जीर्ण नहीं होता, चंद्र कभी पुराना नही होता, सूर्य कभी बूढा नहीं होता । सागर कभी

संकुचित नहीं होता । इस में हर एक के जीवन में चरम सीमा का समर्पण है । पर अनंत युग बीत गये तो भी विनाश उनके पास पहुँचा नहीं । काल ने उन्हें घेरा है, पर उनका परिवर्तन कभी नहीं हुआ । स्थित्यंतर नहीं हुआ । वह नि:श्वसन सतत चल रहा है ।' वे अखंड अपने जीवन में आनंद के क्षण खोजते रहते हैं । उन क्षणों के बारे में वे कहते हैं– 'जीवन में आनंद के क्षण सूर्य के कोमल किरणों के समान होते हैं । जंगल से गुजरते हुएँ गरमी के समय एकाध झरना दिख पडा कि उसका पानी पिते समय कितना आनंद महसूस होता है । नाले के किनारे जामून का पेड है । वह पेड जामुनों से ठसाठस भरा हुआ है । उस पेड के चार जामून मूँह मे डाल दिये तो कितने मीठे लगते हैं । जीवन में आनंद के क्षण ऐसे ही होते हैं ।'

८ | महाराष्ट्र और भारतीय राजनीति में यशवंतरावजी का स्थान

महात्मा गांधीजीने १९४२ में शुरू किये हुए 'चले जाओ' के आंदोलन में यशवंतरावजी शामिल नहीं हुए थे। पर भूमिगत रहकर सातारा जिले की जिम्मेदारी सफलता से पूरी की। उन्होंने कराड, वडूज, पारवा, वालवे, तासगाव में स्थित दफ्तर पर मोर्चे निकालकर वे यशस्वी किये। उसके लिए उन्हें जेल में जाना पडा। ऐसी हालत में किसी प्रकार की शिकायत न करते हुए वेणूबाईजी ने गृहस्थी चलायी।

१९४५ में जेल में से छुटकारा होने पर नये उत्साह से स्वातंत्र्य काम में लग गये। इसी समय १९४६ में ब्रिटिश सरकारने बम्बई प्रांत के चुनाव लिये। इस चुनाव में यशवंतरावजी विजयी हुए। उसके बाद वे बालासाहब खेरजी के मंत्रिमंडल में गृह विभाग के संसदीय सचिव बने। जब तक वे इस पद पर थे तब तक सुरक्षा व्यवस्था के लिए होमगार्ड संस्था की स्थापना की। इतना ही नही, तो उन्होंने महाराष्ट्र में लोककलावंतों की कला को और कलावंतों को आधार देने के लिए तमाशा बोर्ड की स्थापना की। यहाँ से ही उनके राजनैतिक कार्य का आरंभ हुआ। फिर उन्होंने पीछे मुड़कर कभी नहीं देखा।

यशवंतरावजी पर महाराष्ट्र के समूचा मराठी मनुष्य प्राण से भी अधिक प्रेम करता है, वह उन्हें आदर्श मानता है। वह उनके लिए सर्वस्व अर्पण करने के लिए तत्पर रहता है। क्योंकि वे उन्हें अपने परिवार के एक प्रमुख व्यक्ति मानते थे। इसलिए उनका नाम न लेते हुए आदर से सारा महाराष्ट्र उन्हें 'साहब' नाम से पहचानता है। उन्होंने जो कार्य किया था, मन का जो बडप्पन दिखाया था, उसके लिए जनता उन्हें साहब नाम से पुकारती थी। साहब ये जाति-धर्म के पार थे। गुणी मनुष्यों की उन्हें लालच थी। साहित्यिक और

सांस्कृतिक उपक्रमों को उनका सतत मार्गदर्शन और प्रोत्साहन मिलता था। गरजू को सहकार्य और वंचितों को मानसिक और आर्थिक बल देने का वे सतत प्रयत्न करते थे। निराधार लोगों को आधार देने का वे प्रयत्न करते थे। गांधीहत्या के समय आगकांड में जिनका सर्वस्व गया था उनके आँसू पोंछकर पुन: उनका आयुष्य खड़ा करने का प्रयत्न किया।

□ दादासाहबजी गायकवाड

डॉ. बाबासाहबजी आंबेडकर के बाद महाराष्ट्र में कर्मवीर दादासाहबजी गायकवाड जैसा शक्तिमान जननेता दूसरा नहीं था। आंबेडकरी विचार कृति में लाते समय उन्होंने किसी की भी परवाह नहीं की। महाराष्ट्र में दलित शोषितों पर होनेवाले अन्याय-अत्याचार नष्ट करने के लिए मुख्यमंत्री चव्हाणजी कुछ उपाय योजना करें यही उनकी इच्छा थी। दादासाहबजी गायकवाड ने देहातों में होनेवाले अन्याय, अत्याचार, अनुपजाऊ खेतो का प्रश्न, भूमिहिन, खेतमजदुरों के प्रश्न हल करने के लिए साहब के साथ गहरी चर्चा की। तब साहबने कहा– 'मैं इस राज्य का प्रमुख और बहुजन समाज का प्रतिनिधि हूँ और फुले, शाहू और डॉ. आंबेडकर के विचारपरंपरा का आदर करता हूँ।' ये सब करने के लिए प्रयत्न करना मेरा कर्तव्य है। पर आप काँग्रेस के साथ सतत संघर्ष की नीति रखने की बजाय सहयोग की भूमिका ली तो मुझे और काँग्रेस को महाराष्ट्र में दलितों के लिए बहुत कुछ करने का अवसर मिलेगा। आपसे कहना चाहता हूँ कि महाराष्ट्र काँग्रेस पुरोगामी विचारधारा की है। कम से कम हम दोनों को महाराष्ट्र में मित्रतापूर्ण सहकार्य का प्रयोग करने के लिए क्या हर्ज है? दादासाहबजी गायकवाड आर.पी.आय. के प्रमुख नेता थे। विरोधी पक्ष नेता के रूप में वे सर्वपरिचित थे।

इस पर दादासाहबजी गायकवाडने गंभीर विचार और चिंतन करके काँग्रेस के साथ सहयोग करने की नीति अपनायी। तब से महाराष्ट्र में काँग्रेस और आर.पी.आय. की युती हो गयी है। इससे स्पष्ट है कि विपक्ष के मनुष्य भी अपने साथ ले जाने की किमया और दूरदृष्टि यशवंतरावजी के पास थी।

१९५२ में घटना का अंमल शुरू हुआ और देश में पहला सार्वत्रिक चुनाव हुआ। इस चुनाव में काँग्रेस पक्ष को बडा यश मिला। भारतीय राज्य घटना के द्वारा भाषावार प्रांतरचना अभिवचन काँग्रेसने देश को दिया था। उसके अनुसार मराठी भाषिकों का राज्य होना चाहिए, वह तो प्रत्यक्ष था ही।

महाराष्ट्र का कुछ भाग उदा. वऱ्हाड प्रांत (आज का विदर्भ), मध्यप्रदेश, डांग, उमरगाव और बम्बई गुजराथ में; बेलगाव, निपाणी, कारवार, कर्नाटक में; मराठवाडा के कुछ जिले हैदराबाद में ऐसी महाराष्ट्र की विचित्र अवस्था थी। तीन करोड मराठी भाषिकों में से नब्बे लाख लोग इन तीन विभाग में रहते हैं। इसलिए मराठी भाषिक राज्य की माँग मराठी साहित्यिकों ने की। प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलालजी नेहरू संयुक्त महाराष्ट्र की भूमिका के लिए अनुकूल नहीं थे और बम्बई प्रांत के मुख्यमंत्री मोरारजी देसाईजी दर्पोक्ति कर रहे थे कि– 'जब तक चंद्र, सूर्य, तारे हैं तब तक बम्बई महाराष्ट्र को नहीं मिलेगी।' तथा 'गुजराथी पूँजीपतियों के विरुद्ध यह मराठी भाषिक जनता की लडाई है।' ऐसी माँग कॉम्प्रेड डांगे और कम्युनिस्ट नेता कर रहे थे। यशवंतराव चव्हाण महाराष्ट्र के समर्थक थे। पर यशवंतरावजी इस माँग के लिए आक्रमक नीति के विरुद्ध थे। पंडित नेहरूजी का मन राजी करके महाराष्ट्र निर्माण किया जा सकेगा ऐसा यशवंतरावजी का मत था। परंतु मराठी जनमत चव्हाण की इस नरम नीति के पक्ष में नहीं था। इस संघर्ष में बम्बई में १०५ हुतात्माओं का बलिदान हुआ। इसी काल में प्रतापगड पर शिवाजी महाराज की प्रतिमा का अनावरण करने के लिए देश के प्रधानमंत्री आये थे। उस समय मराठी जनताने उग्र निदर्शन करके अपनी भावनाएँ व्यक्त की थी। प्रधानमंत्री के साथ राज्य के प्रमुख यशवंतरावजी दोनों भी एक ही गाडी में थे। यशवंतरावजीने नेहरू का मन राजी कर दिया और १ मई १९६० को यशवंतरावजी महाराष्ट्र का मंगल कलश ले आये। वे बम्बईसह संयुक्त महाराष्ट्र के पहले मुख्यमंत्री हो गये।

मुख्यमंत्री यशवंतरावजी ने आधुनिक महाराष्ट्र के सपने के बारे में कहा है– 'यह नया महाराष्ट्र राज्य मराठी जनता के कल्याण का काम तो करेगा ही। परंतु मराठी भाषिकों के पास जो देनेलायक है, उनके जीवन में जो अच्छा है, जो उदात्त है, उसका भारत के लिए त्याग करने का समय आयेगा तो हम वह त्याग प्रथम करेंगे... हमारा पहलेसे ही विश्वास है कि भारत रहेगा तो महाराष्ट्र रहेगा। भारत बड़ा हुआ तो महाराष्ट्र बडा होगा। महाराष्ट्र का और भारत का हित जब एकरूप होता है तब भारत भी बड़ा होता है और महाराष्ट्र भी बडा होता है। यह इतिहास महाराष्ट्र के खून खून में समा गया है।'

महाराष्ट्र के सहकारी आंदोलन को यशवंतरावजी ने शक्ति दी। शक्कर कारखानदारी और उसके पूरक उद्योग को प्रेरणा दी। सहकार में से और

किसानों में से नये नेतृत्व आगे आया । महाराष्ट्र की कार्यकर्ताओं को मधुमक्खियों का छत्ता कहते हैं । गन्ने की मीठी शक्कर से यह मधुमक्खियों का छत्ता जमाया। ये नेता और कार्यकर्ता विविध सार्वजनिक संस्था, ग्रामपंचायत, जिला परिषद, पंचायत समितियों में नेतृत्व करते हुए दिख पडते हैं । राजनीति का विकेंद्रीकरण और सहकार में संघटन यह चव्हाणप्रणीत राजनीति की विशेषता है ।

□ कराड में साहित्य संमेलन

आपत्कालीन पार्श्वभूमि पर यशवंतरावजी के मतदार संघ - कराड में १९७६ मे अखिल भारतीय मराठी साहित्य संमेलन सम्पन्न हुआ था । मराठी साहित्य संमेलन की अध्यक्ष बड़ी विदुषी दुर्गा भागवत थीं । यशवंतरावजी संमेलन के स्वागताध्यक्ष थे । तब उन्होंने कहा था – 'राजनीति के जूते बाहर रखकर मैं सरस्वती के मंदिर में आया हूँ ।' सुप्रसिद्ध दलित साहित्यिक 'उपर'कार लक्ष्मण माने के 'बंद दरवाजा' पुस्तक का प्रकाशन करते समय आये हुए 'भटक्या' लोगों के समूह के सामने कहा कि– 'मैंने ग्यारह वर्ष बंजारा समाज का मुख्यमंत्री महाराष्ट्र को दिया, परंतु तुम्हारी ओर देखकर मुझे समझा कि वह तुम में से नहीं था । वह तुम्हारे मालदार वर्गमेंसे था ।'

महाराष्ट्र राज्य निर्मिति के बाद यशवंतरावजी ने वाई में 'मराठी विश्वकोश मंडल' की स्थापना की । तर्कतीर्थ लक्ष्मणशास्त्री जोशीजी को विश्वकोश के संपादन का काम दिया । उन्होंने 'महाराष्ट्र राज्य साहित्य संस्कृती मंडल' की स्थापना करके मराठी भाषा और संस्कृति के विकास को प्रेरणा दी । मराठी साहित्य में अनेक अभिजन चव्हाणजी के मित्र थे । ग. दि. माडगूलकरजी को आधुनिक वाल्मिकी कहा जाता है । माडगूलकरजी ने चव्हाणजी के संबंध में लिखा है – 'मराठेशाहीचे तुम्ही पेशवे, सत्तेचे स्वामी । तुमच्या मागे राहील जनता नित्य पुरोगामी । ।' चव्हाणजीने कविवर्य ना.धों.महानोरजी को विधान परिषद पर सदस्य के रूप में नियुक्त किया ।

आगे इंदिरा गांधीजी की भूमिका से १९७७ के चुनाव में काँग्रेस की पराजय हुई । जनता पक्ष सत्ता पर आया । मोरारजी देसाई की सरकार बहुत काल तक रही नहीं । चरणसिंहजी के नेतृत्व में नया मंत्रिमंडल बनाया गया । इस मंत्रिमंडल में यशवंतरावजी ने उपप्रधानमंत्री पद स्वीकार लिया । उनके इस निर्णय पर बडी आलोचना हुई । बहुत लोगों को यह निर्णय पसंद नहीं आया ।

तब यशवंतरावजी को लगा कि– 'अपनी कुछ तो गलती हुई है ।' इसलिए वे बहुत अस्वस्थ रहते थे । उपप्रधानमंत्री पद स्वीकार करने का धक्का उन्हें आगे बहुत दिन तक खटकता रहा ।

□ यशवंतरावजी का अपमान

१९७८ में श्रीमती इंदिरा गांधीजीने फिर से एक बार काँग्रेस पक्ष फोड दिया और अपने नाम पर उसने 'इंदिरा काँग्रेस पक्ष' स्थापन किया । उसी काल में श्रीमती गांधीजी, तिरपुडेजी, साठेजी इन तीनोंने जो भाषण किये थे वे सब यशवंतरावजी का अपमान करनेवाले थे । चव्हाण को तहस-नहस करने के इरादे रचने जाने लगे । इस का परिणाम महाराष्ट्र की राजनीति पर हुआ । ऐसी स्थिति में महाराष्ट्र में काँग्रेस और इंदिरा काँग्रेस ऐसे संयुक्त सरकार की स्थापना हुई । वसंतदादाजी मुख्यमंत्री और तिरपुडेजी उपमुख्यमंत्री हुए ।

परंतु 'तिरपुडेजी' तो मुख्यमंत्री जैसा बर्ताव करने लगे । वसंतदादाजी को माननेवाले तरुण आमदार, मंत्री बिगड गये । शरद पवारजी के आसपास बडी संख्या में आमदार इकठ्ठा होने लगे । शरद पवारजी के 'रामटेक' बंगले पर महाराष्ट्र की राजनीति को दिशा देनेवाली राजनीति क्रियाशील हो उठी । पवारजी ने दाँव पेंच करके पुलोद सरकार स्थापन की ।

महाराष्ट्र के हित के लिए यशवंतरावजी इंदिरा काँग्रेस में शामिल हुए । परंतु उनके साथ उनके कार्यकर्ताओं का मन से स्वागत नही हुआ । उन्हें अच्छा बर्ताव नहीं मिला । इसके विपरित उनका उपहास होता रहा । उनके पक्षप्रवेश के प्रसंग में बहुत बाधाएँ पैदा की गयी । उनका जो अपमान किया गया, जो मनस्ताप दिया गया, वह तो बहुत अशोभनीय था । १९८१ से १९८४ तक लगभग चार वर्ष यशवंतरावजी को और उनके कार्यकर्ताओं को परेशान कर दिया । उन्हें सम्मान का स्थान, सम्मान का पद तो नहीं दिया गया, पर उनका अपमान कैसे होगा इसका जानबूझकर दिल्ली में से प्रयत्न किया गया । इस बर्ताव से यशवंतरावजी के स्वास्थ्य पर परिणाम हुआ । उनकी पत्नी सौ. वेणूताईजी तो बहुत निराश हो गयी । फायनान्स कमिशन का अध्यक्षपद तो यशवंतरावजी के नेतृत्व को अवसर देनेवाला पद नहीं था ।

दिल्ली में शुरू हुआ यह खेल देखकर यशवंतरावजी जैसा प्रज्ञावंत राजनीतिज्ञ मनुष्य चूप था । दूसरों को धैर्य देनेवाला यह मनुष्य निराश हुआ वह भी वेणूताईजी जाने के बाद । फिर भी यह उन्होंने कभी औरोंके समझमे

नहीं आने दिया । वे स्थितप्रज्ञ के समान बर्ताव करते थे । उनकी मानसिक अवस्था खराब हो रही थी । यह बात उनके मित्र जानते थे । पर यशवंतरावजी के सामने किसी ने बोलने की हिम्मत नहीं की ।

□ सिंडिकेट और इंडिकेट काँग्रेस

काँग्रेस के बंगळूरू अधिवेशन में (१९६९) इंदिराजी के मोरारजी देसाई, स.का. पाटीलजी, अतुल्य घोषजी, निजलिंगप्पाजी से मतभेद हो गये । इसलिए काँग्रेस का 'इंडिकेट काँग्रेस' और 'सिंडिकेट काँग्रेस' में विभाजन हो गया । इंदिरा गांधीजी ने काँग्रेस के अधिकृत उम्मीदवार श्री. संजीव रेड्डीजी को पराभूत किया । राष्ट्रपति के चुनाव में यशवंतरावजी चव्हाण और महाराष्ट्र काँग्रेस ने संजीव रेड्डीजी को समर्थन दिये जाने के कारण यशवंतरावजी चव्हाण और इंदिरा गांधीजी इन दोनों के संबंध बिगड गये । इस परिस्थिति में सिंडिकेट काँग्रेस ने इंदिरा गांधीजी के स्थान पर यशवंतराव चव्हाण को प्रधानमंत्री पद पर बिठाने की ऑफर दी । परंतु उन्होंने इस बात का इन्कार कर दिया और यशवंतरावजी ने कहा कि–प्रधानमंत्री पद आपस मे लड़कर प्राप्त किया तो यह देश अच्छी तरह चलाना असंभव होगा । उत्तर विरुद्ध दक्षिण, ब्राह्मण विरुद्ध मराठा, क्षत्रिय, जाट, रजपूत ऐसे गुट बनाकर भारत देश का कारोबार चलाना हितकारक नहीं होगा । विपक्ष को काँग्रेस में और एक फूट चाहिए थी । मैं मेरे हाथ से वह फूट पडने नहीं दूँगा । थोडे समय तक रहनेवाले प्रधानमंत्री पद की अपेक्षा नहीं है और मुझे उसका आकर्षण भी नहीं है ।' इससे स्पष्ट होता है कि यशवंतरावजी कभी भी अवसरवादी राजनीतिज्ञ नहीं थे । उन्होंने हमेशा राष्ट्रहित महत्त्वपूर्ण माना ।

१९७१ में मध्यावधि चुनाव हुए । इस चुनाव में इंदिरा गांधीजी ने प्रचंड बहुमत संपादन किया । इस चुनाव में महाराष्ट्र में टिकट का बँटवारा करते समय यशवंतरावजी को कमजोर करने के लिए 'मराठा' उम्मीदवार विशेषत: पाटील और देशमुख को हटाने के प्रयत्न हुए । इस परिस्थिति में भी यशवंतराव चव्हाण की सहनशीलता, स्थितप्रज्ञ प्रवृत्ति और सच्चाई इन गुणों का प्रत्यंतर आया । वस्तुत: विरोध और संघर्ष यह यशवंतरावजी का पिंड नहीं था । उनके स्वभाव में समझौते का भाग अधिक था । उनके मतके अनुसार दिल्ली से संघर्ष करके महाराष्ट्र की प्रगति साध्य नहीं कर सकेंगे । मुख्य प्रवाह से महाराष्ट्र अलग नहीं हो सकेगा ऐसा उन्हें लगता था ।

□ इंदिरा और यशवंतरावजी अलग

१ जनवरी १९७८ को इंदिरा गांधीजी ने 'इंदिरा काँग्रेस' की स्थापना की। तब से इंदिराजी और यशवंतरावजी अलग हुए। परस्परविरोधी दल में काम करने लगे। इंदिरा गांधीजी ने इंदिरा काँग्रेस के नाम से चुनाव जीते। यशवंतरावजी को लगा कि काँग्रेस के मुख्य प्रवाहसे हम अलग हो रहे हैं। काँग्रेस एस को जनता ने व्यापक समर्थन नहीं दिया था। इसलिए यशवंतरावजी नाराज थे। उनके मन में विचार आया कि हम मुख्य प्रवाह से दूर रहकर काँग्रेस की और जनता की अच्छी सेवा नहीं कर सकेंगे। इंदिरा काँग्रेस में शामिल होना चाहिए और मुख्य प्रवाह के साथ रहकर संघटनात्मक कार्य करना चाहिए। यशवंतराव चव्हाण ये काँग्रेस पक्ष के एक निष्ठावान कार्यकर्ता थे। उन्होंने जनहित सामने रखकर राजनैतिक प्रवास किया।

□ इंदिरा काँग्रेस में प्रवेश

उदात्त हेतु रखकर यशवंतरावजी ने इंदिरा काँग्रेस में प्रवेश किया। परंतु उनके जीवन के अन्त तक उनकी उपेक्षा होती रही। वे बहुत निराश हो गये थें।

सारांश रूप से यशवंतराव चव्हाण के राजनीति काल का सिंहावलोकन करते समय ऐसा कहना पडता है कि- 'यशवंतरावजी ने अपने संपूर्ण आयुष्य में सत्ता के लिए तत्त्वों से, जनहित से कभी समझौता नहीं किया। उन्होंने अपनी निष्ठा से कभी बेईमानी नहीं की। घरानेशाही की प्रथमावस्था में बढनेवाला भारतीय जनतंत्र यशवंतरावजी को न्याय नहीं दे सका। आगे भी दे नहीं सकेगा। क्या राजनैतिक दृष्टि से यशवंतरावजी ने गलती की है? इसका उत्तर है, हाँ! उन्होंने बहुत गलती की, पर उन्होंने गरिबों को उद्ध्वस्त करनेवाली गलतियाँ कभी नहीं की।'

वर्तमान काल में भारत में राजनीति एक प्रकारका धंदा हुआ है। ससंद में सरकार को जबाब पूछने के लिए और लोगों के प्रश्न, समस्या पेश करने के लिए पैसे लेने वाले जनप्रतिनिधि (धंदेवाले राजनीतिज्ञ) जनतंत्र के पवित्र मंदिर में स्वच्छंदता से घूमते फिरते हैं। इस प्रदूषित राजनैतिक वातावरण में यशवंतराव चव्हाण के एकनिष्ठ, ध्येयनिष्ठ, तत्त्वनिष्ठ, जनसामान्य के कल्याण की इच्छा करनेवाले, सबके उत्थान की अपेक्षा करनेवाले, मार्गदर्शक प्राणवायुरूपी विचार ही आज भारत की और महाराष्ट्र की राजनीति को प्रदूषणमुक्त, स्वच्छ

और निर्दोष बना सकेंगे ।

यशवंतराव चव्हाण का राष्ट्रीय राजनीतिक प्रवास देखनेपर निश्चित ऐसा लगता है कि प्रारंभिक काल बहुत सुनहरा और पूर्वार्ध में जो पूँजी राजनीतिक दाँवपेंच करके चव्हाणने एकत्र की थी उसके बलपर उनकी सफल और प्रभावी केंद्रीय मंत्री के रूप में गणना की गयी और आगे भी होती रही ।

□ यशवंतरावजी की गलती

चरणसिंगजी के मंत्रिमंडल में वे उपपंतप्रधानमंत्री हुए यह तो महाराष्ट्र के लिए संतोष की बात थी । पर वे स्वयं कहते हैं– 'चरणसिंगजी के मंत्रिमंडल में मैं गया, यह तो मैने मेरे जीवन में बडी गलती की, क्योंकि उन्हें उपप्रधानमंत्री बनाकर इंदिराजी को उनका राजनीतिक खेल समाप्त करना था ।' चरणसिंगजी को प्रधानमंत्री बनाकर चव्हाणजी जैसे शासकीय और प्रशासकीय अनुभव होनेवाले प्रभावी नेता को पंतप्रधानमंत्री पदसे दूर रखना था ।

राजनीति में सत्ता के लिए युती और तत्त्वों की अंत्येष्टि यह समीकरण सर्वत्र चलता है । यशवंतरावजी ने जनतंत्र के मूल्यों का, सामाजिक न्याय का और मानवतावाद का मूल्यांकन कभी नहीं किया । नेहरूजी के निधन के बाद उनके उत्तराधिकारी का प्रश्न आगे आया । पर्याय के रूप में यशवंतरावजी के नाम की चर्चा हुई । मोरारजी और शास्त्रीजी इन दोनों में से एक पीछे हट जाता तो पर्यायी उम्मीदवार के रूप मे यशवंतरावजी का नाम आगे आ जाता । उसके बाद लालबहादूर शास्त्रीजी प्रधानमंत्री हो गये । यशवंतरावजी रक्षा मंत्री हो गये । १९६५ के पाक आक्रमण के समय भारत के देदीप्यमान विजय से देश का सन्मान बढ़ गया । शास्त्रीजी के आकस्मिक निधन से फिर प्रधानमंत्री पद के उत्तराधिकारी का प्रश्न निर्माण हुआ । इस समय यशवंतरावजी का नाम चर्चा में था । उन्होंने इंदिरा गांधीजी से कहा कि आप प्रधानमंत्री पद के उम्मीदवार होंगे तो मैं आप को समर्थन दूँगा और आप उम्मीदवार नहीं होंगे तो मैं आपके समर्थन की अपेक्षा करता हूँ । अन्त में इंदिरा गांधीजी प्रधानमंत्री हो गयी और चव्हाणजी गृहमंत्री हो गये । आगे इंदिरा गांधीजी के एकाधिकारशाही में तनाव बढ़ता गया । १९६९ में काँग्रेस पक्ष में फूट पडी । मंत्रिमंडल की फेररचना में यशवंतरावजी को अर्थ खाता दिया गया । उसके बाद उन्होंने विदेशमंत्री पद भी सँभाला ।

□ आपद्‌कालीन स्थिति समाप्त और चुनाव की घोषणा

इंदिरा गांधीजी के दमनचक्र युक्त महत्त्वाकांक्षी नीति से आपद्‌कालीन स्थिति घोषित की गयी । यशवंतरावजी विदेश मंत्री के रूप में जब रूमानिया में गये थे तब वहाँ के राजदूत ने कहा... 'प्रधानमंत्री इंदिरा गांधीजी ने भारत में चुनाव जाहीर किया है ।' यह सुनकर यशवंतरावजी ने कहा– 'यह समाचार सुनकर मन पर का बोझ हलका हुआ है । 'क्या सार्वजनिक चुनाव के लिए हम हमेशा के लिए वंचित हो गये? ऐसा डर अनेक महिने लगा था ।' उन्होंने वेणूताईजी से पत्र लिखकर कहा है– 'सभी राजकैदी छूट जायेंगे और चुनाव का वातावरण प्रस्थापित होगा । हवा खुली रहेगी । आज मैं आनंद में हूँ ।' आपद्‌कालीन स्थिति के बाद काँग्रेस की पराजय हुई । परंतु अल्पावधि में जनता सरकार गिराने में इंदिरा गांधीजी सफल हुई । लेकिन इंदिरा गांधीजी के पुनरागमन में यशवंतरावजी जैसे सात्त्विक, सच्चरित्र नेता को कोई स्थान नहीं था ।

यशवंतरावजी सच्चे अर्थों में महाराष्ट्र के नेता थे । महाराष्ट्र के प्रशासन में और पक्ष में प्रमुख थे । इसलिए महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री होते हुए उनका कार्यकाल सफल हुआ । उनके प्रत्येक निर्णय का स्वागत हुआ । परंतु केंद्रीय राजनीति में उनके प्रत्येक निर्णय का स्वागत नहीं हुआ । अनेक प्रसंगो में उन्हें दूसरों के विचार स्वीकारने पडे । वे अलग अलग खाते के मंत्री थे । फिर भी वे स्वतंत्रता से निर्णय नहीं ले सकते थे । इन सब बातों के कारण उनके विचारों में और उनके कार्योंमें बाधा पैदा हो जाती थीं ।

यशवंतराव जैसे प्रजा के राजा को महाराष्ट्र कभी नहीं भूलेगा । क्या उनके पश्चात उनके सपनों की पूर्ति हुई? आजकल राजनीतिज्ञोंके टूटे हुए मन, देहात में रहनेवाले किसान, उनकी हुई दुरवस्था, बढ़ती जानेवाली हत्याएँ और दूसरी तरफ हजारों करोडों रुपयों के घोटाले, राजनैतिक नेताओं की शान यह सब देखनेपर लगता है कि 'क्या यह यशवंतरावजी का महाराष्ट्र है?' क्या यशवंतरावजी के बाद दिल्ली के दरबार में महाराष्ट्र को सम्मान मिलता है? ऐसे अनेक प्रश्न सामने आते हैं ।

यशवंतराव चव्हाण के पश्चात उनके उत्तराधिकारी श्री. शरद पवारजी दिल्लीकी राजनीति में मशहूर हो गये । उन्होंने अपने कार्य से दिल्लीवालों को अपना परिचय करा दिया है । सात समुद्रों के पार इस नेता की चर्चा होती हैं । उन्होंने महाराष्ट्र और भारत के अनेक क्षेत्रों में काम किया । भविष्य में श्री. शरद

पवारजी के कर्तृत्व को बुद्धिमत्ता को और सभी विषयों की जानकरी रखनेवाले तथा सर्वज्ञ प्रज्ञावंत श्री. शरद पवारजी को राजनीति में अवर्णनीय काम करने का अवसर मिलेगा तो उनका नाम चिरस्मरणीय रहेगा ।

□ काव्य में यशवंतरावजी का गौरव गान

(१) यशवंतराव चव्हाण रक्षा-मंत्री का पद सँभालने दिल्ली जा रहे थे । उस अवसर पर महाराष्ट्र कवि यशवंत ने उनके सम्मान में यह कविता लिखी ।

उसका हिंदी अनुवाद पूना विद्यापीठ के भूतपूर्व प्राध्यापक डॉ. गजानन चव्हाण ने किया है ।

अहा यह अपूर्व संगम, जमुना से मिलने ।
निकल पडी यह सह्यगिरि की कन्या ।।
परचक्र की छाया अशुभ
सँवला रही जमुना जल को ।
साहाय्य करने संकट में यह
निकल पडी सह्यगिरि की कन्या ।
चीनी नहीं, अरे वह तो दुष्ट कालिया ।
लाँघ हिमाद्रि को आया है वह ।
मर्दन करने मूर्ति सांवली धन्या
निकल पडी सह्यगिरि की कन्या ।।
कृष्णा यह केशरी ध्वजा
स्फुरित हो रही शौर्य भुजा
लेकर घृति-मति और दक्खन की संपदा ।
निकल पडी सह्यगिरि की कन्या ।।
सरिता कृष्णा स्व-कछार में देख
ज्वार-बाजरों के खिन्न उंठल भालों को
रोक न पायी अपने को वह
निकल पडी सह्यगिरि की कन्या ।।
कृष्णा यह वीरों की जन्मदात्री
यह दुर्गा, खल दमन कारिणी
विजय प्राप्ति का संकल्प किये वह

निकल पडी सह्यगिरि की कन्या ।।
ज्वलंत कल्लोलिनी कृष्णा यह
कलि काल को धमकाती हुई
कालिंदी रक्षा की कटिबद्धता यह
निकल पडी सह्यगिरि की कन्या ।।

(२) विभूषित कर दो 'संरक्षण' पद तुम बनो 'यशवंत' ।
सह्याद्रि की हर कगार में गूँज उठी जय ध्वनि
विशाल भारत भर में पहुँची क्षणभर में यह ध्वनि ।।१।।
'यशवंत' के यश कीर्ति की वार्ता ज्यो ज्यो आई
महाराष्ट्र की भोली जनता हर्षभरित तब हुई ।।२।।
देकर तुम्हें 'संरक्षण' पद दिया श्रेष्ठ यह मान
'पंडित' जीने महाराष्ट्र का कर दिया सम्मान ।।३।।
जल स्फूर्तिप्रद महाराष्ट्र का प्राशन तुमने किया
शिवराजा की पावन भू पर अखंड विचरण किया ।।४।।
धडक उठा दिल मुगलशाही का दम खम देख मराठों का
फहराकर ही रुके अटकपर जो उत्तंग पताका ।।५।।
भरा हुआ है उन वीरों का साहस तव अंतर में
कण-कण से नि:सृत महाराष्ट्र की देशभक्ति तब मानस में ।।६।।
'जिजाबाई' का 'छत्रपती' का कविवर संतों का
आशीर्वाद दे रहा तुम्हे यह पवन दख्खन का ।।७।।
धन्य जन्म-भू! धन्य मातृ तव! वेणुताई भी धन्य हुई
तब कार्य रूप में फली फूली उन सबकी पुण्याई ।।८।।
हर हर गरजकर 'संरक्षण' पद विभूषित कर दो 'यशवंत'
सम्मान भरा यह महाराष्ट्र का प्रणाम लो गुणवंत ।।९।।

(३) यशवंतरावजी का व्यक्तिमत्व और कर्तृत्व देखकर अनेक कवियों ने हिंदी-मराठी भाषा में यशवंतरावजी के गुणगौरव पर अनेक कविताएँ लिखी है । 'नया जीवन' नाम के एक हिंदी कविने लिखा है–
ये मेनन नहीं, ये चव्हाण हैं ।
ये स्वीकार नहीं है, ये एक आन है ।।

'हटो' और 'हटो', इसका नारा नहीं ।
'बढो' और 'बढो', इसकी यह शान है ॥
लड़ेगा जो इससे, वो पिस जायेगा ।
अडेगा जो इससे, वह पिट जायेगा ॥
कोई जाके कह दो, ये आयुब से ।
अडेगा जो इससे, वह मिट जाएगा ॥

कवि यशवंत, कवि कुसुमाग्रज, कवि ना. धों. महानोर आदि कवियोंने यशवंतरावजी को काव्यांजली समर्पित की है ।

यशवंतराव चव्हाण १९५६ से १९६२ तक महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री थे । उन्होंने सांगली के भाषण में कहा था– 'महाराष्ट्र का भाग्योदय मुझे मेरी आँखों के सामने दिखाई देता है । थोडी दूर की मंजिल है, वहाँ तक आपको जानाही पडेगा । मंजिल तक पहुँचने का पथ कठीन है । कष्ट कम नहीं है, लेकिन यश निश्चित है ।' आगे चलकर उन्होंने गुणवत्ता को प्रधानता देने की बात तय की थी । 'महाराष्ट्र में गुणों की अवहेलना नहीं की जायेगी । किसी भी क्षेत्र में, सत्ता स्थान में, चुनाव में गुणवत्ता को महत्त्व दिया जायेगा, उस महत्त्व को कायम रखा जायेगा । उसके बिना हम महाराष्ट्र का भला नही कर सकेंगे ऐसी मेरी श्रद्धा है ।' इस में उनकी राजनीति की दिशा प्रतिबिंबित होती है । इसलिए सच्च अर्थों में महाराष्ट्र के इस भूमिपुत्र को महाराष्ट्र का 'शिल्पकार' कहना उचित है ।

यशवंतरावजी चव्हाण का जीवनवृत्त

१९१३	मार्च १२, जन्म सातारा जिले में (अब सांगली जिला) देवराष्ट्र नामक गाँव में ।
१९१८-१९	पिताश्री बलवंतरावजी चव्हाण का प्लेग की बीमारी में निधन । सभी शिक्षा के लिए कऱ्हाड मे दाखिल ।
१९२७	कराड की केंद्र शाला में से व्हर्नाक्युलर फायनल परीक्षा उत्तीर्ण । कराड में तिलक हाइस्कूल में प्रवेश ।
१९२९	८ अप्रैल को भगतसिंग ने असेंब्ली में बम फेक दिया । उस घटना से राजनैतिक जीवन की ओर आकर्षित और भगतसिंग के फाँसी के बाद स्वातंत्र्यलड़ाई के लिये जीवन समर्पित करने का निश्चय ।
१९३०-३१	वर्ष के मध्यतक लगभग डेढ वर्ष तक 'ज्ञानप्रकाश' वृत्तपत्र के वार्ताहर के रूप में जनसंपर्क ।
१९३१	पूना के नूतन मराठी विद्यालय की ओर से ली गयी वक्तृत्व स्पर्धा में 'ग्राम सुधारणा' शीर्षक के विषय पर प्रथम क्रमांक का १५०.०० रुपयों का पारितोषिक प्राप्त ।
१९३०-३३	असहकार के (कानून भंग) आंदोलन में सहयोग और १९३२ में १८ महिनों की जेल की सजा ।
१९३३	जेल से छुटकारा ।
१९३४	मॅट्रिक परीक्षा उत्तीर्ण । कोल्हापूर के राजाराम महाविद्यालय में प्रवेश । (प्राचार्य डॉ. बालकृष्ण और प्राध्यापक ना.सी. फडके का सहवास और मार्गदर्शन ।)
१९३८	इतिहास और राजनीति ये विषय लेकर मुंबई विद्यापीठ की बी.ए. उपाधि परीक्षा उत्तीर्ण । पूना के लॉ कॉलेज में प्रवेश ।
१९३८	रॉयवादी विचारों की छाया में ।
१९४०	सातारा जिला काँग्रेस के अध्यक्ष ।
१९४१	अगस्त में एल.एल.बी..परीक्षा उत्तीर्ण । वकालत के व्यवसाय का प्रारंभ ।
१९४२	जून २, कराड में वेणुताई के साथ विवाहबद्ध । (फलटण के मोरे परिवार की कन्या ।)
१९४२-४३	सातारा जिले में भूमिगत आंदोलन में प्रवेश, संचालन, मार्गदर्शन ।

१९४३	सब में बडे भाई ज्ञानोबा का निधन ।
१९४४	राजनैतिक क्रांति इस विषय पर कविता । (जेल में रहना)
१९४५	जेल से छुटकारा ।
१९४६	मुंबई राज्य के कानून मंडल के चुनाव में (द. सातारा) मतदारसंघ से चुनाव जीत गये ।
१९४६	अप्रैल १४, गृह विभाग के संसदीय सचिव के रूप में नियुक्ति ।
१९४७	दिसंबर १५, में मँझले बंधू गणपतराव का निधन ।
१९४८	महाराष्ट्र प्रदेश काँग्रेस के सचिव ।
१९५१	मँझले बंधू गणपतराव की पत्नी का निधन ।
१९५२	कराड मतदारसंघ से विधान सभा पर चुनाव और नागरी रसद मंत्री के रूप में नियुक्ति ।
१९५३	सितंबर २८, श्री. भाऊसाहेब हिरे और नानासाहेब कुंटे के साथ नागपूर समझौते पर पश्चिम महाराष्ट्र की ओर से हस्ताक्षर ।
१९५४	मुंबई राज्य पंचायत संघ की स्थापना ।
१९५५	अक्तूबर १०, राज्य पुनर्रचना समिति का विवरण प्रसिद्ध हुआ । विदर्भ का अलग राज्य और शेष मराठी प्रदेश और गुजराथी प्रदेश इन दोनों का संयुक्त राज्य सुझानेवाली शिफारीस ।
१९५५	दिसंबर १, फलटण में सातारा जिला काँग्रेस कमिटी के सभा में उपोषण, हड़ताल, इस्तीफे ये संयुक्त महाराष्ट्र प्राप्त करने के मार्ग नहीं है, इस आशय का प्रतिपादन करनेवाला प्रस्ताव मंजूर किया गया । 'महाराष्ट्र की अपेक्षा नेहरूजी श्रेष्ठ और मुंबईसह संयुक्त महाराष्ट्र प्राप्त करने के प्रयत्न में आगे श्री. शंकरराव देव का नेतृत्व स्वीकार करने के लिए मैं तैयार नही हूँ' ऐसी बात चव्हाणजी ने कही ।
१९५६	अक्तूबर, संसद ने विदर्भ के साथ विशाल द्विभाषिक मुंबई राज्य की स्थापना करने की बात प्रकट की ।
१९५६	नवंबर, विशाल द्विभाषिक मुंबई राज्य की स्थापना और द्विभाषिक राज्य के मुख्यमंत्री के रूप में चुनाव (उम्र ४३) ।
१९५७	अप्रैल, मुंबई विधान सभा के सार्वत्रिक चुनाव में कराड में बहुत बडा संघर्ष होकर विजय और पुनश्च मुख्यमंत्री पद (उम्र ४४) ।
१९५७	नवंबर ३०, प्रतापगड पर शिवस्मारक का पंडित जवाहरलाल नेहरूजी के करकमलों द्वारा उद्घाटन, द्विभाषिक विरोधी मोर्चा और

समारोह शांति से संपन्न हुआ ।

१९५८ सितंबर, अखिल भारतीय काँग्रेस की वर्किंग कमिटी पर चुनाव ।

१९५८ फरवरी, बेलगाँव-कारवार सीमा प्रदेश महाराष्ट्र में समाविष्ट कर लेने के लिए संयुक्त महाराष्ट्र समिति की ओर से आंदोलन शुरू ।

१९५८ दिसंबर, सीमाप्रश्न के संबंध में न्याय माँगने के लिए भारत की राजधानी में संयुक्त महाराष्ट्र समिति की ओर से सत्याग्रह ।

१९५९ जनवरी, अ.भा. काँग्रेस के नागपूर अधिवेशन में तृतीय पंचवार्षिक योजना के विषय का प्रस्ताव टूट गया ।

१९५९ मार्च, शस्त्रक्रिया और बयालीस दिनों की विश्रांति ।

१९५९ अगस्त, द्विभाषिक राज्य का कारोबार यशस्वी होते हुए भी राज्य की जनता में एकात्मता निर्माण नहीं हुई थी । इसलिए मुख्यमंत्री के नाते से उसे में आगे चला नहीं सकूँगा, ऐसा निर्णय लेकर उन्होंने काँग्रेस श्रेष्ठी को सूचित किया ।

१९५९ दिसंबर, द्विभाषिक मुंबई राज्य के पुनर्रचना के संबंध में विचार करने के लिए काँग्रेस वर्किंग कमिटी ने नौ सदस्यों की समिति नियुक्ति की ।

१९५९ दिसंबर २९, अलिगढ मुस्लिम विद्यापीठ, अलिगढ- ऑनररी डिग्री ऑफ एल.एल.डी.उपाधि ।

१९६० जनवरी, द्विभाषिक राज्य की पुनर्रचना कर मुंबईसह मराठी प्रदेश और गुजराथ प्रदेश ऐसे दो राज्य निर्माण करने का निर्णय नौ सदस्यीय समिति ने लिया ।

१९६० फरवरी १३, (सावरगाव डुकरे) में संपन्न विदर्भ साहित्य संमेलन के उद्घाटक ।

१९६० मार्च, बारामती के संसद कि उपचुनाव में काँग्रेस दल के सदस्य को बडे बहुमत से चुनकर दिया । महाराष्ट्र राज्य की निर्मिति जनतंत्र पद्धति से और शांति से करने के प्रयत्न पर मराठी जनता ने विश्वास व्यक्त किया ।

१९६० अप्रैल, संसद ने द्विभाषिक राज्य की पुनर्रचना कर मुंबईसह महाराष्ट्र और गुजराथ इन दो राज्य निर्माण करने की योजना को मान्यता दी ।

१९६० मे १, महाराष्ट्र राज्य स्थापना । चव्हाणजी मुख्यमंत्री ।

१९६० जून, पुणे में पं. गोविंद वल्लभ पंत की उपस्थिति में म्हैसूर के मुख्यमंत्री श्री. जत्ती ने सीमा का प्रश्न वाद विषय होने की बात

कही ।

१९६० अक्तूबर २१, पूना में महाराष्ट्र काँग्रेस कमिटी की और से जाहीर सत्कार ।

१९६० नवंबर, अखिल भारतीय काँग्रेस चुनाव मंडल पर चुनाव ।

१९६० नवंबर १०, नागपूर करार अमल में लाने के लिए विधान सभा का एक अधिवेशन नागपूर में हर वर्ष होने की शुरुआत ।

१९६० नवंबर १९, महाराष्ट्र राज्य साहित्य संस्कृती मंडल की स्थापना ।

१९६० दिसंबर, काँग्रेस महासमिति में से चुनाव पद्धति से पहले पहल हुए चुनाव में वर्किंग कमिटी पर चुनाव ।

१९६१ दिल्ली में ४३ वे अ. भा. मराठी नाट्य संमेलन के स्वागताध्यक्ष ।

१९६१ मार्च ३०, विदर्भ की जनता की ओर से नागपूर में ४७ वे जन्मदिन के निमित्त सत्कार समारोह ।

१९६२ मे १, पंचायत राज्य योजना का प्रारंभ ।

१९६२ सातारा में हुए अ. भा. मराठी साहित्य संमेलन के उद्घाटक ।

१९६२ फरवरी, महाराष्ट्र विधान सभा के चुनाव । काँग्रेस ने २६५ में से २१४ सदस्य चुनकर लाये । इस प्रकार काँग्रेस ने बडी सफलता प्राप्त की ।

१९६२ नवम्बर २२, भारत के रक्षा मंत्री के रूप में नियुक्ति ।

१९६३ नाशिक जिले में से संसद में विरोध के बिना चुनाव ।

१९६३ अमरिका के रक्षा खाते के सचिव मॅक्नॉमारा के निमंत्रण मिलने पर अमरिका की भेंट ।

१९६३ अगस्त, रशिया की सफर, रशियन पंतप्रधान क्रुश्चेव्ह से चर्चा, मदद का आश्वासन ।

१९६४ अगस्त २८, रशिया का दौरा ।

१९६४ दिल्ली में महाराष्ट्रीय शिक्षा संस्था के अध्यक्ष पद पर नियुक्ति ।

१९६५ जनवरी, नांदेड में संपन्न ४७ वे अ.भा. मराठी नाट्य परिषद-अधिवेशन के उद्घाटक ।

१९६५ अगस्त १८, उम्र के ९५ वे वर्ष में विठामाता का निधन– मुंबई ।

१९६६ जनवरी, ताश्कंद में शास्त्रीजी- आयुबखान चर्चा में उपस्थित । (कोसिजिन के प्रयत्न के अनुसार ।)

१९६६ नवंबर १४, केंद्रीय गृहमंत्री पद पर नियुक्ति ।

१९६७	गृहमंत्री पद के सूत्र लेने पर पहले छः महिनों में नये दस राज्यपालों की नियुक्ति ।
१९६९	फरवरी २३, कानपूर विश्व विद्यालय ने 'डॉक्टर ऑफ लॉ' उपाधि सम्मानपूर्वक दी ।
१९६९	नवंबर, बंगलोर काँग्रेस अधिवेशन के बाद काँग्रेस दल विभाजित हो गया ।
१९७०	फरवरी १०, औरंगाबाद मराठवाडा विद्यापीठ की डॉक्टर ऑफ लॉ यह उपाधि ।
१९७०	जून २६, केंद्रीय अर्थमंत्री के रूप में नियुक्ति ।
१९७१	विकसनशील राष्ट्रीय परिषद में आर्थिक विकास के संबंध में चर्चा ।
१९७२	सातारा संघ में संसद पर चुन लिये । संसद के ४३ सदस्य चुन लिये गये । (महाराष्ट्र में)
१९७४	दिसंबर १, कोल्हापूर शिवाजी विद्यापीठ की 'डॉक्टर ऑफ लॉ' यह उपाधि ।
१९७४	अक्तूबर, केंद्रीय विदेशमंत्री के पद पर नियुक्ति ।
१९७५	गियाना, क्युबा, लेबेनॉन, इजिप्त, पेरू, अमरिका, अफगानिस्तान, इराक, कुवैत, फ्रान्स आदि राष्ट्रों की भेट ।
१९७५	दिसंबर, अखिल भारतीय मराठी साहित्य संमेलन कराड में संपन्न हुआ था । उसके स्वागताध्यक्ष ।
१९७६	जनवरी १७, परभणी मराठवाडा कृषी विद्यापीठ की 'डॉक्टर ऑफ फिलॉसॉफी' यह उपाधि ।
१९७६	तुर्कस्थान, अल्जेरिया की भेंट ।
१९७६	अक्तूबर ८, सदिच्छा राजदूत के रूप में अमरिका मे होस्टन के टेक्सास शहर की ओर से मानपत्र ।
१९७७-७८	संसद में विरोधी दल के नेता के रूप में चुन लिये गये ।
१९७८	इंदिरा गांधीजी के साथ मतभेद हो जाने पर संजीव रेड्डीजी काँग्रेस में प्रवेश ।
१९७८	महाराष्ट्र में शरद पवार के नेतृत्व में पुलोद मंत्री मंडल । (यशवंतरावजी का पुलोद को समर्थन होने की चर्चा ।)
१९७९	जुलाई, चरणसिंग के संयुक्त मंत्रिमंडल में उपपंतप्रधान और गृहमंत्री ।
१९८०	सातारा मतदार संघ में से संसद पर चुन लिये गये । (रेड्डी काँग्रेस के महाराष्ट्र में अकेले विजयी सदस्य ।)

१९८२	इंदिरा काँग्रेस में प्रवेश ।
१९८२	आठवे अर्थ आयोग के अध्यक्ष ।
१९८३	जून १, पत्नी सौ. वेणुताईजी का निधन ।
१९८३	अक्तूबर ७, यशवंतरावजी ने अपना इच्छापत्र (वुईल) लिखा ।
१९८४	जनवरी ९, सौ. वेणुताई चव्हाणजी स्मारक पब्लिक चॅरिटेबल ट्रस्ट की स्थापना और पंजियन ।
१९८४	फरवरी ७, 'कृष्णाकाठ' आत्मचरित्र का पहला भाग प्रकाशित ।
१९८४	मार्च २४, पुणे विद्यापीठ की सम्माननीय (डी. लिट्) उपाधि ।
१९८४	जून १, सौ. वेणुताईजी की प्रथम पुण्यतिथि । उसी दिन यशवंतरावजी ने तर्कतीर्थ लक्ष्मणशास्त्री जोशीजी की उपस्थिति में सौ. वेणुताईजी स्मारक का भूमिपूजन किया ।
१९८४	अक्तूबर ७, उनके 'कृष्णाकाठ' आत्मचरित्र को केसरी-मराठा संस्था की ओर से साहित्य सम्राट न. चिं. केळकर पारितोषिक ।
१९८४	नवंबर २५, शाम के समय ७.४५ को दिल्ली में निधन ।
१९८४	नवंबर २७, दोपहर के समय ३.३० बजे कराड के कृष्णा-कोयना के प्रीतिसंगम पर अंत्यसंस्कार ।
१९८६	मे ३१, क्षेत्र माहुली, जि. सातारा के रामशास्त्री प्रभुणे प्रतिष्ठान की ओर से सामाजिक न्याय पुरस्कार (मरणोत्तर) ।

आधार ग्रंथों की सूची :

(यशवंतरावजी चव्हाण व्यक्तित्व और कर्तृत्व पर उपलब्ध साहित्य संदर्भ ग्रंथ)

अ.न.	ग्रंथका शीर्षक	लेखक
१.	कृष्णाकाठ	यशवंतराव चव्हाण
२.	विदेश दर्शन (रामभाऊ जोशी संग्राहक-संपादक)	रामभाऊ जोशी (संपा.)
३.	हवाएं सह्याद्रि की	यशवंतराव चव्हाण
४.	भूमिका	यशवंतराव चव्हाण
५.	ऋणानुबंध	यशवंतराव चव्हाण
६.	जीवनाचे विश्वरूप	यशवंतराव चव्हाण
७.	युगांतर	यशवंतराव चव्हाण
८.	सह्याद्रीचे वारे	यशवंतराव चव्हाण
९.	शिवनेरीच्या नौबती	यशवंतराव चव्हाण
१०.	वचनपूर्तीचे राजकारण	यशवंतराव चव्हाण
११.	अखिल भारतीय मराठी साहित्य संमेलन, कराड, स्वागताध्यक्ष भाषण	यशवंतराव चव्हाण
१२.	महाराष्ट्र-म्हैसूर सीमाप्रश्न	यशवंतराव चव्हाण
१३.	मी आणि माझे वाचक	ग.त्र्यं. माडखोलकर
१४.	यशवंतराव चव्हाण	ना.धों. महानोर
१५.	सोनेरी पाने	भा.वि. गोगटे
१६.	यशवंत गाजते कीर्ती	दुहिता
१७.	शब्दाचे सामर्थ्य	राम प्रधान
१८.	बंधनाचे ऋण	राम प्रधान
१९.	वादळ माथा	राम प्रधान
२०.	नियतीचा हात	यशवंतराव चव्हाण
२१.	विदेश दर्शन	यशवंतराव चव्हाण
२२.	यशवंतराव चव्हाण : विधिमंडलातील निवडक भाषणे खंड १	
२३.	गृहदेवता	विद्या देसाई
२४.	यशवंतराव चव्हाण	बाबूराव काले
२५.	यशवंतराव चव्हाण	कायंदे पाटील
२६.	माझ्या आवडत्या पाच व्यक्ति	माधवराव बागल
२७.	यशवंतराव चव्हाण अभिनंदन ग्रंथ	संपा. तर्कतीर्थ लक्ष्मणशास्त्री जोशी
२८.	ओव्या विठाईच्या	रामभाऊ जोशी

२९.	यशवंतराव चव्हाण : कर्तृत्व आणि नेतृत्व	शंकर सारडा
३०.	यशवंतराव चव्हाण : राजकारण आणि साहित्य	भास्कर ल. भोळे
३१.	शाळेचे दिवस	मोहन जोशी
३२.	यशवंतराव चव्हाण : विविधांगी व्यक्तिमत्त्व	विठ्ठल पाटील
३३.	यशवंतराव चव्हाण	माधवराव बागल
३४.	माझ्या राजकीय आठवणी	हरिभाऊ लाड
३५.	यशवंतराव चव्हाण : इतिहासाचे एक पान	रामभाऊ जोशी
३६.	नवमहाराष्ट्राचे शिल्पकार	दत्ताराम बारस्कर
३७.	यशोधन	विनायकराव पाटील
३८.	यशवंत चिंतनिका	य.च.प्र.क. बम्बई
३९.	साहेब संध्याकाळी भेटले	अरुण शेवते
४०.	जनमनातील यशवंतराव	नागनाथ हेगे
४१.	यशवंतराव चव्हाण जीवनदर्शन	पंजाबराव जाधव
४२.	यशवंतराव चव्हाण : एक स्मरण	
४३.	यशवंतराव चव्हाण : रसग्रहणात्मक अभ्यास	राम फकीर
४४.	ऋणानुबंध	नरेंद्र मारवाडे
४५.	ही ज्योत अनंताची	रामभाऊ जोशी
४६.	सह्याद्रीवरील सूर्यास्त	रामभाऊ जोशी
४७.	यशवंतराव चव्हाण	अनिल
४८.	सह्याद्रीचे वारे : एक अभ्यास	प्रा. केशव वसेकर
४९.	कृष्णाकाठ : एक आस्वाद	नरेंद्र मारवाडे
५०.	मराठी मातीचे वैभव	उत्तम सूर्यवंशी
५१.	भारताचे सुपुत्र यशवंतराव चव्हाण	डॉ. पंजाबराव रामराव जाधव
५२.	महाराष्ट्राचे शिल्पकार यशवंतराव चव्हाण	विठ्ठल पाटील
५३.	यशवंतरावांच्या प्रस्तावना	विठ्ठल पाटील
५४.	स्मरण साहेबांचे	अरुण शेवते
५५.	यशवंतराव चव्हाण जीवनदर्शन	नीलकंठराव खाडिलकर
५६.	टॉवर्स	नीलकंठराव खाडिलकर
५७.	यशोदर्शन ४६ वा वाढदिवस -निमित्त १९५९	विनायकराव पाटील

५८.	मराठी मनाची नवी क्षितिजे	मा. प. मंगुडकर
५९.	यशवंतराव चव्हाण- प्रेरणा व कार्य	
६०.	महाराष्ट्राचे पहिले मुख्यमंत्री यशवंतराव चव्हाण	
६१.	यशवंताची विठाई	
६२.	यशोदीप	शिवाजीराव चव्हाण
६३.	युगंधर नेते यशवंतराव चव्हाण	बा.ह. कल्याणकर
६४.	यशवंतराव चव्हाण यांचे मौलिक विचार	संकलन : ना. धों मनोहर
६५.	यशवंतराव चव्हाण यांचे निवडक विचारधन	विठ्ठल पाटील
६६.	आठवणीतले यशवंतराव	—
६७.	कृष्णाकाठचे वैभव	
६८.	शिवाजी विद्यापीठ दीक्षान्त भाषण	यशवंतराव चव्हाण
६९.	पुणे विद्यापीठ दीक्षान्त भाषण	यशवंतराव चव्हाण
७०.	नागपूर विश्वविद्यालय	यशवंतराव चव्हाण
७१.	प्रत्यक्ष आंदोलन और संसदीय लोकतंत्र	यशवंतराव चव्हाण
७२.	यशवंत विचारअमृत	सी.डी. पवार
७३.	नियतीचा हात	यशवंतराव चव्हाण
७४.	यशवंतराव चव्हाण- एक दर्शन	कानेटकर
७५.	विरंगुळा	रामभाऊ जोशी
७६.	नापास मुलांची गोष्ट	अरुण शेवते
७७.	यशवंतराव चव्हाण- झुंजार नेतृत्वाचा शोध व बोध	
७८.	यशवंतराव चव्हाण- विचार आणि वारसा	विठ्ठल पाटील
७९.	यशवंतराव चव्हाण	अनंतराव पाटील
८०.	यशवंतराव चव्हाण- समग्र साहित्यसूची	विठ्ठल पाटील
८१.	कृष्णा मिळाली कोयनेला खंड १	भा.कृ.उडांबलकर
८२.	कृष्णा मिळाली कोयनेला खंड २	भा.कृ.उडांबलकर
८३.	कृष्णा मिळाली कोयनेला खंड ३	भा.कृ.उडांबलकर
८४.	यशवंतराव चव्हाण- सचित्र जीवनदर्शन	प्रा. नारायण शिंदे
८५.	वेणू	प्रा. नारायण शिंदे

८६.	महाराष्ट्राचे मन	पु. रा. बेडरे
८७.	तीळ आणि तांदूळ	ग.दि. माडगूळकर
८८.	यशवंतराव चव्हाण गुणगौरव अंक, महाराष्ट्र राज्य १ मे १९७५	
८९.	जडण-घडण	टिळक हायस्कूल, कराड
९०.	यशवंत नियतकालिक	सायन्स कॉलेज, कराड
९१.	आझाद हिंद यशवंतराव चव्हाण विशेषांक स्मरणिका	स्मरणिका
९२.	यशवंतराव चव्हाण- झुंजार नेतृत्वाची एक झेप	संपा. के. जी. कदम
९३.	विचारसंगम	
९४.	लोकराज्य	
९५.	महाराष्ट्राची मानचिन्हे	एकनाथ साखलकर/ सुभाष भेण्डे
९६.	सहकार सुगंध	एस.आर. पाटील
९७.	महाराष्ट्र संचार स्मृती विशेषांक १९९६	विठ्ठलराव जाधव
९८.	चित्ती असो द्यावे समाधान	द्वा. भ. कर्णिक
९९.	साहित्यसंग	म. वि. गोखले
१००.	सत्यातून सहकार्याकडे	माधवराव बागल
१०१.	पाक्षिक ललित खास विशेषांक	द्वा. भ. कर्णिक
१०२.	यशवंतराव चव्हाण - आदर्शाच्या प्रकाशात विकसित झालेले व्यक्तिमत्त्व	
१०३.	युगंधर नेते यशवंतराव चव्हाण	बा. ह. कल्याणकर
१०४.	यशवंतराव ते विलासराव	मधुकर भावे
१०५.	यशवंतराव ते विलासराव	विश्वास मेहंदळे
१०६.	मी पाहिलेले यशवंतराव	सरोजिनी बाबर
१०७.	यशवंतराव चव्हाण राष्ट्रीय व्यक्तिमत्त्व	भा.कृ. केळकर
१०८.	माझ्या राजकीय आठवणी	हरी पांडुरंग तथा हरिभाऊ लाड
१०९.	राजधानीतील १२ वर्षे	द्वा.भ. कर्णिक
११०.	लोकमानसातील यशवंतराव	रा.गो.प्रभुणे
१११.	यशवंतराव चव्हाण (सचित्र जीवनदर्शन)	प्रा. नारायण शिंदे
११२.	महाराष्ट्राचे मुख्यमंत्री	सोपान गाडे
११३.	पहिली फेरी	राम प्रधान

११४.	यशवंतराव : विचार आणि वारसा	व.के. पाटील व वि.वि.पाटील
११५.	सहकार पंढरीचे वारकरी	डॉ. वा. चु. श्रीश्रीमाळी
११६.	शैलीकार यशवंतराव	प्रा. डॉ. शिवाजीराव देशमुख
११७.	यशवंतराव चव्हाण यांचे समीक्षालेखन व भाषणे	प्रा. डॉ. शिवाजीराव देशमुख
११८.	महाराष्ट्रातील सामाजिक विचारमंथन	चंद्रकुमार नलगे
११९.	आधुनिक महाराष्ट्राचे शिल्पकार यशवंतराव चव्हाण	प्रा. अशोक नाईकवाडे
१२०.	बुरखा हरण	रा. तु. पाटील
१२१.	यशवंत स्मृतिसुगंध	रामभाऊ पाटील
१२२.	सह्याद्री	आनंद पाटील
123.	India's Foregin Policy	Yashwantrao Chavan
124.	Winds of Change	Yashwantrao Chavan
125.	The Illustrated Weekly of India, 28th June 1981	
126.	Chavan & the Political Integration of Maharashtra	Jayant Lele
127.	Man of Crisis	B.B.Kale
128.	Y.B. Chavan Selected Speeches in Parliament-I	
129.	Y.B. Chavan Selected Speeches in Parliament-II	
130.	Y.B. Chavan Selected Speeches in Parliament-III	
131.	Y.B. Chavan Selected Speeches in Parliament-IV	
132.	Chavan & The Troubled Decade	
133.	Yashwantrao Chavan Selected Speeches 1946-62-II	
134.	Yashwantrao Chavan A Political Biography	D.B. Karnik
135.	Yashwantrao Chavan	Chandulal M.
136.	1965 War-Inside Diary	R.D. Pradhan
137.	Debacle to Revival	R.D. Pradhan
138.	Chavan and the Troubled Decade	T.V. Kunhi Krishnan

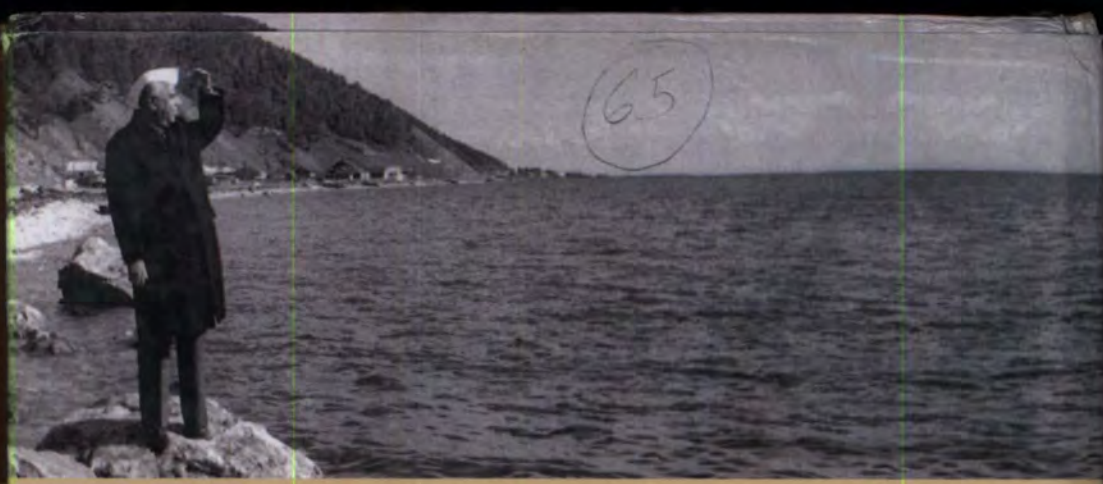

आधुनिक महाराष्ट्र के शिल्पकार

यशवंतराव चव्हाण

यशवंतरावजी का जीवनविषयक दृष्टिकोन आशावादी और समर्पित वृत्ति का था। वे कहते हैं कि 'चरम सीमा तक समर्पित जीवन होगा तो वह जीर्ण नहीं होता- चंद्र कभी पुराना नही होता, सूर्य कभी बुढा नहीं होता। सागर कभी संकुचित नहीं होता। इस में हर एक के जीवन में चरम सीमा का समर्पण है। पर अनंत युग बीत गये तो भी विनाश उनके पास पहुँचा नहीं। काल ने उन्हें घेरा है, पर उनका परिवर्तन कभी नहीं हुआ। स्थित्यंतर नहीं हुआ। वह नि:श्वसन सतत चल रहा है।' वे अखंड अपने जीवन में आनंद के क्षण खोजते रहते हैं। उन क्षणों के बारे में वे कहते हैं– 'जीवन में आनंद के क्षण सूर्य के कोमल किरणों के समान होते हैं। जंगल से गुजरते हुए गरमी के समय एकाध झरना दिख पडा कि उसका पानी पिते वक्त कितना आनंद महसूस होता है। नाले के किनारे जामून का पेड है। वह पेड जामुनों से ठसाठस भरा हुआ है। उस पेड के चार जामून मूँह मे डाल दिये तो कितने मीठे लगते हैं। जीवन में आनंद के क्षण ऐसे ही होते हैं।'

यशवंतराव चव्हाण प्रतिष्ठान मुंबई